पुण्य श्रीजी स्वर्ण श्रीजी स्मारक ग्रन्थमाला पुष्प नं० ५३

वृहत् पूजा-संग्रह

उपदेशिका

विश्व-प्रेम प्रचारिका, जैन कोकिला, प्रवर्तिनी

श्री विचक्षणश्रीजी महाराज साहब

प्रकाशक

ज्ञानचन्द लूनावत

१५८, लक्ष्मीनारायण मुखर्जी रोड,

कलकत्ता-६

विक्रम सम्वत् २०३७

पुस्तक प्राप्ति-स्थान :

(१) पुण्य स्वर्ण ज्ञानपीठ

विचक्षण भवन

कुन्दीगर भैरू का रास्ता

जौहरी बाजार

जयपुर-३ (राजस्थान)

मूल्य ६ रुपये

मुद्रक :

रत्ना प्रिन्टर्स

२, सी. श्याम बदस लेन,

कलकत्ता-६

अनुक्रमणिका

(१) स्नात्रपूजा विधि १

(२) स्नात्र पूजा —श्रीमद्देवचन्द्रजी ८

(३) अष्टप्रकारी पूजा —श्रीमद्देवचन्द्रजी २६

(४) नवपद बडी पूजा —श्रीमद् यशोविजयजी देवचन्द्रजी ज्ञानविमलसूरिजी लालचन्द्रजी ३६

(५) सतरहभेदी पूजा —उपाध्याय श्री साधुकीर्तिजीगणि ७०

(६) पंचपरमेष्ठी पूजा —उपाध्याय श्री सुगुणचन्द्रजी ६०

(७) वीस स्थानक पूजा —श्री जिनहर्षसूरिजी १०६

(८) पंचकल्याणक पूजा —उपाध्याय श्री बालचन्द्रजी १४४

(९) पंच ज्ञान पूजा —उपाध्याय श्री सुगुणचन्द्रजी १६७

(१०) ऋषि मण्डल पूजा —उपाध्याय श्री शिवचन्द्रजी १७७

(११) बारह व्रत पूजा —पंडित श्री कपूरचन्दजी २०३

(१२) श्री आदीश्वर पंच कल्याणक पूजा —श्री विजयवल्लभसूरिजी २३२

(१३) श्री शांतिनाथ पंच कल्याणक पूजा —श्री विजयवल्लभसूरिजी २५५

(१४) गिरनारतीर्थ पूजा —श्री जिनकृपाचन्द्रसूरिजी ३०५

(१५) श्री पार्श्वनाथ पंच कल्याणक पूजा —उपाध्याय श्री कवीन्द्रसागरजी ३१७

(१६) श्री महावीर स्वामी पूजा

—उपाध्याय श्री कवीन्द्रसागरजी ३३७

(१७) रत्नत्रय पूजा —उपाध्याय श्री कवीन्द्रसागरजी ३५४

(१८) चौसठ प्रकारी पूजा विधि

—उपाध्याय श्री कवीन्द्रसागरजी ३७१

(१९) ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा

—उपाध्याय श्री कवीन्द्रसागरजी ३७३

(२०) दर्शनावरणीय कर्म निवारण पूजा ,, ३८९

(२१) वेदनीय कर्म निवारण पूजा ,, ४०२

(२२) मोहनीय कर्म निवारण पूजा ,, ४१५

(२३) आयुष्य कर्म निवारण पूजा ,, ४२९

(२४) नाम कर्म निवारण पूजा ,, ४४३

(२५) गोत्र कर्म निवारण पूजा ,, ४५७

(२६) अन्तराय कर्म निवारण पूजा ,, ४६८

प्रस्तावना

जैनागमों में निक्षेपा सत्य माना गया है और इसी कारण स्थापना निक्षेपा की सत्यता स्वीकार करते हुए जिनप्रतिमा के समक्ष धूप लेने के 'धूव दाउणं जिनवराणं' शास्त्र पाठ द्वारा' जिन प्रतिमा जिन सारखी होना स्वयं सिद्ध है। जैनागमों मे स्थान-स्थान पर जिन प्रतिमा को अनादिकाल से शाश्वत माना गया है और उसकी पूजन पद्धति भी देवों में, मनुष्यों में प्रचलित होने के प्रमाण शास्त्र सम्मत हैं। शाश्वत-अशाश्वत तीर्थों का वन्दन पूजन शास्त्र विहित है। चतुर्विधसंघ को जिन प्रतिमा के वंदन-पूजन की स्पष्ट आज्ञा ही नहीं अपितु साधु लोगों के लिए जिनवदनार्थ मंदिरों में जाना अनिवार्य है और न जाने पर महानिशीथसूत्र मे दण्डनीय माना है। हाँ साधु के लिए सावद्य योग का त्याग होने से वह केवल भाव पूजा का अधिकारी है और श्रावक सागारधर्मी होने से द्रव्य और भाव दोनों प्रकार का पूजन करने की उसे उन्मुक्त आज्ञा है। वर्त्तमान में महाविदेह में केवली अवस्था में विचरने वाले भगवान श्री देवचन्द्रजी महाराज ने जिन पूजा और श्रावकों के भक्तिभाव की स्पष्ट अनुमोदना की है।

मूल जैनागमों में अष्टप्रकारी-सतरह प्रकारी आदि पूजाओं का विधान है और इसी पुष्टावलम्बन से रावण आदि ने तीर्थं-

कर नाम कर्म उपार्जन किया है। जिन प्रतिमा के अवलम्बन को अस्वीकार करने वाला सम्यक्त्वी नहीं हो सकता और उसे तीन कालमें भी आत्म दर्शनकी सम्पूर्णता-मोक्ष प्राप्ति नहीं हो सकती। जैन शास्त्रों में सम्यक् ज्ञान क्रिया से मोक्ष बतलाया है। शुष्क ज्ञानी और क्रिया जड़ दोनों को ही मोक्ष मार्ग से दूर माना गया है। जिनेश्वरदेव से भक्ति के तार जोड़ना अवश्य कर्तव्य है, विभक्त रहने से मोक्ष मार्ग असम्भव है। अतः भव्यात्माओं को जिन भक्ति मार्ग के सुगम पथारूढ होने के लिए आगमों में पूजा विधि बतलाई है। आगम काल में प्राकृत भाषा का प्रचलन था अतः संस्कृत प्राकृत में पूजा पाठ प्रचलित थे। अपभ्रंश भाषा युग में उस भाषा में निर्माण हुआ है इधर चार-पाँच शताब्दी से हिन्दी गुजराती राजस्थानी आदि लोक भाषा में प्रचुरता से एतद्विषयक पूजा साहित्य का निर्माण हुआ। इन पूजाओं में तत्वज्ञान इतिहास आचार संहिता और जिनेन्द्र भक्ति सम्पूर्ण रूपेण आप्लावित है। शुष्क तत्वज्ञान आकलन करना दुरूह है, सूखे चावल अग्नि-ताप से दग्ध हो जाएँगे पर भक्तिजल मिश्रित करने पर सिद्ध होंगे तभी तो श्रीमद्देवचन्द्रजी ने "कलश पानी मिसे भक्तिजल सींचता" वाक्यों द्वारा भक्ति भाव प्रवण पूजोपचार निर्दिष्ट किया है।

विगत चार सौ वर्षों से विद्वानों ने लोकभाषा में विविध संगीतलय युक्त राग-रागनियों में व देशी ढालों में पूजा साहित्य का निर्माण करना प्रारंभ किया। उ० साधुकीर्तिजी की सतरह

भेदी पूजा और उ० यशोविजयजी देवचन्द्रजी और ज्ञानविमल सूरिजी कृत संयुक्त नवपद पूजा जैन समाज में विशेष प्रसिद्धि को प्राप्त हुई। गत दो शताब्दियों में शिवचन्द्रोपाध्याय, चारित्र-नंदी, अमरसिन्धुर, ज्ञानसार, सुमतिमंडन, कपूरचन्द्र, श्रीजिनहर्ष सूरि, जिनकृपाचन्द्रसूरि, हरिसागरसूरि, कवीन्द्रसागरसूरि आदि अनेक विद्वान कवियों ने खरतरगच्छ में लगभग ६० पूजाएँ निर्माण कर पूजा साहित्य का भण्डार भरने के साथ-साथ भक्त जनता का बड़ा उपकार किया है। इन्हें अर्थ विचारणा पूर्वक गाने वाला व्यक्ति भक्ति रसपूर्ण संगीतज्ञ बनने के साथ-साथ जैन तत्वज्ञान, इतिहास और विधि-विधान में भी प्रबुद्ध निष्णात हो सकता है।

प्रस्तुत बृहत् पूजा संग्रह विश्वप्रेम प्रचारिका, जैन कोकिला, प्रवर्तिनी श्री विचक्षणश्रीजी महाराज के उपदेश से प्रकाशित हो रही है। इसमें प्रचलित अनेक पूजाओं के साथ-साथ परम पूज्य श्रीमद्कवीन्द्रसागरसूरिजी कृत ११ पूजाएँ जो आचार्य पद से पूर्व निर्मित हैं, संगृहीत है एवं श्रीमद्विजयवल्लभसूरिजी महाराज कृत कतिपय प्रचलित पूजाएँ देकर ग्रन्थ के महत्व में अभिवृद्धि की गई है। आशा है इन पूजाओं के उपयोग से जैन संघ अधिकाधिक लाभान्वित होगा।

—भँवरलाल नाहटा

प्रवर्तिनीरत्न श्री विचक्षणश्रीजी महाराज

रत्नगर्भा वसुन्धरा वाली उक्ति को चरितार्थ करते हुए आज से लगभग ६८ वर्ष पूर्व अमरावती (महाराष्ट्र) में आषाढ वदी एकम सं० १९६६ को, मूथा कुल में, पिता श्री मिश्रीमलजी व माता रूपादेवी की कुक्षी से दाखीबाई का जन्म हुआ। पिता व माता के नाम के अनुरूप गुण को धारण करती हुई अर्थात् मिश्री सी मीठी तथा रूपाबाई नाम सदृश रूपवती बाला को देख माता ने इनका नाम दाखीबाई रखा। इन्हें देख कोई सहज ही इनके उच्च जीवन की कल्पना कर सकता था, पर यह दीपक विश्व का आलोक बन जायेगा, ऐसा तो किसी की कल्पना में भी न आया होगा।

विराटशक्ति सम्पन्न यह देवी भारत माँ को गौरवान्वित बना हजारों की श्रद्धा सम्पादित करती हुई इतिहास की अविच्छिन्न शृंखला में कड़ी बन स्वयं भी जुड़ जायेगी, जिसको सदियों तक सुरक्षित रखने में इतिहास भी सावधान रहेगा, ऐसा कितने विचारा होगा।

दाखी बाई ने नव वर्ष की अल्प आयु में माता रूपा देवी के साथ खरतर गच्छ में पू० सुखसागर जी म० सा० के समुदाय में पू० प्र० श्री पुण्यश्रीजी म० सा० की शिष्या बनी एवं श्री जतन श्रीजी म० सा० से पीपाड राजस्थान मूल वतन में अनेक प्रकार

के विरोधी वातावरण को शान्त बना दीक्षा ग्रहण की। इस समय इनकी दीक्षा का सर्वाधिक श्रेय मिला इनकी जननी रूपादेवी को। प्राणप्रिय पोतीकी दीक्षासे दादाजीके मोह को ठेस लगी। जिसकी अभिव्यक्ति दीक्षा जुलूस में प्रत्यक्ष प्रकट हो गयी, मोह मूढ दादाजी ने पोती को घोड़े पर से उतार लिया, जन समूह में हलचल मच गयी पर आप न रोई, न चिल्लाई, न अन्य कोई प्रतिक्रिया की, अपितु शान्त भाव से उतर कर दादाजी के साथ हो ली और फिर अपने धैर्य से उन्हें समझाया जो उनकी समझदारी गंभीरता व विचक्षण बुद्धि का परिचायक है।

दीक्षा से पूर्व अन्य घटनाओं से इनके अदम्य उत्साह शान्त गंभीरता व धैर्य का दर्शन हमे स्थान-स्थान पर होता है। दीक्षा से पूर्व आपको दादाजी ने जिन दर्शन वंचित रखा तो भी आपने अपनी बाल सुलभ चेष्टा का परिचय न देते हुए शान्ति से अन्न पानी के बिना समय व्यतीत किया और अपना दृढ संकल्प बताते हुए कहा कि जिन दर्शन करने पर ही मैं कुछ लूँगी।

दीक्षा के संदर्भ में—जब उन्हें न्यायाधीश के पास ले आया गया तो उन्होंने अपनी पूर्ण शक्ति का प्रयोग करते हुए उन्हें धमकाया, बन्दूक दिखाते हुए मृत्यु-भय बताया। आपमें निहित दैविक शक्ति बोल उठी एक दिन सभी को मरना है, मरने से क्या डर? प्रभावित हो न्यायाधीश ने कहा ये बाला किसी की बहकायी हुई दीक्षा नहीं ले रही यह तो वास्तव में इस जीवन के अनुरूप ही लग रही है।

दीक्षा के पश्चात् आपका नाम साध्वी विचक्षणश्रीजी रखा गया। अपने गुरुवर्या श्री के अनुशासन में अपनी सरलता, नम्रता विनय-शीलता, वाणीमाधुर्य आदि विशिष्ट गुणों से सभी को प्रभावित किया। इनके गुण सभी को आकर्षित करने लगे। कुशाग्रबुद्धि परिश्रम का योग मणि-कांचन संयोग बना जिससे वर्षों में ग्रहण करने योग्य-योग्यता कुछ समय में ही विकसित हो गई। गुरुणीजी के स्वर्गवास पश्चात् उन्नीस वर्ष की अल्पायु में ही स्वतन्त्र विचरण करने का योग बना। उस समय अपने उत्तर-दायित्व का बोझ बहुत ही सफलतापूर्वक वहन किया जिसमें न अविवेक एवं न अहं।

महाराजश्री के विकसित व्यक्तित्व का प्रभाव सम्पर्क में आने वालों को आकर्षित करने लगा, प्रवचन शैली, वाणी व्यवहार सभी में साधुता की अभिव्यक्ति होने लगी तब से लेकर आपने जिन शासन की सेवा में जिन वाणी के प्रचार द्वारा अनेक प्रान्तों में विहार कर जिन मंदिरों का निर्माण, जीर्णोद्धार, प्रतिष्ठा, मंडलों की स्थापना, संस्थाओं की स्थापना की, अन्य कई कुरीतियों को आपने उखाड़ा। आपकी वाणी में इतनी शक्ति थी कि बिखरी हुई शक्तियाँ जुड़ गई बिखरे घर संगठित हो गये। आपको कई पदवियाँ समाज ने प्रदान की जैसे व्याख्यान-भारती, विश्व-प्रेम प्रचारिका, समन्वय-साधिका आदि के साथ आप प्रवर्तिनी पद से अलंकृत थी।

आपके इस अनूठे व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अनेक कन्याओं

ने अपना जीवन आपको समर्पित किया। शिष्या संख्या ४० तक पहुँच गयी। जो अपनी प्रतिभा, व्यक्तित्व आदि से जन मानस को रोशनी दे रही हैं।

आप श्री का विहार क्षेत्र काफी विस्तृत रहा। आधे भारतवर्ष से भी अधिक भाग का आपने भ्रमण किया। राजस्थान, गुजरात, सौराष्ट्र, पालीताना, महाराष्ट्र, मद्रास, हैदराबाद आंध्रप्रदेश, दक्षिण प्रान्त, रायपुर, मध्य प्रदेश, दिल्ली, जयपुर और भी अन्य कई स्थानों में आपने अपने कोकिल कंठ से मुग्ध घने लोगोंको धर्मशिक्षा देकर सन्मार्ग पर चलना सिखाया, कितने ही पथ भूलों को मार्ग बताया। आत्मोन्मुखी होते हुए आपने पर कल्याण किया। दीपक की भांति जलकर प्रकाश देना ही जाना।

४५ वर्ष की लम्बी संयम साधना के साथ आपने जो अमृत घुट्टी लोगों को दी वह जिह्वा या लेखनी का नहीं, अपितु अनुभव का विषय है। हम सबने देखा कँसर जैसी महाव्याधि में भी कैसी समाधि थी। कँसर जिसका नाम श्रवण करने मात्र से व्यक्ति घबरा जाता है, आपने उसका कोई इलाज नहीं करवाया। हर जिह्वा आपकी समता व सहनशीलता की गुणगान कर रही थी। सब की जरूरत समाज को रहती है, उनका हर वाक्य पथ बतलाने वाला होता है पर आपको इस नश्वर देह से कोई मोह नहीं था अत इलाज के लिए सदैव मना किया। बढ़ती हुई गांठ की वेदना आपके मन की शान्ति को भंग करने में समर्थ न हुई।

वही प्रसन्न मुद्रा, व्याख्यान का चलता क्रम, क्षणभर भी आराम का नाम नहीं, दर्शकगण वास्तव में देखकर आश्चर्य में डूब जाते थे जब वे देखते कि समता मूर्ति के मुखारविन्द से अमृत स्रोत झर रहा है।

लगभग ढाई-तीन महीने हुए जब इस उग्र दाह ने अपना रूप उगला, गाँठ में से पानी, धीरे-धीरे वह खून के रूप में प्रवाहित होने लगा, दिन में ३-४ बार खून आना, पर आपकी वही सहज मुद्रा। सभी घबड़ा जाते, हलचल मच जाती पर वह शांत-मूर्ति वास्तव में मूर्ति के समान ही बैठी रहती और हलचल मचाने वालों को कहती हलचल किस बात की' जो होने का कार्य है वह हो रहा है। परेशानी किसलिए ? खून में लथपथ होने पर' पाव-आधाकिलो खून के बहने पर भी चेहरे पर कोई शिकन नहीं' उस समय भी कोई पूछता तो हँसते चेहरे से जबाब मिलता सदा आनन्द। देह का कार्य देह में हो रहा है, आत्मा में तो आनन्द है और यही चाहिए। कोई इस विषय की चर्चा करना चाहता तो एक-दो शब्द में उसका जवाब दे पुनः उपदेश में लग जाते। धन्य है ऐसे संत, धन्य थी उनकी साधना।

वास्तव में वे इस व्याधि में जीत गई थी जैसा एक बार के प्रसंगवश बोली थी, "मैं जीत गई" वास्तव में कर्म शत्रु से संग्राम में विजय प्राप्त कर ली। धन्य है, ऐसी अद्भुत शक्ति सम्पन्न साधना-पथ की महान् साधिका को कोटि-कोटि नमन्।

शासन प्रभाविका जैन कोकिला प्रवर्तिनी
श्री विचक्षणश्रीजी महाराज

आर्या श्री पुष्पाश्रीजी महाराज

सं० २०३७ वैसाख शुक्ला ४ ता० १८ अप्रेल १६८० को आपका समाधिपूर्वक स्वर्ग गमन जयपुर मे हो गया। जिसकी सूचना टेलीफोन एवं तार द्वारा प्राप्त होते ही पूरे जैन समाज में शोक छा गया। हजारों की संख्या मे दूसरे स्थानों से भक्तजन आपके अन्तिम सस्कार के लिये जयपुर पहुंचे। अन्तिम संस्कार के समय आँखों मे आँसू लिए १५-२० हजार व्यक्ति इकट्ठे हुए। पूरे भारत के विभिन्न शहरों व गांवों मे श्रद्धांजलि सभाएं हुईं। अनेकों स्थानों में आपश्री की पुण्य स्मृति में अट्ठाई महोत्सव व पूजाएं हुईं।

प्रवर्तिनीजी श्री विचक्षणश्रीजी जैन समाज के लिये ज्योति थे, प्रकाश थे, प्रेरणा थे। उनकी जैन शासन सेवा को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

आर्याश्री पुष्पाश्रीजी महाराज

लोक में कई आत्माएँ लाखों योनियों में भ्रमण करते हुए क्रमिक विकास करके इस अमूल्य मानव देह को प्राप्त करती हैं। लेकिन मानव देह पाकर आत्मा पिछले कष्टों को भूलकर भोग विलास के द्वारा जो भी कर्मजाल उसने पूर्वजन्मों में भोगा है उसे ही पुनः शुरु कर देती हैं। कुछ ही ऐसी पावन पुन्यात्माएँ होती है जो सजग सावधान होकर वैराग्य भावना से इस मानव देह रूपी पुद्गल की सहायता से अपने शेष कर्मों को नष्ट कर मुक्ति पद की ओर अग्रसर होती है।

ऐसी ही एक सचेतन आत्मा ने वकील मोहनलाल हीमचन्द के कनिष्ठ पुत्र रतिलाल भाई की धर्मपत्नी चम्पा बहन की कुक्षि में मानव देह धारण कर वैसाख सुदी सप्तमी वि० स० १९८४ को बड़ोदा (गुजरात) के निकटवर्ती पादरा ग्राम में पदार्पन किया। नाम शान्ता बहन रखा गया। जो अपने नाम के अनुकूल बचपन से ही पूर्वार्जित पुण्यों के फल से शान्त प्रकृति की थी। बचपन से ही धार्मिक वातावरण में पलती हुई आपको इस असार संसार में रुचि नहीं थी। आपकी बड़ी बहन जिनका नाम विद्या बहन था, सं० १९९६ में खरतरगच्छाधिपति सुखसागरजी म० सा० के समुदाय में पू० प्रवर्तिनी विचक्षणश्रीजी म० सा० के पास दीक्षित हुई। आप उसी समय से पूर्ण वैराग्य भावना से रहने

लगी व एक वर्ष तक साधना पथ का अनुभव करके सं० १६६६ में दिल्ली नगर में माघ वदी सप्तमी को प० पू० जतनश्रीजी म० सा० के कर-कमलों से दीक्षा ली। दीक्षित करके परम पूज्या अनुपम श्रीजी म० सा० की शिष्या पुष्पा श्री जी नाम रखा गया।

दीक्षा ग्रहण करने के बाद आपका पहला चातुर्मास झुंझनु (शेखावटी) नगर मे प० पू० विचक्षणश्रीजी म० सा० के साथ हुआ। वहाँ पहले चातुर्मास में ही आप काफी अस्वस्थ रहे। आपको संग्रहणी नामक व्याधि से कष्ट उठाना पड़ा। झुंझनु में ही द्वितीय चातुर्मास में आपने मासक्षमण तप किया। फिर वहाँ से पू० विचक्षणश्रीजी म० सा० के उपचार हेतु आप उनके साथ फतहपुर नगर पधारी। पू० विचक्षण श्री जी म० सा० के स्वास्थ्य लाभ के पश्चात् आप बीकानेर नगर में सेठ भैरूदानजी कोठारी द्वारा तीर्थंकर महावीरके मन्दिर के प्रतिष्ठा महोत्सव व छोटी बाई (विजयेन्द्रश्रीजी) के दीक्षा अवसर पर पू० विचक्षणश्रीजी के साथ बीकानेर नगर पधारे। यहाँ आपने पू० दयाश्रीजी म० सा० की वैयावच्च की। बीकानेर नगर में आपको पुनः संग्रहणी रोग हो गया। स्वास्थ्य लाभ के पश्चात आप पू० जतनश्रीजी म० सा० की सेवा हेतु श्री विनीताश्रीजी के साथ दिल्ली पधारे। सं० २००४ में दिल्ली चातुर्मास मे आपने पुनः मासक्षमण तप किया। यहाँ से पू० दयाश्रीजी म० सा० की सेवा हेतु आप फिर बीकानेर पधारे। रास्ते में ब्यावर नगर में ही श्री हरि

सागरसूरीश्वरजी म० सा० के कर कमलों से आपकी बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई।

आपने बीकानेर नगर में प्रवेश किया अब से लेकर स्वर्गवास तक (२७) सत्ताईस वर्षों में, पू० दयाश्रीजी म० सा०, कंचन श्री जी म० सा० शान्तिश्रीजी म० सा०, पवित्रश्रीजी म० सा० व महिमाश्रीजी म० सा० आदि अनेक साध्वियों की निर्मल मन से आपने निरन्तर सेवा की। यहाँ २७ वर्ष रहने पर भी किसी के अप्रिय नहीं बने थे कारण कि आपका व्यवहार बड़ा मधुर व स्वभाव मिलनसार था। आपको प्रतिवर्ष कभी पानीझरा, कभी मोतीझरा हो जाता था। पिछले काफी समय से बुखार व रक्तचाप की बीमारी से भी आप पीड़ित रहे। फिर भी आपने कभी अपनी सेवा के लिए किसी को कष्ट नहीं दिया।

स्वर्गवास के दिन २६-४-७५ को सुबह आप का रक्तचाप २१० था। अतः विनीताश्रीजी, जो अभी बीकानेर नगर में हुई तीन दीक्षाओं के अवसर पर साध्वी श्री कमलाश्रीजी म०, सुरंजनाश्रीजी म० को साथ लेकर पधारी थी (यह गृहस्थ जीवन में आपकी बहन थीं) इन्होंने आपको चिकित्सा कराने की सलाह दी लेकिन आपश्री ने साफ मना कर दिया कि मैं अंग्रेजी दवाई नहीं लेती। निरन्तर व्याधि होने पर भी कभी उफ तक नहीं की। उसी दिन रात्रि को जब आपके पास कमलाश्री जी म० सा० सोयी हुई थीं उन्होंने ६॥ बजे तेज-तेज श्वांस सुनकर आपको पुकारा, लेकिन वापस जवाब न मिलने पर जब उठ कर

देखा तो आप वमन किए हुए लेटी थी। फिर नाक व मुँह से खून निकलने लगा इस स्थिति से घबराकर श्रावकों को सूचना दी गई। उन्होंने रात में १२ बजे डा० को बुलवाया। लेकिन डा० साहब असफल रहे क्योंकि आपको हेम्रेज हो गया था। आशा निराशा में परिणत होने पर पू० सुरेन्द्रश्रीजी म० सा० व पू० विनीताश्रीजी म० सा० ने संथारा भवचरिम प्रत्याख्यान करा दिए और नवकार मंत्र सुनाते रहे। नवकार मंत्र सुनते-सुनते आपने ३- ५ मिनट पर समाधि पूर्वक नश्वर देह त्याग दी पण्डित मरन हुआ। रेल दादावाड़ी के पास वैसाख कृष्ण द्वितीया ता० २७-४-७५ रविवार को इस नश्वर देह को चन्दन की चिता में रखा गया व दाह संस्कार किया।

असमय ही यह त्याग, तप व साधना की भव्य आत्मा इस लोक से विदा लेकर अदृश्य लोक में प्रविष्ट हो गई। लेकिन उनकी सुरभि वर्षों तक जैन शासन को सुरभित करती रहेगी।

—पद्मयशाश्री

—पूर्णयशाश्री

सागरसूरीश्वरजी म० सा० के कर कमलों से आपकी बड़ी दीक्षा सम्पन्न हुई।

आपने बीकानेर नगर में प्रवेश किया अब से लेकर स्वर्गवास तक (२७) सत्ताईस वर्षों में, पू० दयाश्रीजी म० सा०, कंचन श्री जी म० सा० शान्तिश्रीजी म० सा०, पवित्रश्रीजी म० सा० व महिमाश्रीजी म० सा० आदि अनेक साध्वियों की निर्मल मन से आपने निरन्तर सेवा की। यहाँ २७ वर्ष रहने पर भी किसी के अप्रिय नहीं बने थे कारण कि आपका व्यवहार बड़ा मधुर व स्वभाव मिलनसार था। आपको प्रतिवर्ष कभी पानीझरा, कभी मोतीझरा हो जाता था। पिछले काफी समय से बुखार व रक्तचाप की बीमारी से भी आप पीड़ित रहे। फिर भी आपने कभी अपनी सेवा के लिए किसी को कष्ट नहीं दिया।

स्वर्गवास के दिन २६-४-७५ को सुबह आप का रक्तचाप २१० था। अतः विनीताश्रीजी, जो अभी बीकानेर नगर में हुई तीन दीक्षाओं के अवसर पर साध्वी श्री कमलाश्रीजी म०, सुरंजनाश्रीजी म० को साथ लेकर पधारी थी (यह गृहस्थ जीवन में आपकी बहन थीं) इन्होंने आपको चिकित्सा कराने की सलाह दी लेकिन आपश्री ने साफ मना कर दिया कि मैं अंग्रेजी दवाई नहीं लेती। निरन्तर व्याधि होने पर भी कभी उफ तक नहीं की। उसी दिन रात्रि को जब आपके पास कमलाश्री जी म० सा० सोयी हुई थीं उन्होंने ६॥ बजे तेज-तेज श्वांस सुनकर आपको पुकारा, लेकिन वापस जवाब न मिलने पर जब उठ कर

देखा तो आप वमन किए हुए लेटी थी। फिर नाक व मुँह से खून निकलने लगा इस स्थिति से घबराकर श्रावकों को सूचना दी गई। उन्होंने रात मे १२ बजे डा० को बुलवाया। लेकिन डा० साहब असफल रहे क्योंकि आपको हेम्रेज हो गया था। आशा निराशा मे परिणत होने पर पू० सुरेन्द्रश्रीजी म० सा० व पू० विनीताश्रीजी म० सा० ने संथारा भवचरिम प्रत्याख्यान करा दिए और नवकार मंत्र सुनाते रहे। नवकार मंत्र सुनते-सुनते आपने ३- ५ मिनट पर समाधि पूर्वक नश्वर देह त्याग दी पण्डित मरन हुआ। रेल दादावाडी के पास वैसाग्र कृष्ण द्वितीया ता० २७-४-७५ रविवार को इस नश्वर देह को चन्दन की चिता में रखा गया व दाह संस्कार किया।

अममय ही यह त्याग, तप व साधना की भव्य आत्मा इस लोक से विदा लेकर अदृश्य लोक में प्रविष्ट हो गई। लेकिन उनकी सुरभि वर्षों तक जैन शासन को सुरभित करती रहेगी।

—पद्मयशाश्री

—पूर्णयशाश्री

—: द्रव्य सहायक :—

१०००) आर्या श्री विनीताश्रीजी महाराज के उपदेश से श्राविका मण्डल बीकानेर
(आर्या श्री पुष्पाश्रीजी महाराज की पुण्य स्मृति में)

१००१) आर्या श्री चन्द्रप्रभाश्रीजी महाराज के उपदेश से श्री नागेश्वर तीर्थ में नवपद ओली आराधना के उपलक्ष में श्राविका संघ

१५००) आर्या श्री सुलोचनाश्रीजी महाराज सुदर्शनाश्रीजी महाराज के उपदेश से

१०००) श्री जिन कुशल सूरि जैन सेवा संघ
साउथ एक्सटेनशन II नई दिल्ली

५००) श्री विचक्षण महिला मण्डल
श्री जैन छोटी दादावाड़ी नई दिल्ली

५००) श्री खरतर गच्छ संघ कोटा

२५०) श्री सोभागमल जी चोरड़िया भानपुर

२५०) जैन श्रीसंघ भानपुर

२५०) श्री मोहनराजजी भंसाली की धर्मपत्नी गुमानबाई

१००) श्री जैन श्वेताम्बर संघ तलोदा (खानदेश)

॥ ॐ ॥

॥ श्रीमद् अर्हद् भ्यो नमः ॥

वृहत् पूजा संग्रह

॥ अथ नवकार मन्त्र ॥

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व-साहूणं ॥
एसो पंच णमुक्कारो, सव्व पाव - प्पणासणो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं ॥

॥ स्नात्र-पूजाविधि ॥

प्रातःकाल मे भव्यात्मा आसातनाओ को टालता हुआ, सम्यग्दर्शन की शुद्धि के लिये, प्रभु मन्दिर मे 'णमो जिणाणं' कहता हुआ प्रवेश करे। पाप व्यापारो के निषेध रूप 'निस्सिहि' शब्द का तीन वार उच्चारण करे। वहाँ शुद्ध जल से स्नान कर, शुद्ध धोती पहिने। उत्तरासन, दाहिने कंधे के नीचे और बायें कन्धे के ऊपर करे। फिर अपने सिर के बालो को सँवार कर, हाथो को

शुद्ध जल से धो-पोंछकर पूजक अपने ललाट पर मेरु आकृति का तिलक करे तथा चारों अंगों में करे। फिर प्रक्षाल के लिये शुद्ध जल का घड़ा तैयार रक्खे। दूध-दही-घृत-मिश्री और केसर, इनके मिश्रण से पंचामृत का कलश तैयार करे। रकेबी में फूल या लौंग व अक्षत स्वच्छ जल धोकर रक्खे; भगवान के डावी वाजु धूपदानी में धूप और जिवणी वाजु घृत दीपक तैयार करे। नैवेद्य पेड़ा-लड्डू या मिश्री, फलरकेबी में रखे। मोली-काँच-पंखा-खसकूंची-तीन अंगलूहणे तथा आरती, मंगल, दीपक, चामर, घण्टा (घड़ियाल) आदि भी तैयार रखे।

पहले स्नानशुद्धि के वाद, पूजन के वस्त्र यानी धोती पहन कर दुपट्टे या चद्दर आदि का उत्तरासन लगा के, मुँह एवं नाक अष्टपट्ट मुखकोश बाँधकर चन्दन केशर घोटकर तैयार कर ले। सुगन्धि के लिये केशर में थोड़ा वरास डालें। गरमी हो तो थोड़ा गुलावजल भी डालें। फिर मौली अपने दाहिने हाथ में बाँधे। दाहिनी हथेली में केशर का साथिया करे। इतना ध्यान अवश्य रहे कि अपने ललाट व अंगों पर तथा हथेली में साथिया करने के लिये चन्दन-केशर अलग कटोरी में होना चाहिये। प्रभु-पूजा की चन्दन-केशर की कटोरी अलग होनी चाहिये। प्रभु पूजा की चन्दन-केशर की कटोरी में से हाथ के साथिया भूल के भी न करे। तिलक करने के वाद अपने हाथों को शुद्ध जल से धोकर पोंछ लेना चाहिये। हाथ आदि भी अन्य पात्र में धोना, मंदिरजी में कीचड़ कभी नहीं करना चाहिये। फिर मन्दिरजी में या जहाँ

भी स्नात्र पढ़ानी हो, वहाँ पहले भूमि शुद्ध करके चन्दरवा और पूठीया बाँधकर तीन बाजोट (पाटे) एक के ऊपर एक तिगडे के रूप मे रखकर ऊपर सिंहासन रखे। एक और बाजोट या बडा पाटा त्रिगडे के सामने रखे, जिस पर पूजा आदि का सामान रखा जाय। फिर पूजक (स्नात्रिया) आठ पुड का मुखकोश बाँधकर प्रभुजन्माभिषेक का चिन्तन करता हुआ, त्रिगडे मे व सिंहासन पर साथिया करके ऊपर छत्र को बाँधकर श्री प्रभु को विराजमान करे। त्रिगडे मे अक्षत साथिया कर श्रीफल के मौली बाँधकर तीन नवकार गिनता हुआ चाँवल पुंज (साथिये) पर श्रीफल स्थापन करे। रूपानाणा (द्रव्य) भी वहाँ रखे। सामने वाले बाजोट पर पाँच साथिए चावलों के करे। धूप खेवे। पूजा की सब वस्तुएँ धूप से धूपित करे। रकेबी मे थोडे अक्षतों के साथ केशर-फूल या लोंग मिलाकर कुसुमांजलि तयार कर लेवे। बाद मे पुरुष जिन प्रतिमाजी के दाहिने हाथ की तरफ और स्त्री बायीं तरफ कुसुमाञ्जलि की रकेबी लेकर खडा होकर एक नवकार मन्त्र पढता हुआ स्नात्र-पूजा पढनी (गानी) या पढवानी (गवानी) आरम्भ करे ॥

कुछ आवश्यकीय ध्यान देने योग्य बातें

जैन शास्त्रों मे पूजा की विधि बहुत ही विस्तार पूर्वक एवं विधि-विधान सहित लिखी हुई है एवं पूजा का फल भी बहुत बडा है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह सम्भव नहीं है कि

वह शास्त्र पढ़कर ही सब विधि जानें। अतएव, संक्षेप में यहाँ जिन पूजन विधि लिखते हैं। ताकि प्रत्येक साधारण व्यक्ति भी समझकर कर सके।

पूजन करने वालों को स्नान आदि करके अपने शरीर की शुद्धि करनी चाहिये। आजकल प्रायः कई व्यक्ति घर में ही स्नान करके आते हैं। एवं मन्दिरजी में आकर हाथ-पाँव धो-पोंछकर पहनने के कपड़े बदल कर पूजा में चले जाते हैं। किन्तु घर से कपड़े पहन कर आना एवं रास्तों में कितनों (अस्पृश्य) का स्पर्श हो जाता है। यह उचित नहीं है एक दूसरी बात यह है कि उसे सब लोग तो नहीं जानते कि ये घर से स्नान करके आये हैं ? अतः उनका अनुकरण (जो अज्ञानी एवं अजान हैं) करके दूसरे व्यक्ति भी केवल हाथ-पाँव धोकर पूजा में प्रवेश हो जाते हैं। इसमें कितनी आसातना होती है यह अति विचारणीय है। इस प्रकार शुद्ध हो प्रत्येक व्यक्ति पूजक रूप में यथावत बनकर मूल गँभारे में जावें। तीन नवकार मंत्र स्मरण कर सर्व-धातु की अरिहंत प्रतिमा सिद्धचक्र गट्टाजी स्नात्र के लिये लावे। प्रभु प्रतिमा का देखते ही वन्दना करके समस्त पूजा वस्तु को धूप से धूपित करके सर्वप्रथम प्रभु को धूप से धूपित करना चाहिये। तत्पश्चात् आभूषणों को उतारकर यथास्थान रखें। फिर जीवदया का पूरा-पूरा ध्यान रखते हुए कि कहीं कोई चींटी-मकोड़ी रोशनी के जन्तु आदि न हों ! सावधानी से देखकर प्रतिमाजी के मोरपींछी का व्यवहार करें। अर्थात् पहले का चढ़ा हुआ पूजा-द्रव्य मोरपींछी से उतारें।

फिर पानी व दूध वस्त्र से छानकर पहले एक कलश मे दूध (पंचामृत) और दूसरे मे जल भरकर फिर धूप देकर प्रतिमाजी का प्रक्षाल करें। खसकूची से जहाँतहाँ केशर आदि लगी हो उसे हल्के हाथ से उतार कर दूध या पंचामृत से, बाद में पानी से प्रक्षाल करें। यदि गरमी की ऋतु हो तो जल में गुलाब, केवडा जल डालकर प्रतिमाजी को स्नान करावें। पास में और भी कोई भाई हो तो उन्हें भी (बहनों को भी) प्रभु पूजा मे लाभ लेने का निवेदन करें। प्रक्षाल के बाद, एक-एक करके तीन अंगलूहणों से प्रतिमाजी को पोंछकर साफ करें। ध्यान रखें कि कहीं भी जरा जल-बिन्दु भी प्रतिमाजी पर अवशेष रहना न चाहिए।

तीन अंगलूहणा करके पुन धूप देकर प्रभु की चन्दन केशर से इस प्रकार पूजन करें।

पूजन सर्व अंगों से पहले दाहिनी तरफ, फिर बाईं तरफ करें। भगवान के नव अंगों की पूजा होती है। उसके लिये एक-एक श्लोक (मंत्र) पढें और प्रभु अंग भेटें।

प्रभु की प्रतिमाजी के नव अंगों का क्रमवार वर्णन

१ प्रभु के दोनों चरण। २ प्रभु के जानु (गोढों)। ३ प्रभु के कर (हाथों की कलाइयाँ)। ४ प्रभु के खवों पर (चारों अंगों पर प्रथम दाहिने फिर बायें अग पर) ५ प्रभु के मस्तक पर। ६ प्रभु के भाल (ललाट पर)। ७ प्रभु के कठ पर। ८ प्रभु के उर (हृदय

पर)। ६ प्रभु के उदर (अर्थात् नाभि पर) इस प्रकार क्रम से केशर-चन्दन के पूजा करनी चाहिए।

तथा सबसे पहले पूजक (स्नात्रिये को) अपने चार अंगों में—१ भाल (ललाट)। २ कंठ (गले में)। ३ उर (हृदय) में और ४ उदर (नाभि) में तिलक करके पूजन में प्रवेश होना चाहिए।

प्रभु के नव अंगों के दोहे (मंत्र) यहाँ विस्तार से न लिखकर केवल नव अंगों के नाम लिखे है।

यह भी ध्यान रखना चाहिए कि पहले मूलनायकजी की पूजा वाद में अन्यान्य स्थापित तीर्थंकर प्रतिमाओं का पूजन, पीछे गणधर पूजा, नवपदयंत्रादि उसके वाद आचार्यादि की प्रतिमा पूजन, फिर शासनदेवी भैरूजी आदि की पूजा करनी चाहिये।

कई लोग अष्ट मंगलपट्ट की पूजा करते हैं किन्तु वह पूजा करने की वस्तु नहीं वह तो भगवान के सामने चढ़ाने की है; अष्टमंगलीक चावलों से मांडे जाते हैं या पट्टक सामने चढ़ाया जाता है।

पूजा करने वालों (स्नात्रियों) को यह बराबर ध्यान में रखना चाहिये कि उनके शरीर में यदि जरा भी अशुचि हो, जैसे—शरीर में कहीं भी घाव-फोड़ा-फुंसी के कारण मवाद-पीब आदि आता हो तथा स्त्रियों को, खास जो रजस्वला हो तो, चार दिन तक तथा ऊपर लिखे रोगियों को पूजा नहीं करनी चाहिये। और जिन्होंने शव (मुर्दा) उठाया हो वे तीन दिन तक तथा जिनके घर में

प्रसूत (बच्चा जन्मा) हो, उन्हें भी तीन दिन तक पूजा नहीं करनी चाहिये। अशुचि की और भी कई बाधाएँ हैं, वे अपने गुरु आचार्यों से पूछकर ध्यान मे रखना व अनुसरण करना चाहिये।

पुष्प चढ़ाने के नियम (पूजा में काम आने वाले पुष्पों को काटकर-पिरोकर काम मे लेने से, कभी-कभी बेइन्द्रिय जीव पुष्पों मे लिपटे रहने से हिंसा की सम्भावना रहती है। अत फूलों के काटने-पीरोने मे शास्त्र-विहित विधि से प्राप्त पुष्पों से (चाहे थोड़े हों) पूजा विशेष फलदायक है। अत विवेक एव जयणा रखना अत्यन्त ही आवश्यक है। तथा—

मुखकोश बाँधने का तरीका

मुखकोश बाँधने का यह विधान (नियम है कि आठ पुड वाले वस्त्र से मुख और नाक दोनों को बाँध कर पूजन मे प्रवेश करना चाहिए। कई-कई भाई-बहन केवल मुख बाँधते हैं तथा नाक खुला रखते हैं। कई-कई तो केवल मुँह के आगे नाम मात्र को ही चद्दर लगा लेते हैं, कुछ लोग पूजन के बाद तुरन्त मुखकोश खोल देते हैं। एव धोक देते हुए प्रभु प्रतिमा तक बिना मुखकोश बाँधे ही चले जाते हैं तथा कुछ व्यक्ति तो बिना मुखकोश के ही प्रतिमाजी के समीप खड़े होकर स्तवन स्तोत्रादि गान-पाठ कर लेते हैं। इससे मुँह-नाक की गर्म हवा थूक-लार के छींटे प्रतिमाजी पर गिर जाते हैं। उससे भयंकर आशातना हो जाती है। इसलिये

मुखकोश सावधानी से बाँधना चाहिये। ध्यान रहे कि प्रभु पूजन सूर्योदय के दो घड़ी बाद ही शास्त्रों में करने की आज्ञा है, पहले नहीं। इसका सदा ध्यान रखना चाहिये। इस प्रकार यह पूजा तथा स्नात्रपूजा की विधि संक्षेप से लिखी है।

ॐ

श्रीमत् परम अध्यात्म-रसिक, परम-गीतार्थ

श्रीमद्देवचन्द्रजी महाराज कृत

॥ स्नात्र पूजा ॥

॥ दोहा ॥

चउतीसे अतिसय जुओ-वचनातिसय संजुत्त ॥
सो परमेसर देखि भवि—सिंहासण संपत ॥१॥

॥ ढाल ॥

सिंहासण बैठा जग भाण, देखी भविजन गुण मणिखाण ॥
जे दीठे तुझ निम्मलझाण, लहिये परम महोदय ठाण ॥१॥

कुसुमाञ्जलि मेलो आदि जिणन्दा। तोरा चरण-कमल चौबीस, पूजो रे चौबीस, सोभागी चौबीस, बैरागी चौबीस जिणन्दा। कुसुमाञ्जलि मेलो आदि जिणन्दा।

॥ मंत्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीमद् आदिजिनेन्द्राय, (श्रीमज्जिनेन्द्राय) कुसुमाञ्जलिं यजामहे स्वाहा ॥

इस मन्त्र को बोलने के बाद रकेबी में से कुछ कुसुमांजलि दोनों हाथों या अपने दाहिने हाथ से प्रभु के चरणों पर चढावे। फिर चन्दन-केशर की कटोरी बाएँ हाथ में लेकर दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली से प्रभु के दोनों चरणों मे (पहले दाहिने, फिर बाएँ) टीकी लगावे। फिर रकेबी में से दाहिने या दोनों हाथों मे कुसुमांजलि लेकर खड़ा रहे। फिर मंत्र बोले।

॥ मंत्र ॥

ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्वसाधुभ्यः

॥ दोहा ॥

जो णियगुण पज्जवरम्यो, तस अनुभव एगत्त ॥
शुद्ध पुग्गल आरोपतां, ज्योति सुरंग निरत्त ॥२॥

जो निज आतम गुण आणन्दी, पुग्गल संगे जेह अफन्दी ॥
जे परमेश्वर निज पद लीन, पूजो प्रणमो भय अदीन ॥२॥

कुसुमांजलि मेलो शान्ति जिणन्दा। थोरा चरण

कमल चौवीस, पूजो रे चोवीस, सोभागी चौवीस, वैरागी चौवीस जिणन्दा । कुसुमांजलि मेलो शान्ति जिणन्दा ॥

॥ मन्त्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्रीमत्-शान्ति जिनेन्द्राय (श्रीमज्जिनेन्द्राय) कुसुमांजलिंयजामहे स्वाहा ॥

इस मंत्र को वोलने के वाद कुसुमांजलि को प्रभु के चरणों में दूसरी वार और चढ़ावें। फिर चंदन-केशर की टीकी प्रभु के घुटनों (गोडों) पर लगावें।

फिर हाथों में कुसुमांजलि लेकर खड़ा रहे। तथा नीचे लिखा मंत्र वोले।

मंत्र—ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्वसाधुभ्यः ॥

॥ दोहा ॥

निम्मल नाण पयास कर, निम्मलगुण सम्पन्न ।
निम्मल धम्मुवएसकर, सो परमप्पा धन्न ॥३॥

॥ ढाल ॥

लोकालोक प्रकाशक नाणी, भविजन तारण जेहनी वाणी ।
परमानन्द तणी नीसाणी, तसु भगते मुझ मति ठहराणी ॥

कुसुमांजलि मेलो नेमि जिणन्दा । तोरा चरण कमल चौवीस, पूजो रे चोवीस, सौभागी चौवीस वैरागी चोवीस जिणन्दा । कुसुमाजलि मेलो नेमि जिणन्दा ।

॥ मत्र ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म - जरा - मृत्यु निवारणाय, श्री नेमि जिनेन्द्राय (श्री मज्जिनेन्द्राय) कुसुमाजलिंयजामहे स्वाहा ॥

यह मत्र पढकर प्रभु के चरणों मे कुसुमाजलि तीसरी वार चढावें । तथा चदन-केशर से प्रभु की कलाइयो पर टीकी लगावें । फिर कुसुमाजलि हाथों मे लेकर खडा रहे तथा मंत्र पढें ।

मत्र—ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥

॥ दोहा ॥

जे सिद्धा सिज्झन्ति जे, सिज्झिसति अणत ॥
जसु आलम्बन ठवियमन, सो सेवो अरिहंत ॥४॥

॥ ढाल ॥

शिव सुख कारण जेह त्रिकाले–सम परिणामें जगत निहाले॥
उत्तम साधन मार्ग दिखालें–इन्द्रादिक जसु चरण पखाले ॥
कुसुमाञ्जलि मेलो पार्श्व जिणन्दा । तोरा चरणकमल

चौवीस, पूजो रे चौवीस, सोभागी चौवीस, वैरागी चौवीस जिणन्दा। कुसुमाञ्जलिमेलो पार्श्व जिणन्दा ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्री पार्श्व जिनेन्द्राय [श्रीमज्जिनेन्द्राय] कुसुमाञ्जलिं-यजामहे स्वाहा ॥

यह मंत्र पढ़कर कुसुमांजलि प्रभु के चरणों पर चौथी वार चढ़ावे। फिर प्रभु के दोनों कन्धों पर टीकी लगावे। फिर कुसुमांजलि हाथों में लेकर खड़ा रहे। तथा नीचे लिखा मंत्र पढ़े।

मंत्र—ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥

॥ दोहा ॥

सम्मदिट्ठी देसजय—साहु साहुणी सार ॥
आचारज उवज्झाय मुणि—जोनिम्मल आधार ॥५॥

॥ ढाल ॥

चउव्विह संघे जे मन धार्यो,—मोक्षतणो कारण निरधार्यो ॥
विविह कुसुम वर जाति गहेवी,—तसु चरणे प्रणमन्त ठवेवी ॥

कुसुमाञ्जलि मेलो, वीर जिणन्दा। तोरा चरणकमल चौवीस। पूजो रे चौवीस, सोभागी चौवीस वैरागी चौवीस जिणन्दा। कुसुमाञ्जलिमेलो-वीर जिणन्दा ॥५॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, भगवते श्री वीर जिनेन्द्राय, [श्रीमज्जिनेन्द्राय] कुसुमाञ्जलिं यजामहे स्वाहा ॥

उपरोक्त मन्त्र बोलकर प्रभु के मस्तक [चोटी] पर चन्दन-केशर की टीकी लगाना। फिर हाथ में चामर लेकर खड़ा रहे।

॥ वस्तु छन्दः ॥

सयल जिनवर, सयल जिनवर–नमिय मनरङ्ग।
कल्लाणक विहि सठविय–करिय सुधम्म सुपवित्त सुन्दर ॥
सय इक सत्तरि तित्थकर–इक समय विरहन्ति महीयल।
चवण समय इगवीस जिण–जन्म समय इगवीस।
भत्तिय भावे पूजिया–करो सघ सुजगीस ॥ ६ ॥

॥ ढाल १ ॥

तर्ज—इक दिन अचिरा हुलरावतीए०

भवतीजे समकित गुणरम्या–जिण भक्ति प्रमुख गुण परिणम्या ॥ तजी इन्द्रिय सुख आसशना–करी थानक वीसनी सेवना ॥१॥ अति राग प्रशस्त प्रभावता–मन भावना एहवी भावता ॥ सवि जीव करूँ शासन रसी–इसी भाव दया मन उल्लसी ॥ २ ॥ लही परिणाम

एहवुँ मलुँ-निपजावी जिनपद निर्मलु ॥ आउबंधे विन इक भवकर्ता-श्रद्धा संवेग ने थिर धरी ॥ ३ ॥ तिहां थी चविय लहे नर भव उदार-भरत तिम एरवतेज सार ॥ महाविदेह विजय प्रधान-मज्झ खण्डे अवतरे जिन निधान ॥ ४ ॥

॥ ढाल २ ॥

भगवान के चामर ढाले। फिर हाथों में अक्षत या कुसुमांजलि लेकर खड़ा रहना।

पुण्ये सुपनाँ ए देखे, मनमें हरख विशेषे। गजवर उज्वल सुन्दर-निर्मल वृषभ मनोहर ॥१॥ निर्भय केसरी सिंह-लखमी-अतीहि अबीह-अनुपम फूलनी माला-निर्मल शशि सुकुमाल ॥ २ ॥ तेज तरणि अति दीपे, इन्द्रध्वजा जगजीपे पूरण कलश पडूर, पद्मसरोवर पूर ॥३॥ इग्यारमे रयणायर, देखे माताजी गुणसायर। बारमे भुवन विमान, तेरमे रतन निधान ॥४॥ अग्नि सिखा निरधूम। देखे माताजी अनूपम। हरखी रायने भासे, राजा अरथ प्रकासे ॥५॥ जगपति जिनवर सुखकर, होस्ये पुत्र मनोहर। इन्द्रादिक जसु नमसे-सकल मनोरथ फलसे ॥६॥

॥ वस्तु छन्दः ॥

पुण्य उदय, पुण्य उदय—उपना जिननाह।
माता तन रयणी समें—देखी सुपन हरखन्त जागिय॥
सुपन कही निज कन्त ने-सुपन अरथ साँभलो सोभागिय॥
त्रिभुवन तिलक महागुणी-होशे पुत्र निधान॥
इन्दादिक जसु पाय नमी-करसे सिद्धि विधान॥७॥

॥ ढाल ३ ॥

तर्ज—चन्द्रावलानी

सोहमपति आसनकपीयो—देई अवधे मन आणंदियो। मुझ आतम निर्मल करण काज—भवजल तारण प्रगट्यो जहाज॥१॥ भव अडवी पारग सत्थवाह—केवल नाणाइय गुण अगाह। शिवसाधन गुण अकूर जेह—कारण उलट्यो आषाढि मेह॥२॥ हरषे विकसे तब रोम राय—वलयादिक माँ निज तन न माय। सिंहासण थी उठ्यो सुरिन्द—प्रणमन्तो जिण आनन्द कन्द॥३॥ सग अड्पय समुहा आवीतत्थ—करी अंजली प्रणमिय मत्थ-सत्थ। मुख भाखे ए क्षण आज सार—तियलोय पहू दीठो उदार॥ ४ ॥ रे! रे! निसुणो सुरलोय देव

विषयानल तापित तनु समेव। तसु शान्ति करण जलधर समान—मिथ्या विष चूरण गरुड़वान ॥५॥ ते देव सकल तारण समत्थ—प्रगट्यो तसु प्रणमी हुओ सनत्थ। इम जम्पी शक्रस्तव करेवि—तत्र देव-देवी हरषे सुणेवि ॥६॥ गावे तत्र रंभा गीत गान—सुरलोक हुओ मंगल निधान। नर क्षेत्रे आरज वंश ठाम—जिनराज वधे सुर हर्ष धाम॥७॥ पिता-माता घरे उच्छव अशेष—जिन शासन मंगल अति विशेष। सुरपति देवादिक हरष संग—संयम अर्थी जनने उमंग ॥८॥ शुभ वेला लगने तीर्थनाथ—जनम्या इन्द्रादिक हर्ष साथ। सुख पाम्या त्रिभुवन सर्व जीव—वधाई-वधाई थई अतीव ॥९॥

उपरोक्त ढाल-गाथा गाने-बोलने के बाद, हाथों में ली हुई कुसुमांजलि या अक्षतादि से प्रभु को वधावे। बाद में प्रभु प्रतिमा को तीन प्रदक्षिणा व तीन खमासगा देकर, बायाँ घुटना खड़ा रखकर, और दायाँ घुटना जमीन पर टेककर, चैत्यवन्दन करे। यहाँ कहीं-कहीं केवल "शक्रस्तव" "णमुत्थुणं" पाठ "ठाणं संपाविउं कामस्स" तक बोलने का उल्लेख है। और कहीं-कहीं "जगचिन्तामणि" बोलकर, "जय वीयराय" पढ़कर ही चैत्यवन्दन करने का उल्लेख मिलता है। जो कुछ भी हो, जहाँ जैसी प्रथा-

परिपाटी हो, उसी तरह करे। बाद मे दोनों हाथों को शुद्ध जल से धोकर-पोंछकर दाहिने हाथ में साथिया केशर चन्दन का कर, पंचामृत-जलादिका कलश ऊपर वस्त्र से ढँककर, धूप देकर हाथ में लेकर प्रभु प्रतिमा के दाहिनी बाजू खडा रहे।

॥ कलश की ढाल ४ ॥

तर्ज—श्री शान्ति जिननो कलश कहीशुं, प्रेमसागर पूर०

श्री तीर्थपतिनो कलश मज्जन—गाइये सुखकार।
नरखेत्र मण्डण दुहविहडण—भविक मन आधार॥
विहाँ राव राणा, हर्ष उच्छव—थयो जग-जयकार।
दिशि कुमरी अवधि विशेष जाणी—लह्यो हर्ष अपार॥१॥
निय अमर अमरी; संग कुमरी—गावती गुण छन्द।
जिन जननी पासे, आवी पहुँतो—गहगहती आणन्द॥
हे माय! तैं जिनराज जायो—शचि वधायो रम्म।
अम्ह जम्म निम्मल करण कारण—करीश सूइय कम्म॥२॥
तिहाँ भूमिशोधन[१], दीप-[२] दर्पण[३] —वायवींजण[४] धार।

१—यहाँ प्रभु के सामने वस्त्र से भूमि शोधन करना।
२—प्रभु के सन्मुख दीपक-फानस दिखाना।
३—प्रभु को दर्पण दिखाना।
४—प्रभु के आगे पंखा झलना (हवा करना) चाहिये।

तिहाँ करिय कदली[1] गेह जिनवर-जननो मज्जनकार ॥
वर राखड़ी[2] जिन पाणि बाँधी—दिये इम आशीष ।
जुग कोड़ा कोड़ी चिरञ्जीवो-धर्म दायक ईश ॥३॥

॥ ढाल ५ ॥

तर्ज—एकवीसानी

जगनायक जी, त्रिभुवनजन हितकार ए ।
परमातमजी, चिदानन्दघन सार ए ॥
जिण रयणी जो, दश दिशि उज्वलता धरे ।
शुभ लगने जी, ज्योतिष चक्र ते संचरे ॥
जिन जनम्याजी, जिण अवसर माता घरे ।
तिण अवसर जी, इन्द्रासन पिण थरहरे ॥१॥

॥ हरिगीतछन्द ॥

थरहरे आसन इन्द्र चिन्ते, कवण अवसर ए बण्यो ।
जिन जन्म उच्छवकाल जाणी, अति ही आनन्द ऊपन्यो ॥

१—यहाँ प्रभु के सामने के पाटे पर कदली घर यानी अक्षतों का साथिया बनाना ।

२—यहाँ पर मौली प्रभु प्रतिमा के दाँयें हाथ की कलाई पर धरना ।

निज सिद्धि संपति हेतु जिनवर, जाणी भगते ऊमह्यो ।
विकसंत वदन प्रमोद वधते, देवनायक गहगह्यो ॥१॥

॥ ढाल ॥

तब सुरपति जी, घण्टानाद[1] कराव ए।
सुरलोके जी, घोषणा एह दिराव ए॥
नरक्षेत्रे जी, जिनवर जन्म हुओ अछे।
तसु भगते जी, सुरपति मन्दरगिरि गच्छे ॥२॥

॥ हरिगीत छन्द ॥ [त्रोटक]

गच्छेति मन्दर शिखर ऊपर, भुवन जीवन जिन तणो ।
जिन जन्म उच्छव करण कारण, आवजो सवि सुर गणो ।
तुम शुद्ध समकित थास्ये निर्मल, देवाधिदेव निहालतौं ।
आपणा पातिक सर्व जासे, नाथ चरण पखालतौं ॥२॥

॥ ढाल ॥

इम सॉंभलजी, सुरवर कोडी बहू मिली।
जिन वन्दन जी, मन्दरगिरि साहमी चली॥

१—यहाँ पर उठकर घण्टा बजाना चाहिये ।

सोहमपति जी, जिन जननी घर आविया ।
जिन माता जी, वन्दी स्वामी वधाविया[1] ॥३॥

॥ हरिगीत छन्द [त्रोटक]

वधाविया जिनवर हर्ष बहुले, धन्य हूँ कृतपुण्य ए ।
त्रैलोक्यनायक देव दीठो, मुझसमो कुण अन्य ए ॥
हे जगतजननी पुत्र तुमचो, मेरु मज्जन वर करी ।
उत्संग तुमचे वलीय थापिश-आतमा पुण्ये भरी ॥३॥

॥ ढाल ॥

सुरनायक जी, जिन निज कर कमले ठव्या ।
पंच रूपे जी, अतिशय महिमाए स्तव्या ॥
नाटक[2] विधि जी, तव बत्तीस आगलवहे ।
सुर कोड़ी जी, जिन दर्शन ने ऊमहे ॥४॥

॥ ढाल हरिगीत [त्रोटक] छन्द ॥

सुर कोड़ा कोड़ी नाचती, वलि नाथ शचि गुण गावती ।
अप्सरा कोड़ी हाथ जोड़ो, हाव भाव दिखावती ॥

१—यहाँ पर प्रभु को कुसुमांजलि या अक्षतों से वधाना चाहिये ।

२— यहाँ प्रभु के सामने नाच करना चाहिये ।

जय जयो तूँ जिनराज जगगुरु, एम दे आशीष ए।
अम्ह प्राण शरण आधार जीवन, एक तू जगदीश ए ॥४॥

॥ ढाल ॥

सुर गिरिवर जी, पाँडुक वन में चिहूँ दिशे।
गिरि शिल पर जी, सिंहासन सासय वसे ॥
तिहाँ आणी जी, शक्रें जिन खोले ग्रह्या।
चउसट्ठ जी, तिहाँ सुरपति आवी रह्या ॥५॥

॥ हरिगीत [त्रोटक] छन्द ॥

आविया सुरपति सर्व भगते, कलश श्रेणी बणावए।
सिद्धार्थ पमुहा तीर्थ औषधि, सर्व वस्तु अणावए ॥
अच्चुय पति तिहाँ हुकम कीनो, देव कोडा कोड़ी ने।
जिन मज्जनारथ नीर लावो, सर्व सुर कर जोडी ने ॥५॥

यहाँ पर हाथ में जल-कलश लेकर खडा रहे।

॥ ढाल ६ ॥

[तर्ज—शान्ति ने कारणे इन्द्र कलशा भरे]

आत्मसाधन रसी, देवकोडी हसी।
उल्लसी ने धसी, क्षीर सागर दिसी ॥

पउम दह आदि दह, गंग पमुहा नई।
तीर्थ जल अमल लेवा भणी ते गई ॥१॥
जाति अड़ कलश करि, सहस अट्ठोत्तरा।
छत्र चामर सिंहासने, शुभतरा ॥
उपगरण पुप्फ चँगेरी, पमुहा सवे।
आगमे भाखिया, तेम आणी ठवे ॥२॥
तीर्थ जल भरिय करी, कलश करी देवता।
गावता भावता, धर्म उन्नति रता ॥
तिरिय नर अमरने, हर्ष उपजावता।
धन्य अम्ह शक्ति शुचि, भक्ति इम भावता ॥३॥
समकित बीज निज, आत्म आरोपता।
कलश पाणी मिसे, भक्ति जल सींचता ॥
मेरु सिहरोवरि, सर्व आव्या वही।
शक्र उत्संग जिन, देखि मन गहगही ॥४॥

॥ गाथा वस्तुछन्द ॥

हंहो देवा-हंहो देवा, अणाई कालो, अदिट्ठपुव्वो।
तिलोय तारणो, तिलोय बंधू, मिच्छत्त मोहविद्धंसणो ॥
अणाई तिण्हा विणासणो, देवाहिदेवो, दिट्ठव्वो, हिअय कामेहिं ॥७॥

॥ ढाल—पूर्ववत् ॥७॥

एमपभणन्तिवण, भुवणजोईसरा ।
देव वेमाणिया, भत्ति धम्मायरा ॥
केविरूप्पङ्किया, केविमित्ताणुगा ।
केवि वररमणि, वयणेण अई उच्छगा ॥५॥

॥ वस्तु छन्दः ॥

तत्थ अच्चुय-तत्थ अच्चुय, इन्द आदेश ।
कर जोडी सवि देवगण, लेइकलश आदेश पामिय ॥
अद्भुत रूप सरूप-जुय, कवणएह पुच्छन्ति सामिय ॥

॥ दोहा ॥

इन्द्र कहे जगतारणो, पारग अम्ह परमेस ।
नायक दायक धम्मनिहि, करिये तसु अभिषेक ॥८॥

॥ ढाल ८ ॥

[राग प्रभात भैरव (प्रभाती) तर्ज—तीर्थ कमल दल
उदक भरोने-पुष्कर सागर आवे]

पूर्ण कलश शुचि उदकनी धारा, जिनवर अंगे नामे ।
आतम निर्मल भाव करन्ता, वधते शुभ परिणामे ॥
अच्चुयादिक सुरपति मज्जन, लोकपाल लोकान्त ।
सामानिक इन्द्राणी पमुहा, इम अभिषेक करन्त ॥८॥१॥

|| गाहा ||

तत्र ईशाण सुरिन्दो, सक्कं पभणेई करिहु सुप्पसाओ ।
तुम्ह अंके महणाहो, खिणमित्तं अम्ह अप्पेह ॥
ता सक्किन्दो पभणई, साहम्मियवच्छलम्मि बहुलाहो ।
आणाईवं तेणं गिण्हह, होउ कयत्था भो ॥ १ ॥

इतना कहकर प्रभु के चरणों पर थोड़ी सी जलधारा देवे ।

|| ढाल ६ ||

[राग प्रभात भैरव] (प्रभाती)

सोहम सुरपति वृषभरूपकरी, न्हवण करे प्रभु अंग ।
करिय विलेपन पुप्पमाल ठवि, वर आभरण अभंग ॥ टेर ॥

तब सुरवर बहु जय जय रव करी, नच्चे धरी आणन्द ।
मोक्ष मार्ग सारथपति पाम्यो, भाजिसूं हिव भवफन्द ॥१॥
कोड़[१] बत्तीस सोवन्न उवारी, वाजन्ते वरनाद ।
सुरपति संघ अमर श्रीप्रभु ने, जननी ने सुप्रसाद ॥२॥

---

१ - यहाँ शक्ति के अनुसार द्रव्य नाणा लेकर, प्रभु के ऊपर (घोळ) उतार (न्यौछावर) कर, प्रक्षालित जल पात्र में डालें ।

आणीथापी एम पयंपे, अम्ह निस्तरिया आज ।
पुत्र तमारो धणोय हमारो, तारण तरण जहाज ॥३॥
मात जतन करी राखजो एहने, तुम सुत अम्ह आधार ।
सुरपति भक्ति सहित नन्दीसर, करे जिन भक्ति उदार ॥४॥
निय-निय कप्प गया सहुनिर्जर, कहता प्रभु गुण सार ।
दीक्षा-केवल-ज्ञान-कल्याणक, इच्छा चित्त मझार ॥५॥
खरतरगच्छ जिन आणारगी, "राजसागर उवज्झाय" ।
'ज्ञानधर्म' 'दीपचंद' सुपाठक, सुगुरु तणे सुपसाय ।
"देवचन्द" जिन भक्ते गायो, जन्म महोत्सव छन्द ॥
बोध बीज अंकुरो उलस्यो, सघ सकल आनन्द ॥ ७ ॥
॥ सोहम सुरपति० ॥

॥ ढाल १० ॥ कलश ॥

[राग—विलावल या माड अथवा यथा रुचि]

इम पूजा भगते करो, आतम हितकाज । आत० ।
तजिये विभाव निजभावमाँ, रमताँ शिवराज । रमताँशिव०१।
काल अनन्ते जे हुआ, होशे जेह जिणन्द । होशेजेह० ॥
संपई सीमन्धर प्रभु, केवल नाण दिनन्द । केवल नाण०२॥

जन्म महोत्सव इणपरे, श्रावक रुचिवन्त। श्रावकरुचि०।
विरचे जिनप्रतिमातणो, अनुमोदन खन्त। अनुमोदन० ३॥

"देवचन्द" जिन पूजना, करताँ भव पार। करताँभव०।
जिन पड़िमा जिन सारखी, कही सूत्र मझार। कही सूत्र० ४

॥ इम पूजा भगते करो० ॥

उपरोक्त ढाल, सोहम सुरपति० गाते हुए भगवान को अच्छी तरह से प्रक्षालन करावें। बाद में तीन अंगलूहणों से प्रतिमाजी को पोंछकर केशर चन्दन स्वस्तिक युक्त सिंहासन में विराजमान करे।

—०—

॥ अथ अष्टप्रकारी पूजा ॥

॥ प्रथमा जल पूजा ॥ १ ॥

नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगति जन्तु महोदय कारणम्।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचि मनः स्नपयामि विशुद्धये।१

॥ मंत्रः ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनंतानंत ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु-निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, जलंयजामहे स्वाहा।

उपरोक्त काव्य और मंत्र बोलकर प्रभु प्रतिमाजी के चरणोंपर थोड़ा-सा जल चढावे। तथा फिर अंगलूहण देना न भूले।

॥ द्वितीया चदन पूजा २ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्यो० ॥

सकल मोह तिमिस्र विनाशनं, परम शीतल भावयुतंजिनम्।
विनय कुंकुम दर्शन चन्दनैः, सहज तत्व विकासकृतेऽर्चये ॥२॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु - निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, चन्दनं यजामहे स्वाहा।

उपरोक्त काव्य तथा मंत्र पढकर, प्रभु प्रतिमाजी के नवों अंगों में चन्दन, केशर विलेपन करे।

॥ तृतीया पुष्प पूजा ३ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥

विकचनिर्मल शुद्ध मनोरमै, विशदचेतनभाव समुद्भवैः।
सुपरिणाम प्रसूनघनैर्नवैः, ——— मयंहि यजाम्यहम् ॥३॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये, जन्म - जरा - मृत्यु निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य तथा मंत्र पढ़कर, प्रभु चरणों में पुष्प चढ़ावे ।

॥ चतुर्थी धूप पूजा ४ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः ॥

सकल कर्म महेन्धन दाहनं, विमल संवर भाव सुधूपनम् ।
अशुभ पुद्गल सङ्गविवर्जितं, जिनपतेः पुरतोऽस्तु सुहर्षतः ॥४॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये, जन्म-जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, धूपं यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य तथा मंत्र पढ़कर, प्रभु प्रतिमा के सामने धूप खेवे ।

॥ पंचमी दीपक पूजा ५ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यः ॥

भविक निर्मल बोधविकासकं, जिनगृहे शुभ दीपक दीपनम् ।
सुगुण राग विशुद्ध समन्वितं, दधतुभाव विकास कृते जनाः ५॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये,

जन्म-जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, दीपं यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य तथा मंत्र पढ़कर, प्रभु प्रतिमाजी के सन्मुख दीपक फानस वाला दिखावें।

॥ षष्ठी अक्षत पूजा ६ ॥

ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय, सर्वसाधुभ्यः

सकल मंगल केलि निकेतनं, परम मंगलभावमयं जिनम्।
श्रयति भव्यजना इति दर्शयन्, दधतिनाथ पुरोक्षत स्वस्तिकम् ॥६ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्री मज्जिनेन्द्राय, अक्षतान् यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य और मन्त्र पढ़कर, प्रभु के आगे पाटे के ऊपर अक्षतों का स्वस्तिक बनाकर-सिद्धशिला तथा तीन पुंज भी करे।

॥ सप्तमी नैवेद्य पूजा ७ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥

सकल पुद्गल संग विवर्जनं, सहज चेतन भाव विलासनम्।
सरसभोजन नव्यनिवेदनात्, परम निर्वृतिभावमहस्पृहे ॥७॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्तज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्री मज्जिनेन्द्राय, नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

इस प्रकार उपरोक्त काव्य तथा मंत्र पढ़कर प्रभु प्रतिमाजी के आगे के पाटे के ऊपर मिठाई-पक्वान्न (पकवान) आदि चढ़ावे ।

॥ अष्टमी फल पूजा ८ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधुभ्यः ॥

कटुक कर्म विपाक विनाशनं, सरस-पक्व-फल व्रजढौकनम् ।
विहित मोक्षफलस्य प्रभोः पुरः, कुरुत सिद्धि फलाय महाजनाः ॥८॥

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु-निवारणाय, श्रीमज्जिनेन्द्राय, फलं यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य और मंत्र पढ़कर, प्रभु के सामने के पाटे के ऊपर, अर्पण किये हुए नैवेद्य के पास ऋतुफल [श्रीफल, सुपारी, मौसमीफल, जो भी उपलब्ध हो] को चढ़ावे ।

॥ अथ अर्घ पूजा ९ ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ॥

॥ मालिनी छन्दः ॥

इति जिनवर वृन्दं, भक्तितः पूजयन्ति ।
सकल गुणनिधानं, देवचन्द्राः स्तुवन्ति ॥
प्रति दिवस मनन्तं, तत्समुद्भासयन्ति ।
परम सहज रूपं, मोक्ष सौख्य श्रयन्ति ॥९॥

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हपरमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये, जन्म-जरा - मृत्यु निवारणाय, श्री मज्जिनेन्द्राय, अर्घ्यं यजामहे स्वाहा ।

उपरोक्त काव्य तथा मन्त्र पढकर, प्रभु-प्रतिमा के त्रिगड़े के चारों कोनों में पानी की धारा देवे ।

॥ अथ वस्त्र युगल पूजा १० ॥

॥ वसन्ततिलका छन्दः ॥

॥ ॐ नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः ॥

शक्रोयथा जिनपतेः सुरशैल चूला ।
सिंहासनोपरि मितः स्नपनावसाने ॥
दध्यक्षतः कुसुमचन्दन गन्ध धूपैः ।
कृत्वाऽर्चनं तु विदधाति सुवस्त्र पूजाम् ॥१॥

विश्वसेन अचिरा जी के नन्दा,
शान्तिनाथ मुख पूनम चंदा ॥जय जय० १॥

चालिस धनुष सोवनमय काया,
मृग लंछन प्रभु चरण सुहाया ॥जय जय० २॥

चक्रवर्ती प्रभु पंचम सोहे,
सोलम जिनवर सुर-नर मोहे ॥जय जय० ३॥

मंगल आरती प्रभु की कीजे,
जनम-जनम को लाहो लीजे ॥जय जय० ४॥

कर जोड़ी "सेवक" गुण गावे,
सो नर-नारी अमर पद पावे ॥जय जय० ५॥

॥ मंगल दीवो ॥

दीवो रे दीवो मंगलिक दीवो,
भुवन प्रकाशक जिन चिरंजीवो ॥ टेर ॥

चन्द्र सूरज प्रभु तुम मुख केराँ,
लुँछण करताँ दे नित फेराँ ॥दीवो रे० १॥

जिन तुम्ह आगल सुरनी अमरी,
मंगल दीप करे देई भँवरो ॥दीवो रे० २॥

जिम - जिम धूप घटी प्रगटावें,
तिम-तिम भवनाँ दुरित गमावे ॥दीवो रे० ३॥
नीराऽक्षत कुसुमांजलि चन्दन,
धूप-दीप-फल-नैवेद्य - वन्दन ॥ दीवो रे० ४॥
इणि परे अष्टप्रकारी कीजे,
पूजा - स्नात्र विशेष करीजे ॥दीवो रे० ५॥

इसके बाद, पंचामृत-कलश को प्रभु के सामने बृहत् शान्ति-स्तोत्र का पाठ करता हुआ अखण्ड धारा से भरे। जल छिड़काव करे। प्रभु समक्ष क्षमा याचना करे। भक्तिभाव से करबद्ध होकर बोलना।

॥ श्लोकः ॥

आज्ञा हीन, क्रियाहीनं मन्त्रहीनं च यत्कृतम् ॥
तत्सर्वं क्षम्यतां देव, क्षमस्व परमेश्वर ! ॥ १ ॥

बाद में भाव पूजार्थ चैत्यवन्दन जयवीयराय पर्यन्त, बोलकर करे।

—०—

अथ श्रीमद् यशोविजयजी, देवचन्द्रजी ज्ञानविमलजी, लालचन्द्रजी आदि चार महापुरुषों द्वारा विरचित

॥ नव पद-बड़ी पूजा ॥

॥ प्रथमा अरिहन्त पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

परम मंत्र प्रणमी करी, तास धरी उर ध्यान ।
अरिहन्त पद पूजा करो, निज-निज शक्ति प्रमाण ॥१॥

॥ काव्यम् ॥ उपजाति वृत्तम् ॥

उप्पण्ण सण्णाण महोमयाणं, सप्पाडिहेरासण संठियाणं ।
सद्देसणाणंदिय सज्जणाणं, णमो-णमो होउ सया जिणाणं ।१

॥ भुजङ्ग प्रयात वृत्तम ॥

नमोऽनंतसंत प्रमोद प्रदानं,
प्रधानाय भव्यात्मने भास्वताय ।
थया जेहना ध्यानथी सौख्यभाजा,
सदासिद्धचक्रायश्रीपालराजा ॥१॥
करयाकर्म दुर्मर्म चकचूर जेणें,
भलांभव्य नवपद ध्यानेन तेणे ।

करी पूजना भव्य भावें त्रिकालें,
सदा वासियो आतमा तेण काले ॥२॥
जिके तीर्थंकर कर्म उदये करीने,
दिये देशना भव्यने हित करीने।
सदा आठ महा पाडिहारे समेता,
सुरेशें नरेशें स्तव्या ब्रह्म पुत्ता ॥३॥
कस्या घातिया कर्म चारे अलग्गा,
भवोपग्रही चार जे छे विलग्गा।
जगत पंच कल्याणके सौख्य पामे,
नमोतेहतीर्थंकरामोक्ष गामे ॥४॥

॥ ढाल देशी उल्लालानी ॥

तीरथपति अरिहा नमुं, धर्मधुरधर धीरोजी।
देशना अमृतवरसता, निज वीरज वड वीरोजी ॥१॥

॥ उल्लालो ॥

वर अखय निर्मल ज्ञान भासन, सर्व भाव प्रकाशता।
निज शुद्धश्रद्धा आत्मभावे, चरणथिरता वासता॥
जिन नाम कर्म प्रभाव अतिशय, प्रातिहारज शोभता।
जग-जन्तु करुणावंत भगवंत, भविक जनने थोभता॥

॥ ढाल श्रीपालना रासनी ॥

॥ श्री सीमन्धर साहिब आगे० ॥ एदेशी ॥ अन्य कई राग-
रागनियों में पूजा की ढालें गाई जा सकती है।

तीजे भव वर थानक तपकरी, जेणे बाँध्युं जिन नाम।
चउसठ इन्द्रे पूजित जे जिन, कीजे तास प्रणाम रे भविका।
सिद्धचक्र पद वन्दो, जेम चिरकाले नन्दो, रे भविका।
उपशम रसनो कंदो, रे भविका, रत्नत्रयीनो वृन्दो रे भविका
सेवे सुर नर इन्दो, रे भविका सिद्धचक्रपद वन्दो ॥टेर १॥

जेहने होय कल्याणक दिवसे, नरके पिण उजवालुं।
सकल अधिक गुण अतिशय धारी, ते जिन नमी अघ टालूँ।
रे भविका, सिद्धचक्रपद वन्दो ॥२॥

जे तिहुंनाण समग्ग उपन्ना, भोग करम क्षीण जाणी।
लेई दीक्षा शिक्षा दिये जगने, ते नमिये जिननाणी।
रे भविका, सिद्धचक्रपद वन्दो ॥३॥

महागोप महामाहण कहिये, निर्यामक सत्थवाह।
उपमा एहवी जेहने छाजे, ते जिन नमिये उत्साह।
रे भविका, सिद्धचक्रपद वन्दो ॥४॥

आठ प्रातिहारज जसु छाजे, पैंत्रीस गुणयुत वाणी।
जे प्रतिबोध करे जग जनने, ते जिन नमिये प्राणी।
रे भविका, सिद्धचक्रपद वन्दो ॥५॥

॥ ढाल ॥

अरिहन्त पद ध्याता थको, दव्वहगुण पज्जाये रे।
भेद छेद करी आतमा, अरिहन्त रूपी थाये रे ॥१॥
वीर जिणेसर उपदिशे, साभलजो चितलाई रे।
आतमा ध्याने आतमा, ऋद्धि मले सविआई रे ॥२॥
वीर जिणेसर उपदेशे।

॥ अरिहन्त पद काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् १ ॥

उप्पन्न सन्नाणमहोमयाणं, सप्पाडिहेराइ समप्पहाणे।
सन्देहसंदोहरयंहरंते, झाएहनिच्चंपि जिणेरिहन्ते ॥१॥

॥ काव्यम् द्रुतविलम्बित वृत्तम् २ ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगतिजन्तुमहोदयकारणम्।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाः स्नपयामि विशुद्धये।२

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हंपरमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये,
जन्म - जरा - मृत्यु निवारणाय, श्रीमदर्हते, पंचामृतं,

चन्दनं, पुष्पं, धूपं, दीप-अक्षतान्, नैवेद्यं फलं-वस्त्रं-वासं यजामहे स्वाहा ॥१॥

॥ द्वितीया श्रीसिद्धपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दूजी पूजा सिद्ध की, कीजे दिल खुशियाल ।
अशुभ करम दूरे टले, फले मनोरथ माल ॥१॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

सिद्धाण माणंद रमा लयालं,
णमो - णमोऽणंत चउक्कयाणं ।
सम्मग्ग कम्मक्खय कारगाणं,
जम्मं जरा दुक्ख निवारगाणं ॥१॥

॥ भुजंग प्रयातवृत्तम् ॥

निजानादि कर्माष्टके क्षय करीने,
जरा जन्म मरणादि दूरे हरीने ।
स्थिता सर्वलोकाग्र भागे विशुद्धा,
चिदानन्द रूपा स्वरूपे प्रसिद्धा ॥१॥
निजानन्द बोधादि युक्त प्रदेशा,
निराबाधनानिर्वृता जे अलेशा ।

निराकार साकार भावे महंता,
भजो ते प्रमोदे सदासिद्ध सन्ता ॥२॥
करी आठ कर्म क्षय पार पाम्या,
जरा जन्म मरणादि भय जेणे वाम्या।
निरावरण जे आत्म रूपे प्रसिद्धा,
थया पार पामी सदा सिद्धबुद्धा ॥३॥
त्रिभागो न देहावगाहात्मदेशा,
रह्या ज्ञानमय जातिवर्णादि लेशा।
सदानन्द सौख्याश्रिताज्योतिरूपा,
अनाबाध अपुनर्भवादि स्वरूपा ॥४॥

॥ ढाल उल्लालानी देशी ॥

सकल करम मल क्षय करी, पूरण शुद्ध स्वरूपोजी।
अबाबाध प्रभुतामयी, आतम संपत भूपोजी ॥१॥

॥ उल्लालो ॥

जे भूप आतम सहज संपति, शक्ति व्यक्ति पणे करी।
स्व द्रव्य क्षेत्र स्वकाल भावे, गुण अनन्ता आदरी।
स्वस्वभाव गुण पर्याय परिणति, सिद्ध साधन परभणी।
मुनिराज मानस हंस समवड, नमो सिद्ध महागुणी ॥२॥

॥ ढाल श्रीपालना रासनी देशी ॥

समय पएसंतर अणफरसी, चरम तिभाग विशेष।
अवगाहन लही जे शिव पहोता, सिद्ध नमो ते अशेष रे।
॥ भविका० १॥

पूर्व प्रयोग ने गति परिणामे, बंधन छेद असंग।
समय एक ऊरध गति जेहनी, ते सिध प्रणमो रंग रे।
॥ भविका० २ ॥

निर्मल सिद्धशिलानी उपरे, जोयण एक लोकंत।
सादि अनंत तिहाँ थिति जेहनी, ते सिद्ध प्रणमो संतरे।
॥ भविका० ३ ॥

जाणे पिण न शके कही पुरगुण, प्राकृत तिम गुण जास।
ओपमा विण नाणी भव मांहे, ते सिद्ध दियो उल्लास रे।
॥ भविका० ४॥

ज्योतिसुं ज्योति मली जस अनुपम, विरमी सकल उपाधि।
आतमराम रमापति समरो, ते सिद्ध सहज समाधि रे।
॥ भविका० ५ ॥

॥ ढाल ॥

रूपातीत स्वभाव जे, केवल दंसण नाणी रे।
ते ध्याता निज आतमा, होये सिद्ध गुण खाणी रे ॥१॥
॥ वीर जिनेसर उपदेशे ॥

॥ श्री सिद्धपद काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

दुट्ठट्ठकम्मावरण'प्पमुक्के, अनंतनाणाइ सिरि चउक्के।
सम्मग्ग लोयग्ग पयप्प सिद्धे, झाएह निच्चंपि समत्त सिद्धे।

॥ काव्यम् द्रुतविलंबित वृत्तम् ॥

विमल केवल भासन भास्कर,
जगति जन्तु महोदय कारणम्।
जिनवर बहुमान जलौघतः,
शुचि मनाः स्नपयामि विशुद्धये ॥२॥

मत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीसिद्धाय, पंचामृतं-चन्दनं-पुष्पं-धूपं-दीपं-अक्षतान् - नैवेद्यं - फलं - वस्त्रं-वासं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीया श्रीआचार्यपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

हिव आचारिज पद तणी, पूजा करो विशेष ।
मोह तिमिर दूरे हरे, सूझे भाव अशेष ॥१॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

सूरीण दूरी कय कुग्गहाणं, णमो णमो सूर समप्पहाणं ।
सद्देसणादाण समायराणं, अखंड छत्तीस गुणायराणं ॥१॥

॥ भुजंग प्रयातवृत्तम् ॥

नमूं सूरि राजा सदा तत्व ताजा,
जिनेन्द्रागमे प्रौढ़ साम्राज्य भाजा ।
षड्वर्ग वर्गित गुणेशोभमाना,
पंचाचारने पालवे सावधाना ॥१॥
जिके पंच आचार पाले सुभावे,
अनित्यादि सद्भावना नित्य भावे ।
जिनेन्द्रागमे ज्ञान दाने सुरत्ता,
बहुभव्य में जे रहे अप्रमत्ता ॥ २॥
छतीसे गुणे दीप्यमाना गणेशा,
सदा शासनाधारभूता सुलेशा ।

बहुभव्यलोका सुमार्गेनयंता,
हुजोह्यरि मुख्या सदा तेजवन्ता ॥३॥
भवि प्राणीने देशना देश काले,
सदा अप्रमत्ता यथा सूत्र आले ॥
जिके शासनाधार दिग्दन्तिकल्पा,
जगत्ते चिरंजीवजो शुद्ध जल्पा ॥४॥

॥ ढाल उल्लालानी देशी ॥

आचारज मुनिपति गणी, गुण छत्तीसे धामोजी ॥
चिदानन्द रस स्वादता, परभावे निःकामोजी ।आचा० १॥

॥ उल्लालो ॥

निःकाम निर्मल शुद्ध चिद्घन, साध्य निजनिरधार थी ।
निज ज्ञान दर्शन चरणवीरज, साधना व्यापार थी ॥
भवि जीवबोधक तत्वशोधक, सयल गुण सपत्ति धरा ।
संवर समाधि गत उपाधि, दुविध तप गुण आगरा ॥२॥

॥ पूजा-ढाल ॥ श्रीपालनारासनी-देशी ॥
पंच आचार जे सुधा पाले, मारग भाखे साचो ॥
ते आचारज नमिये तेहशुं, प्रेम करीने जाचो रे ।भविका० १

वर छत्रीश गुणे करी सोहे, युगप्रधान जग मोहे ॥
जग बोहे ना रहे खिण कोहे, सूरि नमूँ ते जोहेरे ॥भ०२॥
नित्य अप्रमत्त धर्म उवएसे, नहिं विकथा न कषाय ॥
जेहने ते आचारजनमिये, अकलुष अमल अमाय रे ॥भ०३॥
जे दिये सारण वारण चोयण, पडिचोयन वली जनने ॥
पटधारी गच्छथंम आचारज, ते मान्या मुनिमनने रे ।भ०४
अत्थमिये जिन सूरज केवल, चंदे ते जग दीवो ॥
भुवन पदारथ प्रकटन पटुते, आचारज जिरंजीवो रे ।भ०५।

॥ ढाल ॥

ध्याता आचारज भला, महामंत्र शुभ ध्यानी रे ।
पंच प्रस्थाने आतमा, आचारज होय प्राणी रे ॥ वीर० ॥

॥ श्री आचार्यपद काव्यम् ॥

णं तं सुहं देइ पियाणमाया, जेदिंति जीवाणिह सूरीस पाथा।
तुम्हाहुते चेव सया सहेह, जंमुक्ख सुक्खाइं लहुं लहेह ॥१

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगति जंतु महोदय कारणम् ।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाः स्नपयामि विशुद्धये ।२

मंत्र : ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्रीआचार्यपदे, पंचामृतं, चंदन-पुष्पं-धूपं-दीपं अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं-वास यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ चतुर्थी उपाध्यायपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

गुण अनेक जग जेहना, सुन्दर शोभित गात्र ।
उवज्झाय पद अरचिये, अनुभव रसनो पात्र ॥ १ ॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

सुत्तत्थवित्थारण तप्पराण, णमो णमो वायगकुञ्जराणं ।
गणस्स संधारण सायराण, सव्वप्पणा वज्जिय मच्छराणं ।१

॥ भुजंगप्रयात वृत्तम् ॥

महाग्रन्थ सिद्धान्त शुद्धे करीने,
पढावे सुशिष्या अनुग्रह धरीने ॥
करे पूजना लोक मध्येत्वदीया,
स्फुरती दृशी जास शक्ति स्वकीया ॥१॥
गग सार शुद्धे सुदर्पे करंता,
मुनिवर्ग मध्ये प्रमादो हरंता ।

पचीशे गुणे युक्त देहा सुधुर्या,
सदा वंदिये ते उपाध्याय पूर्या ॥२॥
नहीं सूरिपण सूरि गुणने सुहाया,
नमुं वाचका त्यक्तमदमोह माया ।
वली द्वादशांगादि सूत्रार्थ दाने,
जिके सावधाना निरुद्धाभिमाने ॥३॥
धरे पंचनेवर्ग वर्गित गुणौघा,
प्रवादि द्विपोच्छेदने तुल्य सिंघा ॥
गुणीगच्छ संधारणे स्तंभभूता,
उपाध्याय ते वंदिये चित् प्रभूता ॥४॥

॥ ढाल उल्लालानी देशी ॥

खंति जुआ मुत्ति जुआ, अज्जव मद्दव जुत्ताजी ।
सच्चं सोयं अकिंचरणा, तव संजम गुण रत्ताजी ॥ १ ॥

॥ उलालो ॥

जे रम्या ब्रह्म सुगुत्ति गुत्ता, सुमति सुमता श्रुतधरा ।
स्याद्वादवादे तत्ववादक, आत्म पर भविजन करा ॥
भव भीरु साधन धीर शासन, वहन धोरी मुनिवरा ।
सिद्धांत वायण दान समरथ, नमो पाठक पद धरा ॥२॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालनारासनी देशी ॥

द्वादश अंग सज्झाय करे जे, पारग धारग तास ।
सूत्र अर्थ विस्तार रसिकते, नमो उवझाय उल्लास रे ।भ० १
अर्थ सूत्र ने दान विभागे, आचारज उवझाय ।
भव त्रीजे जे लहे शिवसपद, नमिये ते सुपसाय रे ।भ० २
मूरख शिष्य निपाई जे प्रभु, पाहाणने पल्लव आणे ।
ते उवझाय सकल जन पूजित, सूत्र अर्थ सवि जाणेरे ।भ० ३
राजकुँवर सरिखा गणचिंतक, आचारज पद योग ।
जे उवझाय सदा ते नमतां, नावे भवभय सोगरे ॥भ० ४॥
बावना चंदन रससमवयणे, अहित ताप सवि टाले ।
ते उवझाय नमीजे जे वली, जिनशासन अजुवाले रे ।भ० ५

॥ सिद्ध चक्र पद वदो ॥

॥ ढाल ॥

तप सज्झाये रत सदा, द्वादश अंगनो ध्याता रे ।
उपाध्याय ते आतमा, जगबंधव जग भ्राता रे ॥

॥ वीर जिनेसर उपदिसे० ॥५॥

॥ श्री उपाध्यायपद काव्यम् ॥

सुत्तत्थ संवेग मय सुएण, संनीर खीरायम विस्सुएण ।
पीणतिं जेते उवज्झायराए, झाएह णिच्चंपि कयप्प साए ॥१

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगतिजन्तु महोदय कारणम् ।
जिनवरं बहुमान जलौघतः,शुचि मनाः स्नपयामि विशुद्धये॥२

मंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म- जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीउपाध्यायपदे, पंचामृतं - चन्दनं - पुष्पं-धूपं-दीपं-अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं-वासं यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ पंचमी श्री मुनि पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मोक्ष मारग साधन भणी, सावधान थया जेह ।
ते मुनिवर पद वंदता, निर्मलथाये देह ॥१॥

॥ काव्यम् ॥ इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

साहूण संसाहिअ संजमाणं, नमो नमो सुद्ध दया दमाणं ।
तिगुत्ति गुत्ताण समाहियाणं, मुणीण माणंद पयट्ठियाणं ।१।

॥ भुजंग प्रयात वृत्तम् ॥

जिके दर्शन ज्ञान चारित्र रत्ने,
करी मोक्ष साधे प्रधान प्रयत्ने ।

सुमत्ती गुपत्ती धरे सावधाना,
शुभाचार पाले हरे मोह माना ॥१॥
विवर्जे विकथा प्रमादादि दोषा,
जितेन्द्रियपणं जे महाज्ञान कोशा ।
शुभ ध्यान ध्यावे गणोघे समिद्धा,
नमो ते सदा सर्व साधु प्रसिद्धा ॥२॥
करे सेवना सूरिवायग गणीनी,
करूँ वर्णना तेहनीशी मुणिनी ।
समेता सदा पच समितें त्रिगुप्ता,
त्रिगुप्ते नहीं काम भोगेपुलिप्ता ॥३॥
वली बाह्य अभ्यन्तर ग्रंथिटाली,
होये मुक्तिने योग्य चारित्र पाली ।
शुभाष्टाग योगे रमे चित्तवाली,
नमु साधुने तेह निज पाप टाली ॥४॥

॥ ढाल ॥ उलालानी देशी ॥

सकल विषय विष वारिने, निःकामी निःसगीजी ।
भव दव ताप समावता, आतम साधन रगी जी ॥१॥

॥ उल्लालो ॥

जे रम्या शुद्ध स्वरूप रमणे, देह निर्मम निर्मदा ।
काउस्सग्ग मुद्रा धीर आसन, ध्यान अभ्यासी सदा ॥
तप तेज दीपे कर्म झोपे, नैव छीपे पर भणी ।
मुनिराज करुणासिंधु त्रिभुवन, बंधु प्रणमुं हित भणी ॥२॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालनारासनी देशी ॥

जिम तरुफूले भमरो बेसे, पीडा तस न उपावे ॥
लेई रस आतम संतोषे, तिम मुनि गोचरी जावेरे ।भ०२१।
पंचेंद्रीने कषाय निरुंधे, षटकायक प्रतिपाल ॥
संयम सतर प्रकारे आराधे, वंदूं तेह दयाल रे ॥भ० २२॥
अढार सहस शीलांगना धोरी, अचल आचार चरित्र ।
मुनि महंत जयणा युत वंदी, कीजे जनम पवित्र रे ।भ०२३
नव विध ब्रह्म गुप्ति जे पाले, बारे विध तप शूरा ।
एहवा मुनि नमिये जो प्रगटे, पूरव पुण्य अंकुरा रे ।भ०२४
सोना तणी परे परीक्षा दीसे, दिन-दिन चढ़ते वाने ।
संजम खप करता मुनि नमिये, देश काल अनुमाने रे ।भ०२५

॥ ढाल ॥

अप्रमत्त जे नित रहे, नवि हरखे नवि सोचे रे ।
साधु सुधा ते आतमा, स्युं मूंडे स्युं लोचे रे ॥ वीर० ६॥

॥ श्री साधुपद काव्यम् ॥

संतेय दंते य सुगुत्ति गुत्ते, मुत्ते पसंते गुण जोग जुत्ते।
गयप्प माए हय मोह माए, झाएह निच्चं मुणिराय पाए।५

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगति जंतु महोदय कारणम्।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाः स्नपयामि विशुद्धये।५

मंत्र : ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्रीसाधुपदे पंचामृतं, चंदन-पुष्पं-धूपं-दीपं अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं-वास यजामहे स्वाहा।

॥ अथ षष्ठी श्रीसम्यग् दर्शनपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जिनवर भाषित शुद्ध नय, तत्त्व तणी परतीत।
ते सम्यक दर्शन सदा, आदरिये शुभ रीत॥ १ ॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

जिणुत्त तत्ते रुइ लक्खणस्स, नमो नमो निम्मल दंसणस्स।
मिच्छत्त नासाइ समुग्गमस्स, मूलस्स सद्धम्म महादुमस्स।१

॥ भुजंग प्रयात वृत्तम् ॥

अनंतानुवंधी क्षयादि प्रकारे,
महा मोह मिथ्यात्वने जेह वारे ।
इगध्यादि भेदें करी वर्णवीजें,
सडसट्ठि भेदें वली जे थुणी जें ॥ १॥

जिनेंद्रोक्त तत्त्वार्थ श्रद्धान रूपो,
गुणा सर्वं मध्ये प्रवर्त्तें अनूपो ।
विना जेण नाणं चरित्रं न शुद्धं,
सुहं दंसणं तं नमामो विशुद्धं ॥ २ ॥

विपर्या सहउ वासना रूप मिथ्या,
टले जे अनादि अछे जे कुपथ्या ।
जिनोक्तें होइ सहज थी शुद्ध ध्यानं,
कहीये दर्शनं तेह परमं निधानं ॥ ३ ॥

विना जेहथी ज्ञान मज्ञान रूपं,
चरित्रं विचित्रं भवारण्य कूपं ।
प्रकृति सातने उपशमे क्षय ते होवे,
तिहां आपरूपे सदा आप जोवे ॥ ४ ॥

॥ ढाल उलालानी देशी ॥

सम्यग दर्शन गुण नमो, तत्त्व प्रतीत स्वरूपोजी ।
जसु निरधार स्वभाव छे, चेतन गुण जे अरूपोजी ॥१॥

॥ उलालो ॥

ज अनुप श्रद्धा धर्म प्रगटे, सयल पर ईहा टले ।
निज शुद्ध सत्ता भाव प्रगटे, अनुभव करण रुचिता उछले ॥
बहुमान परिणति वस्तु तत्त्वे, अहव तसु कारण पणे ।
निज साध्य दृष्टे सर्वकरणो, तत्त्वता संपति गणे ॥ २ ॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालनारासनी देशी ॥

शुद्ध देवगुरु धर्म परीक्षा, सद्दहणा परिणाम ।
जेह पामी जे जेह नमी जे, सम्यग दर्शन नाम रे ।भ०२६
मल उपशम क्षय उपशम क्षय थी, जे होय त्रिविध अभंग ।
सम्यग्दर्शन तेह नमीजे, जिन धर्मे दृढ रंग रे ।भ० २७
पंच वार उपशमिय लहीजे, क्षय उपशमिय असंख ।
एकवार क्षायिक ते समकित, दर्शन नमिये असंख रे । भ०२८
जे विण नाण प्रमाण न होवे, चारित्र तरु नवि फलियो ।
सुखनिर्वाण न जेविण लहिये, समकित दर्शन बलियोरे ।भ०२९
सडसठ बोले जे अलकरियुं, ज्ञान चरित्र नुं मूल ।
समकित दर्शन ते नित प्रणमु, शिवपथनुं अनुकूल रे ।भ०३०

॥ ढाल ॥

शम संवेगादिक गुणा, खय उपशम जे आवे रे।
दर्शन तेहिज आतमा, शुंहोयनाम धरावे रे ॥ वीर० ७ ॥

॥ श्री सम्यग्दर्शन पद काव्यम् ॥

जं दव्व छक्काई सुसद्दहाणं, तं दंसणं सव्वगुणप्पहाणं।
कुग्गाह-वाहीउवयन्ति जेणं, जहा विसुद्धेण रसायणेणं ॥६॥

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगतिजन्तुमहोदयकारणम्।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाः स्नपयामि विशुद्धये।६

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञानशक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्रीसम्यग्दर्शनपदे, पंचामृतं, चन्दनं, पुष्पं, धूपं, दीपं-अक्षतान्, नैवेद्यं फलं-वस्त्रं-वासं यजामहे स्वाहा।

॥ अथ सप्तमी श्रीसम्यग् ज्ञान पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सप्तम पद श्री ज्ञाननो, सिद्ध चक्र तप मांह।
आराधीजे शुभ मने, दिन-दिन अधिक उच्छाह ॥१॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

अन्नाण संमोह तमो हरस्स, नमो नमो नाण दिवायरस्स ।
पंचप्पयारस्सु वगारगस्स, सत्ताण सव्वत्थपयासगस्स ॥१॥

॥ भुजंग प्रयात वृत्तम् ॥

हुवे जेहथी सर्व अज्ञान रोधो,
जिनाधीश्वर प्रोक्त अर्थावबोधो ।
मति आदि पंच प्रकार प्रसिद्धो,
जगद् भासने सर्व देवाविरुद्धो ॥१॥

यदीय प्रभावे सुभक्षं अभक्षं,
सुपेयं अपेयं सुकृत्य अकृत्यं ।
जिणे जाणिये लोक मध्ये सुनाणं,
सदा ते विशुद्ध तदेव प्रमाणं ॥२॥

होये जेहथी ज्ञान शुद्ध प्रबोधे,
यथा वर्ण नासे विचित्रावबोधे ।
तेणे जाणिये वस्तु षड् द्रव्य भावा,
न हुवे वितत्था निजेच्छास्वभावा ॥३॥

होइ पंच मत्यादि सुज्ञान भेदे,
गुरु पास थी योग्यता तेह वेदे ।

वली ज्ञेय हेय उपादेय रूपे,
लहे चित्तमां जेम ध्याने प्रदीपे ॥४॥

॥ ढाल उलालानी देशी ॥

भव्य ननो गुण ज्ञानने, स्वपर प्रकाशक भावे जी ।
पर्याय धर्म अनंतता, भेदाभेद स्वभावे जी ॥ १ ॥

॥ उलालो ॥

जे मुख्य परिणति सकल ज्ञायक, बोधभाव विलासता ।
मति आदि पञ्च प्रकार निर्मल, सिद्धि साधन लंच्छता ॥१
स्याद्वाद संगी तत्त्वरंगी, प्रथम भेदाभेदता ।
सविकल्पने अविकल्प वस्तु, सकल संशय छेदता ॥ २ ॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालना रासनो देशी ॥

भक्ष अभक्ष न जे विण लहिये, पेय अपेय विचार ।
कृत्य अकृत्य न जे विण लहिये, ज्ञान ते सकल आधार रे ।
॥ भविका० ३१ ॥
प्रथम ज्ञान ने पछी अहिंसा, श्री सिद्धान्ते भाख्युं ।
ज्ञान ने वंदो ज्ञान मनिन्दो, ज्ञानीए शिव सुख चाख्युं रे ।
॥ भविका० ३२ ॥

सकल क्रिया नुं मूल ते श्रद्धा, तेहनुं मूल जे कहिये।
तेह ज्ञान नित नित वंदी जे ते विण कहो केम रहिये रे।
॥ भविका० ३३ ॥

पांच ज्ञान माहिं जेह सदागम, स्वपर प्रकाशक तेह।
दीपक परे त्रिभुवन उपकारी, वली जेम रविशशि मेह रे।
॥ भविका० ३४ ॥

लोक ऊरध अध तिर्यग् ज्योतिष, वैमानिक ने सिद्धि।
लोकालोक प्रगट सवि जेह थी, तेह ज्ञान मुझ शुद्धि रे।
॥ भविका० ३५ ॥

॥ ढाल ॥

ज्ञानावरणी जे कर्म छे, क्षय उपशम तसु थाय रे।
तो हुवे तेहीज आतमा, ज्ञान अबोधता जाय रे। वीर० ८

॥ श्री सम्यग् ज्ञान पद काव्यम् ॥

नाणं पहाण जय सिद्धचक्क, तत्तावबोधिमय पसिद्ध।
धरेह चित्ता वसहे फुरंत, मणिक्क दिन्न तमो हरंतं ॥ ७ ॥

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्कर, जगति जंतु महोदय कारणं।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाःस्नपयामि विशुद्धये ।७

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणय, श्रीसम्यग् ज्ञानपदे, पंचामृतं-चंदनं-पुष्पं-धूपं-दीपं-अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं- वासं यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ अष्टमी श्री सम्यग् चारित्र पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अष्टम पद चारित्र नो, पूजो धरी उमेद ।
पूजत अनुभव रस मिले, पातिक होय उच्छेद ॥१॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्रावृत्तम् ॥

आराहियाखंडिअसक्किअस्स, नमो नमो संजम वीरिअस्स ।
सब्भावणासंगविवड्ढिअस्स, निव्वाणदाणाइ समुज्जयस्स ॥१॥

॥ भुजंग प्रयातवृत्तम् ॥

फले जेह सम्पूर्ण थी तत्कालं,
गुणाणंपि सर्वात्म भावे विशालं ।
जिणे आदर्यो जे प्रयत्ने करीने,
दीयो लोकने जे अनुग्रह धरीने ॥१॥
हुवे जेहथी रंक लोकोपि पूज्यो,
गुण श्रेणिथी दीपतो जेम सूर्यो ।

स्वकीये स्वभेदे करी जे विचित्रं,
जयो ते सदा लोक मध्ये चरित्रं ॥२॥
वली ज्ञान फल चरण धरीये सुरंगे,
निराशंसता द्वार रोध प्रसंगे।
भवांभोधि संतारणे यान तुल्यं,
धरूँ तेह चारित्र अप्राप्त मूल्यं ॥३॥
होये जास महिमा थकी रंक राजा,
वली द्वादशांगी भणी होय ताजा।
वली पाप रूपोपि निःपाप थावे,
थई सिद्धते कर्मने पार आवे ॥४॥

॥ ढाल उल्लालानी देशी ॥

चारित्र गुण वली वली नमो, तत्त्व रमण जसु मूलोजी।
पर रमणीय पणु टले, सकल सिद्ध अनुकूलोजी ॥ १ ॥

॥ उल्लालो ॥

प्रतिकूल आश्रव त्याग संयम, तत्त्वथिरता दममयी।
शुचि परम खंती मुत्ति दशपद, पञ्च सवर उपचइ ॥
सामायिकादिक भेद धर्मे, यथा ख्याते पूर्णता।
अकषाय अकलुष अमल उज्वल, काम कश्मल चूर्णता ॥२॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालनारासनी देशी ॥

देश विरति ने सर्व विरति जे, गृहीयति ने अभिराम ।
ते चारित्र जगत जयवंतुं, कीजे तास प्रणाम रे ॥भ० ३६॥
तृण परे जे षट् खण्ड सुख छंडी, चक्रवर्तिपण वरियो ।
ते चारित्र अखय सुखकारण, तेमें मन माहें धरियोरे ।भ०३७
हुआ रंकपण जेह आदरी, पूजित इंद नरिंदें ।
अशरण शरण चरण ते वंदूं, पूयु ज्ञान आनन्दे रे ।भ०३८
बार मास पर्याये जेहने, अनुत्तर सुख अतिक्रमिये ।
शुक्ल शुक्ल अभिजात्यते उपरे,ते चारित्र ने नमियेरे ।भ०३९
चयते आठ करमनो संचय, रिक्त करे जे तेह ।
चारित्र नाम निरुक्ते भाष्युं, ते वंदूं गुण गेह रे ।भ० ४०

॥ ढाल ॥

जाण चारित्र ते आतमा, निज स्वभावमां रमतो रे ।
लेश्या शुद्ध अलंकर्यो, मोह वने नवि भमतो रे ।वीर० ९।

॥ श्री चारित्र पद काव्यम् ॥

सुसंवरं मोह निरोधसारं, पञ्चप्पयारं विगयाइयारं ।
मूलोत्तराणेग गुणं पवित्तं, पालेहनिच्चंपिट्ठुसच्चरित्तं ॥९॥

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगतिजंतु महोदय कारणम् ।
जिनवरं बहुमान जलौघतः, शुचिमनाःस्नपयामि विशुद्धये ।८

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय, श्रीचारित्रपदे, पचामृत-चन्दनं - पुष्प - धूपं - दीप-अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं-वास यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ नवमी श्री तप पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

कर्म काष्ठ प्रति जालवा, परतिख अगनि समान ।
तप पद पूजो भवि सदा, निर्मल धरिये ध्यान ॥ १ ॥

॥ काव्यम् इन्द्रवज्राधृत्तम् ॥

कम्मद्दुमोन्मूलण कुंजरस्स, नमो नमो तिव्व तवोयरस्स ।
अणेगलद्धीण निबंधणस्स, दुसज्ज अत्थाणप साहणस्स ॥१॥

॥ मालिनीवृत्तम् ॥

इय नव पय सिद्धं, लद्धि विज्जा समिद्धं ।
पयडिय सरवग्ग, ह्रीं तिरेहास मग्ग ॥
दिसिवइसुरसारं, खोणि पीढा वयारं ।
तिजय विजय चक्कं, सिद्धचक्कं नमामि ॥१॥

॥ भुजंगप्रयात वृत्तम् ॥

विधे जे कर्यो आतमा उज्जवाले,
घणाकाल नो कर्म राशि प्रजाले।
अनेका सुलद्धि लहे यत्प्रभावे,
क्षमा युक्त ए साधु महानन्द पावे ॥१॥
वली बाह्य अभ्यंतरे भेद भिन्नं,
जिनेन्द्रागमे वर्णव्युं जे अछिन्नं।
अनासं स्वभावे तिलोके सुनंद्यं,
नमूं ते प्रमोदे तपः पद मनिंद्यं ॥२॥

॥ मालिनी वृत्तम् ॥

इति जिनवर वंद्यं भक्तिता ये स्तुवंति।
परम पद निधानं, मानसे संस्मरंति॥
पर भव इहवा श्रीपालवन्मानवानां,
प्रभवति किलतेषां चारु कल्याण लक्ष्मी ॥३॥

॥ भुजङ्ग प्रयातवृत्तम् ॥

त्रिकालिक पणे कर्म कषाय टाले,
निकाचित पणे बांधियांतेह बाले।
कह्युं तेह तप बाह्य अन्तर दुभेदे,
क्षमा युक्त निर्हेतु दुर्ध्यान छेदे ॥४॥

होये जास महिमा थकी लब्धि सिद्धि,
अवाँछक पणे कर्म आवरण शुद्धि।
तपो तेह तप जे महानन्द हेते,
होये सिद्धि सीमंतनी जिम सकेते ॥५॥
इत्या नव पद ध्यान ने जेह ध्यावे,
सदानन्द चिद्रूपता तेह पावे।
वली ज्ञान विमलादि गुणरत्न धामा,
नमुं ते सदा सिद्धचक्र प्रधाना ॥६॥

॥ मालिनी वृत्तम् ॥

इम नवपद ध्यावे, परम आनन्द पावे।
नव भव शिव जावे, देव नर भव पावे॥
ज्ञान विमल गुण गावे, सिद्धचक्र प्रभावे।
सवि दुरित शमावे, विश्व जयकार पावे॥

॥ ढाल उलालानी देशी ॥

इच्छा रोधन तप नमो, बाह्य अभ्यतर भेदे जी।
आतम सत्ता एकता, पर परिणति उच्छेदे जी ॥१॥

॥ उलालो ॥

उच्छेद कर्म अनादिसंतति, जेह सिद्ध पणु वरे।
शुभ योग संग आहार टाली, भाव अक्रियता करे॥

अंतर मुहूरत तत्त्व साधे, सर्व संवरता करी।
निज आत्मसत्ता प्रगट भावे, करो तप गुण आदरी ॥२॥

॥ ढाल ॥

इम नव पद गुण मंडलं, चउनिक्षेप प्रमाणे जी।
सात नये जे आदरे, सम्यग् ज्ञाने जाणे जी ॥३॥

॥ उलालो ॥

निर्द्धार सेती गुणे गुणनो, करे जे बहु मान ए।
तसु करण इहा तत्त्व रमणे, थाय निर्मल ध्यान ए॥
इम शुद्ध सत्ता भल्यो चेतन, सकल सिद्धि अनुसरे।
अक्षय अनन्त महंत चिद्घन, परम आनंदता वरे ॥ ४ ॥

॥ अथ कलश ॥

इय सयल सुखकर गुण पुरंदर, सिद्ध चक्र पदावली।
सवि लद्धि विज्जा सिद्धि मंदिर, भविक पूजो मन रली॥
उवज्झायवर "श्रीराजसागर", ज्ञान-धर्म सुराजता।
गुरु "दीपचन्द" सुचरण सेवक, "देवचन्द्र" सुशोभता ॥१॥

॥ पूजा ढाल श्रीपालनारासनी देशी ॥

जाणंतां त्रिहुं ज्ञाने संयुत, ते भव मुक्ति जिणंद।
जेह आदरे कर्म खपेवा, ते तप सुर तरु कंद रे ॥भ० ४१॥

कर्म निकाचित पण क्षय जाये, क्षमा सहित जे करता।
ते तप नमियें जेह दीपावे, जिन शासन उजमंता रे।भ०४२।
आमोसही पमुहा बहु लब्धि, होवे जास प्रभावें।
अष्ट महासिद्धि नवनिधि प्रगटे,नमियें ते तप भावे रे।भ०४३।
फल शिवसुख मोहडु सुर नर वर, संपति जेहनु फूल।
ते तप सुर तरु सरिखो वंदूं, शम मकरंद अमूल रे।भ०४४।
सर्व मंगल माहिं पहेलुं मगल, वर्णवियुं जे ग्रंथे।
ते तप पद त्रिकरण नितनमिये, वर सहाय शिवपंथे रे।भ०४५।
इम नव पद थुण तो तिहां लीनो, हुओ तन्मय श्रीपाल।
सुजस विलासे चौथे खडे, एह इग्यारमी ढाल रे।भ०४६।
॥ सिद्धचक्र पद वन्दो० ॥

॥ ढाल ॥

इच्छा रोंधन सवरी, परिणति समता योगे रे।
तप ते एहिज आतमा, वर्ते निज गुण भोगे रे॥वीर०१०॥
आगम नो आगम तणो, भाव ते जाणो साचो रे।
आतम भावे थिर हुओ, पर भावे मत राचो रे।।वीर०११॥
अष्ट सकल समृद्धिनी, घट माहिं ऋद्धि दाखी रे।
तिम नरपद ऋद्धिजाणजो, आतमराम छे साखीरे॥वीर०१२॥

योग असंख्य छे जिन कह्या, नव पद मुख्य ते जाणो रे।
एह तणे अवलंबने, आतम ध्यान प्रमाणो रे ॥वीर०१३
ढाल बारमी एहवी, चौथे खंडे पूरी रे।
वाणी वाचक जस तणी, कोई रही न अधूरी रे ॥वीर०१४
॥ वीर जिनेसर उपदिसे०॥

॥ श्री तप पद काव्यम् ॥

बज्झं तहाब्भिन्तर भेयमेयं, कषाय दुज्जेय कुकम्म भेयं।
दुक्खक्खयुत्थे कयपावनासं, तवेह दाहागमयं निरासं ॥६॥

॥ काव्यम् ॥

विमल केवल भासन भास्करं, जगतिजन्तु महोदय कारणम्।
जिनवरं बहुमान जलौघतः,शुचि मनाः स्नपयामि विशुद्धये॥६॥

मंत्र–ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने, अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये, जन्म - जरा - मृत्यु - निवारणाय, श्रीतपपदे, पंचामृतं - चन्दनं - पुष्पं-धूपं-दीपं-अक्षतान्-नैवेद्यं-फलं-वस्त्रं-वासं यजामहे स्वाहा।

स्नात्र करतां जगतगुरु शरीरे, सकल देवें विमल कलश नीरे।
आपणा कर्ममल दूर कीधा, तेणें ते विबुध ग्रंथे प्रसिद्धा ॥१॥

हर्ष धरी अप्सरा वृन्दे आवे, स्नात्रकरी एम आशीष भाखे।
जिहांलगें सुरगिरि जंबुदीवो, अमतणा नाथ जीवाति जीवो॥२॥

॥ अथ नवपद जी की आरती ॥

जय जय जगजन वाँछित पूरण, सुरतरु अभिरामी । सुर०
आतम रूप विमल कर तारक, अनुभव परिणामी ॥जय०१॥
जय जय जग सारा, भविजन आधारा । भवि०
आरति पार उतारा, सिद्धचक्र सुखकारा ॥जय० २॥
जगनायक जगगुरु जिण चदा, भज श्रीभगवंता । भज०
आतम-राम रमा सुख भोगी, सिद्धा जगवता ॥जय० ३॥
पंचाचार दिये आचारज, युगवर गुणधारी । युग०
धारक वाचक सूत्र अरथना, पाठक भवतारी ॥जय० ४॥
शम दम रूप सकल गुण धारक, मोटा मुनिराया । मोटा०
दरिसण नाण सदा जयकारक, सजम तप भाया ॥जय० ५॥
नवपद सार परम गुरु भाखे, सिद्धचक्र सुखकारी । सिद्ध०
इह भव परभव ऋद्धिदायक, भव सायर वारी ॥जय० ६॥
कर जोडी 'सेवक जस गावे, मनवाँछित पावे । मन०
श्री जिनचन्द चरण परिपूजक, शिवकमला पावे ॥जय० ७॥

उपाध्याय साधुकीर्ति गणि कृत

॥ सतरहभेदी-पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भाव भले भगवंतनी, पूजा सतरे प्रकार।
परसिध कीधी द्रौपदी, अंग छठे अधिकार॥

॥ राग सरपदी ॥

जोति सकल जग जागति (हां रे अइ०) ए सरसति समरि सुबिंद। सतर सुविधि पूजा तणी, पभणिसु परमानंद ॥१॥

॥ गाथा ॥

न्हवण विलेवण वत्थजुगं, गंधारुहणं च पुप्फरोहणयं।
मालारोहण वन्नयं चुन्न पडागाय आभरणे॥ १ ॥
मालकलासुयवं सुघरं, पुप्फं पगरं च अट्ठ मंगलयं।
धूव उखेवो गीययं, नट्टं वज्जं तहा भणियं ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

सतर सुविध पूजा प्रवर, ज्ञाता अंग मझार।
द्रुपदसुता द्रौपदी परे, करिये विधि विस्तार॥

॥ प्रथम न्हवण पूजा ॥

॥ राग देशाख ॥

पूर्व मुख सावन, करि दणन पावनं, अहत धोती धरी, उचित मानी (अइयो) । विहित मुखकोशके, खीरगंधोदके, सुभृत मणिकलश करि विविध वानी ॥ अ० ॥ १ ॥ नमिवि जिनरंगनं, लोम हस्ते नव, मार्जन करिय जिनं वारि वारि । अ० । भणिय कुसुमाजली, करुश विधि मन रली, न्हवति जिन इन्द्र जिम, तिम अगारी ॥ अ० २ ॥

॥ दोहा ॥

पहिली पूजा साचवे, श्रावक शुभ परिणाम ।
शुचि पखाल तनु जिन तणे, करे सुकृत हितकाम ॥
परमानद पीयूप रस, न्हवण सुगति सोपान ।
धरम रूप तरु सींचवा, जलधर धार समान ॥

॥ राग सारंग तथा मल्हार ॥

पूजा सतर प्रकारी, सुणियोरे मेरे जिन (वर) की । परमानन्द तिण अति छल्योरी सुधारस, तपत बुझी मेरे तनकी हो ॥पू० ॥१॥ प्रभुकु विलोकि नमि जतन

प्रमार्जित, करत पखाल शुचिधार घनकी हो। न्हवण प्रथम निजवृजिन पुलावत, पंककुं वरप जैसे घन की हो ॥पू०॥२॥ तरणि तारण भवसिंधु तरणकी, मंजरी संपद-फल वरधनकी। शिवपुर पन्थ दिखावण दीपी, धूमरी आपद वेल मरदनकी हो ॥ पू० ॥ ३ ॥ सकल कुशल रंग मिल्योरी सुमति संग, जागी सुदशा शुभ मेरे दिनकी। कहे साधुकीरत सारंग भरि करताँ, आस फली मेरे मनकी हो ॥ पू० ॥४॥

॥ द्वितीया विलेपन पूजा ॥

॥ राग रामगिरी ॥

गात्र लूहे जिन मनरंगसुं हो देवा ॥ गा० ॥ सखर सुधूपित वाससुं हांरे देवा वाससुं। गंध कसायसुं मेलिये, नन्दन चन्दन चन्द मेलीये रे देवा ॥१ ॥नं०॥ मांहे मृग-मद कुंकम भेलीये, कर लीये रमणपिंगाणी कचोलीये ॥२॥ पग जानु कर खंधे सिरे रे देवा, भाल कण्ठ उर उदरंतरे। दुख हरे हांरे देवा सुख करे, तिलक नवे अङ्ग कीजिये ॥ ३ ॥ दूजी पूजा अनुसरे श्रावक, हरि विरचे जिम सुरगिरे। तिम करे जिणपर जन मन रंजीये ॥ ४ ॥

॥ राग ललित ॥

॥ दोहा ॥

करहुं विलेपन सुखसदन, श्रीजिनचन्द शरीर।
तिलक नवे अंग पूजता, लहे भवोदधि तीर॥
मिटे ताप तसु देहको, परम शिशिरता सग।
चित्त खेद सवि उपसमे, सुखमें समरसी रंग॥

॥ राग विलावल ॥

विलेपन कीजे जिनवर अंगे; जिनवर अंग सुगधे ॥वि०॥ कुंकुम चन्दन मृगमद यक्षकर्दम, अगरमिश्रित मनरंगे॥ वि० ॥ १ ॥ पग जानू कर खंधे सिर, भालकण्ठ उर उदरंतर सगे। विलुपति अघ मेरो करत विलेपन, तपत वुझति जिम अगे ॥ वि० ॥२॥ नव अग नव नव तिलक करत ही, मिलत नवे निधि चंगे। कहै साधु तनु शुचि, करो सुललित पूजा जैसे गगतरगे ॥ वि० ॥ ३ ॥

॥ तृतीय वस्त्रयुगल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

वसनयुगल उज्वल निमल, आरोपे जिण अग।
लाभ ज्ञान दर्शन लहे, पूजा तृतीय प्रसग॥

॥ राग गोडी ॥

कमरु कोमलअनं, चन्दनं चर्चितं, सुगंधगंधे अधिवासिया ए हां रे अ३० । कनकमंडित हये, लालपल्लव शुचि वसनजुग कंत अतिवासिया ए ॥१॥ जिनप उत्तम अंगे, सुविधि शक्रो यथा, करिय पहिरावणी ढोइये ए हां रे अ०। पाप लूहण अंग लूहणुं देवने, वस्त्रयुग पूज मल धोइये ए हां रे अ० ॥२॥

॥ राग वैराडी ॥

देवदुष्य जुग पूजा वन्यो हे जगतगुरु, देव दुष हर अब इतनो मागुं । तुंहिज सब ही हित तुंहिज गुणतिदाता, तिण नमि नमि प्रभुजीके चरणे लागुं ॥ दे० ॥१॥ कहे साधु त्रीजी पूजा केवल दंसण नाण, देवदुष्य मिश देहुं उत्तम वागुं । श्रवण अंजली पुट सुगुण अमृत पीतां, सविराडि दुख संशय धुर में भांगुं ॥ दे० २ ॥

॥ चतुर्थ वासक्षेप पूजा ॥

॥ राग गोडी दोहा ॥

पूज चतुर्थी इण परे, सुमति वधारे वास ।
कुमति कुगति दूरे हरे, दहे मोह दल पास ॥

॥ राग सारग ॥

हांहो रे देवा बावन चन्दन घसि कुमकुमा चूरण विधि विरचे वासु ए। हां॥ कुसुम चूरण चन्दन मृगमदा, कंकोल तणो अधिवासु ए ॥ हां ॥ १ ॥ वास दशोदिशि वासते, पूजे जिन अग उत्रगु ए ॥ हां० ॥ लाछि भुवन अधिवासियो, अनुगामिकी सरस अभंगु ए ॥२॥

॥ राग गौडी तथा पूर्वी ॥

मेरे प्रभुजीकी पूजा आणद मेले ॥ मे० ॥ वास भुवन मोह्यो सब लोए, सपदा मेलेकी ॥ पूजा० १ ॥ सतर प्रकारी पूजा, विजय देवा तत्ता थेई। अप्रमत्त गुण तोरा चरण सेवाकी ॥ पू० ॥ २ ॥ कुंकुम चन्दनवासे, पूजीये जिनराज त्ताथेई। चतुर्गति दुख गौरी चतुर्थी धनकी ॥ पू० ॥३॥

॥ पंचम पुष्पारोहण पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मन विकसे तिम विकसतां, पुष्प अनेक प्रकार।
प्रभुपूजा ए पंचमी, पंचमि गति दातार ॥

॥ राग कामोद ॥

चम्पक केतकी मालती हा रे अ० ए, कुंद किरण

मचकुंद। सोवन जाइ जूईका, विउलसिरी अरविंद ॥१॥ जिनवर चरण उवरि धरे ए हां रे अ०, मुकुलित कुसुम अनेक। शिव रमणीसे वर वरे, विधि जिन पूज विवेक ॥२॥

॥ राग कानडो ॥

सोहेरी माई वरणे मन मोहेरी माई वरणे। विविध कुसुम जिनचरणे ॥ सो० ॥ विकसी हसी जंपे साहिबकुं, राखि प्रभु हम सरणे ॥ सो० १ ॥ पंचमि पूज कुसुम मुकुलितकी, पंचविषय दुख हरणे ॥सो०॥ कहे साधुकीरति भगति भगवंतकी, भविक नरा सुखकरणे ॥ सो० २ ॥

॥ छठी मालरोहण पूजा ॥

॥ राग आशावरीमां दोहा ॥

छठी पूजा ए छती, महा सुरभि पुफमाल।
गुण गुंथी थापे गले, जेम टले दुखजाल ॥

॥ राग रामगिरी गुर्जरी ॥

हे नाग पुन्नाग मंदार नव मालिका, हे मल्लिकासोग पारिध कली ए। हे मरुक्क दमणक बकुल तिलक वासंतिका, हे लाल गुल्लाल पाडल मिली ए ॥१॥ हे जासुमण

मोगर बेउला मालती, हे पंच वरणे गुंथी मालती ए ॥ इे माल जिन कंठ पीठे ठवी लहलहे, हे जाण सताप सहु पालती ए ॥ २ ॥

॥ राग आशावरी ॥

देखी दामा कंठ जिन अधिक एधति नदे, चकोरकु देखि देखि जिम चंदे ॥ दे० १ ॥ पंचविध वरण रची कुसुमाकी जैसी रयणावलि सुहमदे ॥ दे० ॥२॥ छट्ठी रे तोडर पूजा तब डर धूजे, सब अरिजन हुइ हुइ तिम छन्दे ॥ दे० ॥ ३ ॥ कहे साधुकीरति सकल आशा सुख, भविक भगत जे जिण वदे ॥दे० ॥४॥

॥ सप्तम वर्णपूजा ॥

॥ दोहा ॥

केतकि चंपक केवड़ा, शोभे तेम सुगात ।
चढो जिम चढता हुवे, सातमिये सुखशात ॥

॥ राग केदारो गोडी ॥

कुंकुम चर्चित विविध पच वरणक, कुसुमसुं हारे अ० ॥ कुंद गुलाबशुं चंपको दमणको, ॥१॥ सातमी पूजमे अगिए अग अलंकिये॥ रे ध्वज आलंक मिश मानती, मुगति आलिंगिये ए ॥२॥ करि पंच

॥ राग भैरवी ॥

पंच वरणी अंगी रचि, कुसुमनी जाती। फूलनकी जाती ॥ पं० ॥ कुंद मचकुंद गुलाब शिरोमणी, कर करणी सोवन जाती ॥ पं० ॥ दमणक मरुक पाडल अरविंदो, अंस जूई बेउल वाती ॥ पं० ॥१॥ पारधि चरण कल्हार मंदारो, विण पटकूल वनी भांती ॥ पं० ॥ सुरनर किन्नर रमणी गाती, भैरवी कुगति व्रतती दाती ॥पं० २॥

॥ अष्टम गंधवटी पूजा ॥

॥ दोहा सोरठो रागमां ॥

सुमति पूजा आठमी, अगर सेल्हारस सार।
लावो जिन तनु भावशु गंधवटी घनसार ॥१॥

॥ राग सोरठ ॥

कुंद किरण शशि ऊजलो जी देवा, पावन धन धनसारोजी। आछो सुरभि शिखर मृग नाभिनो जी देवा, चुन्नरोहण अधिकारोजी ॥ आ०॥१॥ वस्तु सुगंध हेरियोजी देवा, अशुभ करम चूरीजै जी ॥ आ०॥ पारिध कलतरु मोरियोजी देवा तब कुमति जन खीजै जी तिका, हे ९) तब सुमती जन रीझै जी ॥२॥

॥ राग सामेरी ॥

पूजोरी माई, जिनवर अंग सुगंधे ॥ जि० ॥ पू० ॥
गधवटी घनसार उदारे, गोत्र तीर्थंकर बांधे ॥ पू० ॥ १ ॥
आठमी पूजा अगर सेल्हारस, लावे जिन तनु रागे।
धार कपूर भाव घन वरपत, सामेरी मति जागे ॥ पू० ॥२ ॥

॥ नवमी ध्वज पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मोहन- ध्वज धर मस्तके, सहव गीत समूल।
दीजै तीन प्रदक्षिणा, नवमी पूज अमूल ॥

॥ राग मेघ गोडी वस्तु छन्द ॥

सहस जोयण सहस जोयण हेममय दण्ड। युतपताक पचे वरण, घुम घुमन्त घूघरी वाजे। मृदु समीर लहके गयण, जाण कुमति दल सयल भाजे ॥ सुरपति जिम विरचे धजा ए, नवमी पूज सुरंग ॥ तिण पर श्रावक ध्वज वहन, आपै दान अभंग ॥१॥

॥ राग नट्टनारायण ॥

जिनराजको ध्वज मोहना, ध्वज मोहना रे ध्वज मोहना ॥ जि० ॥ मोहन सुगुरु अधिवासियो, करि पच

सप्रद त्रिप्रदक्षिणा । सधव वधू शिरसोहणा ॥ जि० ॥ १ ॥
भांति वसन पांच वरण वन्यो री, विध करि ध्वजको रोहणां ॥
साधु भणत नवमी पूजा नव, पाप नियाणां खोहणां ॥
शिव मंदिरकुं अधिरोहणा, जन मोह्यो नङ्गनारायण ॥जि०॥२॥

॥ दशमी आभरण पूजा ॥

॥ राग केदार दोहा ॥

दशमी पूजा आभरण, रचना यथा अनेक ।
सुरपति जिम अंगेरचे, तिम श्रावक सुविवेक ॥
शिर सोहे जिनवर तणे, रयण मुकुट झलकंत ।
तिलक भाल अङ्गद भुजा, श्रवण कुण्डल अतिकंत ॥

॥ राग अधभास वा गुण्डमल्हार ॥

पांच पिरोजा नीलू लसणीया, मोती माणक लाल रसणीया, हीरा सोहे रे, मन मोहे रे धुनी चुनी पुलक करकेतना, जातरूप सुभग अंक अंजना, मन मोहै रे ॥१॥ मौलि मुकुट रयणे जड्यो, काने कुण्डल हारे अति जुगते जुड्यो । उरहारू रे मनवारू रे ॥ २ ॥ भाल तिलक बांहे अङ्गदा, आभरण दशमी पूजा मुदा । सुखाकारू रे, दुखहारू रे ॥ ३ ॥

॥ राग केदारो ॥

प्रभु शिर सोहे, मुकुट मणि रयणे जड्यो। अंगद बांह तिलक भालस्थल, येहु नीको कोन घड्यो ॥प्र०॥१॥ श्रवण कुण्डल शशि तरणि मडल जीपे, सुरतरुसम अलकर्यो। दुखके दार चमर सिंहासण, छत्र शिर उवरि धर्यो, अलकृत उचित वर्यो ॥ प्र० ॥ २ ॥

॥ एकादश फूलघर पूजा ॥

॥ दोहा ॥

फूलघरो अति शोभतो, फूंदे लहके फूल ।
महके परिमल फलमहा, ग्यारमी पूज अमूल ॥

॥ राग रामगिरी कौतकिया ॥

कोज अकोल रायवेलि नव मालिका, कुन्द मचकुन्द वर विचिकलू हां रे ॥ अड० वि० ए॥ तिलक दमणक दलं मोगरा परिमल, कोमला पारिध पाडल हां रे अ० पा० ए ॥१॥ प्रमुख कुसुमे रचं त्रिभुवनकु रुचं, कुसुम गेहे विच तोरणूं, हा रे अ० तो ए ॥ गुच्छ चन्द्रोदय फुमका उन्नय, जालिका गोख चित चोरणूं हा रे अ० चो० ए ॥ २ ॥

॥ राग रामगिरी ॥

मेरो मन मोह्यो माईरी, फूलघर आणंद झिलैं। असत उसत दास वधरी मनोहर, देखत तवही सव दुरित खिलै ॥ फू० ॥ १ ॥ कुसुम मंडप थंभगुच्छ चन्द्रोदय, कोरणि चारु विनाण सझैं। इग्यारमी पूज भणीहे राम-गिरी विवुध विमाण जैसे तिपुरि भजें ॥ फ० ॥ २ ॥

॥ द्वादश पुष्पवर्षा पूजा ॥

॥ दोहा मल्हार रागमां ॥

वरषे बारमी पूजमें, कुसुम वादलिया फूल।
हरण ताप दुख लोकको, जानु समा वहु मूल ॥

(राग भीममल्हार गुंढमिश्र, देशी कड़खानी)

मेघ वरसै भरी, पुष्फ वादल करी, जानु परिमाण करि कुसुम पगरं। पंच वरणे वन्यो, विकच अनुक्रम चण्यो, अधोवृंते नहीं पीड पसरं ॥ मे० ॥ १ ॥ वास महके मिलै, भमर भमरी मिले, सरस रसरंग तिण दुख निवारी। जिनप आगे करै, सुरप जिम सुख वरे, वारमी पूज तिण पर अगारी ॥ मे० ॥ २ ॥

॥ राग भीम मलार ॥

पुष्प बादलीया वरसै सुसमा ॥ अहो पु० ॥ योजन अशुचिहर वरसै गंधोदक, मनोहर जानु समा ॥ पु० ॥ १ ॥ गमन आगमनकी पीर नही तसु, इह जिनको अतिशय सुगुणै । गुंजत-गुंजत मधुर इम पभणे, मधुर वचन जिन गुण थुणे ।। पु० ॥२ ॥ कुसुम सुपरि सेना जो करे, तसु पीर नहीं सुमणे । समवसरण पचवरण अधोवृंत, विबुध रचे सुमना सुसमा ॥ पु० ॥ ३ ॥ बारमी पूज भविक तिम करे, कुसुम विकस हसी उच्चरे, तसु भीम बंधण अधरा हुवे, जे करे जै जै जिन नमा ॥पु० ॥४॥

॥ त्रयोदश अष्ट मगलिक पूजा ॥

॥ दोहा राग कल्याणमें ॥

तेरमी पूजा अवसरे, मंगल अष्ट विधान ।
युगति रचे सुमते सही, परमानन्द निधान ॥

॥ राग वसन्त ॥

अतुल विमल मिल्या, अखंड गुणे भिल्या सालि रजत तणा तंदुला ए । श्लपण समाजक, पचविध वर्णकं, चन्द्रकिरण जैसा ऊजला ए ॥१ ॥ मेलि मंगल लिखे,

सयल मंगल अखे, जिनप आगे सुथानक धरे ए। तेरमी पूजविधि ते रमी मन मेरे, अष्टमंगल अष्टसिद्धि करे ए ॥२॥

॥ राग कल्याण ॥

हांहो पूजा बणी तेरी रसमें। अष्ट मंगल लिखे, कुशल निधान हे ; तेज तरणके रसमें ॥ हां ॥ १ ॥ दप्पण भद्रासण नंद्यावत्त पूर्णकुंभ, मच्छयुग श्रीवच्छ तसुमें। वर्धमान स्वस्तिक पूज मंगलकी, आनंद कल्याण सुख रसमें ॥ हां ॥ २ ॥

॥ चतुर्दश धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

गंधवटी मृगमद अगर, सेल्हारस घनसार।
धरि प्रभु आगल धूपणा, चउदमि अरचा सार ॥

॥ राग वेलावल ॥

कृष्णागर कपूरचूर, सोगंध पंचे पूर। कुंदरुक्क सेल्हारस सार, गंधवटी घनसार ॥ गंधवटी घनसार चंदन मृगमदा रस भेलिये, श्रीवास धूप दशांग अंबर, सुरभि बहु द्रव्य मेलियै ॥ वेरुलिय दंड कनक मंडित, धूपधाणो

कर घरे। भवबृत्ति धूप करंति भोगं, रोग सोग
अशुभ हरै ॥ १ ॥

॥ राग मालवी गौडी ॥

सब अरति मथनमुदार धूपं, करति गंध रसाल रे
॥ देवा, कर० ॥ धाम धूमा वलीय धूसर, कलुप पातिक
गाल रे ॥ देवा, स० ॥ १ ॥ ऊर्ध्वगति सूचंति भविकुं,
मघमघे करनाल रे ॥ दे० ॥ चौदमी वामांग पूजा, दीये
रयण विशाल रे। आरती मगल माल रे, मालवी गौडी
ताल रे ॥ दे० स० ॥२॥

॥ पंचदश गीत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

कठ भले आलाप करि, गावो जिनगुण गीत।
भावो अधिकी भावना, पनरमी पूजा प्रीत ॥

॥ श्री रागे आर्यावृतं ॥

यद्वदनतकेवल मनंत, फल मस्ति जैनगुणगानं। गुणवर्ण-
तानशाद्यै, मात्रामापालयैर्युक्तं ॥ १ ॥ सप्त स्वरसंगीतैः
स्थानैर्जयतादि तालकरणैश्च। चंचुरचारी चारै, गीतं
गानं सुपीयूपं ॥ २ ॥

॥ श्री राग ॥

जिनगुण गानं श्रुत अमृतं। तार मंद्रादि अनाहत तानं, केवल जिम तिम फल अमृतं ॥ जि० ॥१॥ विबुध कुमार कुमारी आलापे, मुरज उपंग नाद जनितं। पाठ प्रबंध धुआप्रतिमानं, आयति छंद सुरति सुमितं ॥ २ ॥ शब्दसमान रुच्यो त्रिभुवनकुं, सुर नर गावे जिन चरितं। सप्तस्वर मान शिवश्री गीतं, पनरमी पूजा हरे दुरितं ॥ जि० ॥ ३ ॥

॥ षोडस नृत्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

कर जोडी नाटक करे, सजि सुन्दर सिणगार।
भव नाटक ते नवि भमे, सोलमी पूजा सार ॥

॥ राग शुद्ध नट्ट ॥

॥ काव्यं । शार्दूलविक्रीडितं वृतं ॥

भावा दिप्पिमणा सुचारु चरणा, सुंपुन्न चंदानना,
सप्पिम्मासम रूव वेस वयसो, मत्तेभ कुंभत्थणा।
लावण्णा सगुणा पिकस्स रवई, रागाइ आलावणा,
कुम्मारी कुमरावि जैनपुरओ, नच्चंति सिंगारणा।

॥ गद्य ॥

तएण ते अठमयं कुमार कुमरीओ सूरियाभेण देवेणं सदिट्ठा रग मडवे पविट्ठा जिण नमता गायता वायता नच्चंतेत्ति ॥

॥ रागनट्ट त्रिगुण ॥

नाचंति कुमार कुमरी, द्रागडदि तत्ता थेइय, द्रागडदि द्रागडदिकि थोंग थोंगनि मुखे तत्ता थेइय ॥ ना० ॥ १ ॥ वेणु वीणा मुरज बाजे, सोलही सिणगार साजे, तनन्न न्नन्नानेइय, घणण घणण घूघरी घमके, रण्णण्णण णा णेइय ॥ ना० ॥ २ ॥ कसती कचुकी तरुणी, मजरी झकार करणी, मोभति कुमरीय, हस्तकृत हावादि भावे, ददति भमरीय ॥ ना० ॥ ३ ॥ सोलमी नाटक पूजा, सुरीयाभे रानण कीनी। सुगंध तत्ता त्थेईय, जिनप भगते भविक लीणा, आणद तत्ता थेईय ॥ ना० ॥ ४ ॥

॥ सप्तदशमी वाजित्र पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ततघन सुपिरे जानघे, वाजित्र चउविध थाय।
भगति भली भगवतनी, सतरमी ए सुखदाय ॥

॥ गाहा ॥

सुरमद्दल कंसालो, महुरय सद्दल सुवज्जए पणवो ।
सुरनारि नंदि तूरो, पभणेइ तूं नंद जिणनाह ॥

॥ राग मधुमाधवी ॥

तूं नंदिआनंदि बोलत नंदी, चरण कमल जसु जगत्रय वंदी । ज्ञान निर्मल वावन मुख वेदी, तिवलि बोले रंग अतिही आनंदी ॥ तूं० ॥ १ ॥ भेरी गयण वाजंती, कुमति त्याजंती ; प्रभु भक्ति पसाये अधिक गाजंती । सेवे जैन जयणावंती, जैनशासन, जयवंत नंदंती । उदय संघ परिपाग्य वदन्ती ॥ तूं० ॥२ ॥ सेवि भविक मधु माधनफेरी, भव नो फेरी नप्पभणंती, कहे साधु सतरमी पूज वाजित्र सत्र, मंगल मधुर धुनिकर कहंतो ॥ तूं ॥३॥

॥ कलश ॥

॥ राग धनाश्री ॥

भवि तुं भण गुण जिनके सब दिन, तेज तरणि मुख राजै । कवित शतक आठ थुणत शक्रस्तव, थुय थुय रंगै हम छाजै ॥ भ० ॥ १ ॥ अणहिलपुर शांतिशिव सुखदाई,

नवनिधि सिद्धि आवाजै। सतर सुपूज सुविधि श्रावककी भणी मैं भगति हित काजै ॥ भ० ॥ २ ॥ श्री जिन-चन्द्रसूरि खरतर पति, धरम वचन तसु राजै। संवत सोल अढार श्रावण धुरि, पंचमी दिवस समाजै ॥भ० ॥३॥ दयाकलश गुरु अमरमाणिक्य वर, तासु पसाये सुविध हुई गाजै। कहे साधुकीरति करत जिन सस्तव, सब लीला सुर साजै ॥ भ० ॥४॥

श्री सुगुणचन्द्रोपाध्याय कृत

॥ पंचपरमेष्ठी-पूजा ॥

—:०:—

॥ प्रथम अरिहंतपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ॐकार बीज आदे नमूं, गीर्वाणी सुखदाय।
तुं तूठी पंडित करे, पूजे सुरनर राय॥
ॐ नमो गुरुदेवकुं, भाषा सरस बनाय।
पाहणथी पल्लव करे, उपगारी सिर राय॥
प्रथम नमूं अरिहंतजी, दूजा सिद्ध अनंत।
तीजा सूरि सदा नमूं, उपगारी भगवन्त॥
वलि उवझाया वंदिये, गुण पचवीस प्रधान।
द्वादश अंग प्ररूपता, नहीं विकथा नहीं मान॥
पंचम पद मुनिराजनो, वंदो भवि इकतार।
गुण सत्तावीस सोभता, करुणा रस भंडार॥

पांचों पद सेवे नही, मूरख लोक अजाण।
ए पांचू परमेष्टि है, अनुपम सुखकी खाण॥
उज्जवल वरण विराजता, कुमति हरण सुभ लेश।
अरिहत पद पूजा करो, सेवत सदा सुरेश॥
अष्ट द्रव्य लेई करी, पूजो अरिहंत देव।
पूजत अनुभव रस मिले, पावो सुख नितमेव॥
प्रथम पद श्रीकार हैं, अतिसय जास अनंत।
तीन लोकना राजवी, सेवे सुर नर सत॥

॥ ढाल होलीरी ॥

बलिहारी सुखकर जिनवर की। सब देवन मे देव नगीनो, महिमा अधिकी मुनिवरकी ॥ ब० ॥ १ ॥ कोई ध्यावे हरि हर ब्रह्मा, कोई कहे मेरे वाला जी ॥ ब० ॥ कोई कहे मेरे चण्डी माता, कोई कहे भैरूं काला जी ॥ ब० ॥ २ ॥ कोई नरसिंह देव कुं ध्यावे, कोई कहे मेरे ज्वाला जी ॥ ब० ॥ मेरे परसन तुम ही आए, वीतराग गुण वालाजी ॥ ब० ॥ ३ ॥ अवर देव सब काच कथीरा, तुम हो अमोलक हीरा जी ॥ ब० ॥ राग द्वेष तुम पास नहीं है, बाइस परिसह धीराजी ॥ ब० ॥ ४ ॥ तेरी सुरतकी

बलिहारी, क्या कहुं अजब अमीरा जी ॥ व० ॥ कोड देवता हाजर रहता, अणहुंते वडवीरा जी ॥ व० ॥ ५ ॥ जगजीवन जगलोचन कहिये, तुम सम अवर न धीरा जी ॥ व० ॥ तेरे गुणको पार न पायो, सुरनर राय वजीरा जी ॥ व० ॥ ६ ॥ बारै गुण प्रभु ऊपर सोहे, वृक्ष अशोक उदारा जी ॥ व० ॥ तीन छत्र भामंडल पूठै, ध्वजा फुरक रही सारा जी ॥ व० ॥ ७ ॥ पृथ्वी पीठ सिंहासन ऊपर, राजत हो वडवीरा जी ॥ व० ॥ पान फूल करके बहु सोभित, राजत हो गुण पूरा जी ॥ व० ॥ ८ ॥ सहस जोजननो इंद्रध्वजा, प्रभु आगल चालत सारा जी ॥व०॥ महा गोप महामाहण कहिये, निर्यामिक सथवारा जी ॥ व० ॥ ९ ॥ ऐसे अरिहंत पद की महिमा, सुणियो तुम सब प्यारा जी ॥ व० ॥ तोन लोक में इनका भंडा, पूजत है इकतारा जी ॥ व० ॥ १० ॥ अष्टद्रव्य से पूजा करतां, सदा हुवे जयकारा जी ॥ व० ॥ धरमविशाल दयाल पसाये, सुमति कहै गुण सारा जी ॥ व० ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं परमात्मने पंचपरमेष्टीमहामन्त्रराजाय अरिहंतपदे अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ बीजी सिद्धपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दूजी पूजा सिद्धकी, करो भविक गुणवंत ।
ध्वजा चढावो भावसु, लाल वरण मतिवंत ॥
गुण इकतीस विराजता, तीन लोक सिर छत्र ।
अनंत चतुष्टय धारता, जगजीवन जगमित्र ॥

॥ ढाल ॥

चाल—भवि पनरस पद गुण गाना हो

भवि सिद्धपदके गुण गाना हो ॥ भ० ॥ पनरे भेदे सिद्ध विराजै, भवि तुम चित्तमे लाना हो ॥ भ० सि० ॥ जिन जिन तीरथ अतीरथ कहीयै, अन्य सलिंग कहाना हो ॥ भ० सि० ॥ १ ॥ स्त्री पुरुषादिक लिंगे लाये, कृत्य नपुंसक गाना हो ॥ भ० सि० ॥ प्रत्येक-बुद्ध ने सह संबुद्धा, बुद्ध बोधित सुप्रमाना हो ॥ भ० सि० ॥२॥ एक अनेक कह्या एक समये, गुरु मुखथी शुद्ध पाना हो ॥ भ० सि० ॥ अष्ट सिद्धि नवनिधिके दाता, तुम हो देव निधाना हो ॥ भ० सि० ॥ ३ ॥ सादी अनंत तुम सुखके भोगी, जोगीसर लय लाना हो ॥ भ० सि० ॥ शब्द रूप रस गंध फरसकूँ, जीत भए मुनि

भाना हो ॥ भ० सि० ॥ ४ ॥ अव्याबाध सुखके तुम रसिये, भव्य सकल सुख दाना हो ॥ भ० सि० ॥ घाति अघाति दूर करीने, जोतमें जोत समाना हो ॥ भ० सि० ५ ॥ पैंतालीस लख्ख जोजन शिल्ला, उज्जवल वरण कहाना हो ॥ भ० सि० ॥ ऊपर जोजन भाग चोइसमें, सिद्ध प्रभु ठहराना हो ॥ भ० सि० ॥ ६ ॥ तिहां श्रीसिद्ध सदा जयवंता, परम गुरु परधाना हो ॥ भ० सि० ॥ अनंत गुणाकर ज्ञान दिवाकर, इनके गुण नित गाना हो ॥ भ० सि० ७ ॥ लब्धि रिद्धि सब सिद्धिके दाता, परम इष्ट सुखदाना हो ॥ भ० सि० ॥ धरमविशाल दयाल पसाये, सुमति कहै बुधवाना हो ॥ भ० सि० ८ ॥ ॐ ह्रीं परमात्माने सिद्धपदे अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ तीजी आचार्य पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तीजे पदकुं नित नमुं, आचारज गुणवान ।
गुण छत्तीस विराजता, जिनवरके परधान ॥
प्रतिरूपादिक गुण करी, राजे सूर समान ।
जातिवंत कुलवंत है, नहि विकथा नही मान ॥

भव्य सकलकूं तारवा, दे साचो उपदेश ।
कुमति सदा दूरे करे, सुमति पाले हमेश ॥
ऋद्धि सिद्धि कारण पूजिये, पीले रंग प्रधान ।
गणधारक गुरु गछपति, जुगप्रधान सुजान ॥

॥ ढाल ॥

चाल—मल्ली जिनंद सुखकारी रे वाला

आचारज सुखकारी रे, वाला ॥ आ० ॥ गुण छत्तीस विराजे जेहना, परम परम उपगारी रे ॥ वा० आ० ॥ १ ॥ पचाचार विराजत जगमणि, सहस किरण अवतारी रे ॥ वा० आ० ॥ प्रतिरूपादिक गुण जसु छाजे, मोह माया परिहारी रे ॥ वा० आ० ॥ २ ॥ राग द्वेषकूं दूर निवारे, समता रस भंडारी रे ॥ वा० आ० ॥ क्रोध मान माया नहि जिनके, विकथा दूर निवारी रे ॥ वा० आ० ॥ २ ॥ तेज करी सूरज सम शोभित, मिथ्यातमके वारी रे ॥ वा० आ० ॥ क्षमा अधिक जगमें जसु राजे, विषय विकार निवारी रे ॥ वा० आ० ॥ ३ ॥ हृदय गंभीर महायश निरमल, रूपाधिक मनुहारी रे ॥ वा० आ० ॥ देस जात कुल उत्तम जिनके, मोह्या सब नर-नारी रे ॥ वा० आ० ॥ ४ ॥ सुस्वर

नरवर सेव करत है, जय जय तुम सुखकारी रे ॥ वा० आ० ॥ मीठी अमृत वाणी बोले, सुणतां हरष अपारी रे ॥ वा० आ० ॥ ६ ॥ पूरव चवद भण्या श्रुत-सागर, लबधि अठाइस धारी रे ॥ वा० आ० ॥ द्रव्यानु-जोगी चरणानुजोगी, करणानुजोगके धारी रे ॥ वा० आ० ॥ ७ ॥ गणतानुजोगरू धरमानुजोगी, जाणे आगम सारी रे ॥ वा० आ० ॥ धर्म प्रभावक एह कहीजे, सूरि मंत्रके धारी रे ॥ वा० आ० ॥ ८ ॥ गणधारी गछभार धुरंधर, सारण वारणकारी रे ॥ वा० आ० ॥ ज्ञान उजागर विद्यासागर, वारी जाऊँ वार हजारी रे ॥ वा० आ० ॥ ९ ॥ धरमविशाल दयाल पसाये, सुमति कहे जयकारी रे ॥ वा० आ० ॥ ऐसे गौतम-स्वामी कहिये, पूजो कर इकतारी रे ॥ वा० आ० ॥ १० ॥ ॐ ह्रीं परमात्मने आचार्य - पदे अष्ट द्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ ३ ॥

॥ चौथी श्रीउवज्झाय पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्री उवज्झाया वंदिये, प्रेम धरी मन रंग ।
चौथे पदमें शोभता, पूजो धर उछरंग ॥

नील वरण ध्वज सुन्दरु, धर लावो शुभ थाल ।
अष्ट द्रव्य लेई करी, सेवो दीन दयाल ॥

॥ ढाल ॥

(चाल—जिन गुण गानं श्रुत अमृत)

श्री उवज्झाया भय हरण, भय हरणं रे देवा भय हरण ॥ श्री० ॥ परिहर विषय विकार प्रकार, ए गुरु है अशरण शरण ॥ श्री० ॥ १ ॥ गुण पचवीस विराजित सुन्दर, देखत सबको मन हरण ॥ श्री० ॥ तेज पुंज रवि शशि सम दीपत, मिथ्या तम दूरे करण ॥ श्री० ॥ २ ॥ सूत्र अर्थ दाता जगमांहे, मुनि मानसमें जप करणं ॥ श्री० ॥ सारण वायण चोयण करता, पडिचोयण वलि आचरण ॥ श्री० ॥ ३ ॥ द्वादश अंग पढ़्या श्रुतसागर, सुमतिधर कुमति हरण ॥ श्री० ॥ अतिशय विद्या चूरण जागे, जिन शासन उन्नति करण ॥ श्री० ॥ ४ ॥ धरम प्रभावक है उपगारी, ऐसे गुरु तारण तरणं ॥ श्री० ॥ तप जप आदिकनी खप करता, भय सकलकु निसतरण ॥ श्री० ॥ ५ ॥ नवविध ब्रह्मचर्य के धारक, दसविध विनय सदा करण ॥ श्री० ॥ माया ममता दूर निवारी, द्वादस भेदे तप धरण । श्री० ॥ ६ ॥ शिष्य वरगकुं

ज्ञान दान दे, मूरख थी पंडित करणं ॥ श्री० ॥ जगजीवनके हो प्रतिपालक, तुम विन अवर न आभरणं ॥ श्री० ॥ ७ ॥ विन कारण जगमें उपगारी, धन धन तुमरो आचरणं ॥ श्री० ॥ पंच परमेष्ठी महामंत्रको, इष्ट सदा दिलमें धरणं ॥ श्री० ॥ ८ ॥ धरम-विशाल दयाल पसाये, सुमति करे तुम नित वरणं ॥ श्री० ॥ नवनिध अडसिध मंगलमाला, पूजत जगमें जस भरणं ॥ श्री० ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं परमात्मने सकल पाठक राजाय अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अथ साधुपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पंचम पदमें शोभता, साधु सकल गुणवंत ।
गुण सतवीस विराजता, महिमावंत महंत ॥
स्याम वरण मुनिवर कह्या, तप करवा अति सूर ।
भविक कमल प्रतिबोधता, धरता निरमल नूर ॥

॥ ढाल ॥

(चाल सदा सहाई कुशलसूरि०)

सदा सहाई वीर पटोधर, सुणियो भविक उदार ॥ भलाजी गुरु, सु० ॥ सुधरमा स्वामी अंतरजामी, तसु

वदन सुखकार ॥ भ० ॥ जंबू आदिक गुण के सागर, ते प्रणमुं हितकार ॥ भ० स० ॥ १ ॥ प्रभवादिक सय पांच उदारा, प्रतिबोध्या सुखकार ॥ भ० ॥ सिज्जंभव आदिक जे सूरि, तेहना शिष्य सुविचार ॥भ० स०॥ २ ॥ थूलभद्र मोटो ब्रह्मचारी, दुक्कर दुक्करकार ॥ भ० ॥ सिंह गुफा वासी जे मुनिवर, भाषे दुक्कर कार ॥ भ० स० ॥ ३ ॥ वज्रकुमार वड़े उपगारी, प्रतिबोध्या नर नार ॥ भ० ॥ श्रीसिद्धसेन दिवाकर स्वामी, राखी जगमें कार भ० स० ॥ ४ ॥ विक्रम आदिक नृप अठारे, प्रतिबोध्या सुखकार ॥ भ० ॥ एक तीरथ परगट करके, गुरु चरणा व्रतधार ॥ भ० स० ॥ ५ ॥ वलि जिनभद्र खमासण कहिये, चूर्णी कारक जेह ॥ भ० स० ॥ पन्नवणा वलि सूत्र ना कारक, श्यामाचारज तेह ॥ भ० स० ॥ ६ ॥ देवड्ढीगणी ए सरमे मोटा, राख्यो ज्ञानज सार ॥ भ० ॥ सूत्र ताडपत्रे धर राख्या, जेसलमेर मझार ॥ भ० स० ॥ ७ ॥ अभयदेवसूरि उपगारी, नव अंग टीकाकार ॥ भ० ॥ हेमाचारज है वडभागी जिण कीनो हेमनो भार ॥ भ० स० ॥ ८ ॥ कुमारपालने जिण प्रतिबोध्यो,

साखो धरमनो राख ॥ भ० ॥ श्रीजिनदत्तसुरीसर मोटा, श्रावक किया सवा लाख ॥ भ० स० ॥ ६ ॥ रतनप्रभसूरि उपगारी, ओस्यानगर मझार ॥ भ० ॥ जिहांथी जैन धरम विसतरियो, मोटो कियो उपगार ॥ भ० स० ॥६॥ इत्यादिक गुणगणके दरिया, सेवो भविक उदार ॥ भ० ॥ ढंढण आदिक महा तपसूरा, नाम लियां जयकार ॥ भ० स० ॥ १० ॥ गजसुकमाल महामुनि वंदूं, भाव करी इकतार ॥ भ० ॥ धन धन्ना अरू शालिभद्रजी, कीनी करणीसार ॥ भ० स० ॥११॥ खंधकसूरिना शिष्य पांचसे, सूरवीर व्रतधार ॥ भ० ॥ पंचम पदमें ए मुनि पूजो, सदा हुवे सुखकार ॥ भ० स० ॥ १२ ॥ पंचम आरे छेहडे होसी, दुपसह सूर दयाल ॥ भ० ॥ इत्यादिक ए द्वीप अढोमें वंदूं साधु कृपाल ॥ भ० स० ॥ धरम विशाल दयाल पसाये, पूज रची सुखदाय ॥ भ० ॥ सुमति कहे ए पंच परमेष्ठी, कामधेनु कहवाय भ० स० ॥ १४ ॥

॥ ढाल दूजी ॥

(चाल—पणिहारीकी)

सुण प्याराजी, सुणतां आसीस्वाद ॥ प्याराजी,

धरम सनेही साधुजी ॥ सु० ॥ करता पर उपगार ॥ प्या० ॥ लालच लोभ न जेहने, सु० । नहीं राखे द्वेष लगार ॥ प्या० ॥ ममता माया छोडीने, सु० । धारे व्रत सुखकार ॥ प्या० ॥ १ ॥ गाम नगर पुर पाटणे, सु० । करता धरम व्यापार ॥ प्या० ॥ राग द्वेष मुनिराजने, सु० । नहीं कोई विषय विकार ॥ प्या० ॥२॥ उपगारी सिर सेहरो सु० । कुमति करे परिहार ॥प्या०॥ विन कारण मुनिराजजी, सु० । भव्य जीव हितकार ॥ प्या० ॥ ३ ॥ ज्ञानी ध्यानी सूरमा, सु० । महिमा करत नरेस ॥ प्या० ॥ वाणी अमृत सारसी, सु० । सुणतां हरप हमेस ॥ प्या० ॥ ४ ॥ अनेक जीव प्रतिबूझिया, सु० । धरम तणा परधान ॥ प्या० ॥ माया न करे साधुजी, सु० । नहीं विकथा नहीं मान ॥ प्या० ॥ ५ ॥ पच महाव्रत धारता, सु० । पट्काया प्रतिपाल ॥ प्या० ॥ दोप बयालीस टालता, । सु० । ऐसे दीन दयाल ॥ प्या० ॥ सुमति धारक पांच ने, सु० । गुप्तिना रखवाल ॥ प्या० ॥ ६ ॥ उद्देशक आदे करी सु० । कृतकड़ने वलि दूत ॥ प्या० ॥ सिज्यातर राय पिंडकुं, सु० । नहीं धारे अवधूत ॥ प्या० ॥ ७ ॥ वासी विदल

ने टालता सु० । न लगावे कोई दोष ॥ सु० प्या० ॥ कुवचन केहनो सांभली, सु० । न धरे मनमें रोष ॥ प्या० ॥ ८ ॥ मधुकरनी परे मालता सु० । ऊंच नीच कुलमांह ॥ प्या० ॥ इर्यासमिति सोधता सु० । लेता धर्म नो लाह ॥ प्या० ॥ ९ ॥ जयणा कर कर चालता, लेवे निरस आहार ॥ प्या० ॥ लांघे भाडो दे देहने, सु० । अणलाधे तपधार ॥ प्या० ॥ १० ॥ ओसर मोसर देखने, सु० । रस लंपट नहीं होय ॥ प्या० ॥ किरिया करता साधुजी, सु० । आलस न करे कोय ॥ प्या० ११ ॥ परिषह जीते आकरा, सु० । करम हुवे सब दूर ॥ प्या० ॥ मुनिवर मधुकर सम कह्या सु० । दिन दिन वधते नूर ॥ प्या० ॥ १२ ॥ जंगम तीरथ सारिखा, सु० । धरम तणा आधार ॥ प्या० ॥ एहवा मुनिवर पूजतां, सु० ॥ पावे वंछित सार ॥ प्या० ॥ १३ ॥ धरमविशाल दयालनो, सु० । सुमति कहे करजोड़ ॥ प्या० ॥ एहवा श्रीमुनिराजजी, सु० । मुझ साथेका मोड ॥ प्या० ॥१४॥

ॐ ह्रीं परमात्मने सर्व साधुभ्यो अष्ट द्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥

॥ कलश ॥

॥ दोहा ॥

अब है पूजा कलशकी, सुणियो तुम नरनार।
सामलता सुख पामसो, सफल हुसी अवतार॥
ऐसी डारुं मोहनी, सभा सहु हरखाय।
सेनो जगतकी मोहनी, ए जग सार कहाय॥
मत्र मांह सिरदार है, पचपरमेष्ठी एह।
सरवारथ सिद्धी कह्यो, गणधर गौतम जेह॥
जेहने एहनी आसता, तेहने एह सहाय।
भागहीन निरबुद्धिकु, होत नहीं फल दाय॥

॥ ढाल प्रश्न तथा उत्तर ॥

चंगीमें चंगी, कौन जगतकी मोहनी, चगीमें चगी, जान जिणदपद मोहनी ॥ १ ॥ सुखी जगसमें कौन कहो मन भावना, सुखी वही ससार परमपद भावना ॥ २ ॥ सब देवनमें देव, वडो कुण जाणना। सब देवनमे देव, वडो जिन जाणना ॥ ३ ॥ सबमें मोटो कौन, कहो मेरो साजना। सबमें मोटो होय, क्षमा गुण साजना ॥ ४ ॥ सबमें मोटो ध्यान, कहो कोन साजना। सबमे मोटो

ध्यान, शुकल तुम जाणना ॥ ५ ॥ धरम बड़ो जग मांहि, कहो कुण जाणना। दया धरम जगमांय, बड़ो हे साजना ॥ ६ ॥ सब रसमें रससार, कहो कुण साजना। सब रसमें वैराग, बड़ो तुम जाणना ॥ ७ ॥ सब रमणीमें सार कहो, कुण साजना। शिव रमणी है सार, सुनो मेरे साजना ॥ ८ ॥ दान बडो कुण होय, कहो मेरे साजना, अभयदान सिरदार, सुनो मेरे साजना ॥ ९ ॥ शिव-रमणीको नाथ, कहो कुंण साजना, शिव रमणीको नाथ, सरव सिद्ध जाणना ॥ १० ॥ धरममें मोटो कौन, कहो मेरे साजना, धरम मांह शुभ भाव, सुणो मेरे साजना ॥ ११ ॥ दाता कहिये कौन, कहो मन भावना, गुरु बड़े दातार, धरम धन पावना ॥ १२ ॥ मीठी जगमें कौन, कहो मन भावना, मीठी जिनकी वाणी, धरो चित चाहना ॥ १३ ॥ मीठी दाख खजूरके, मीठी चाहनी, जिणसे अधिकी होय, वाणी जिनरायनी ॥ १४ ॥ सब व्रतमें कुण सार, कहो मेरे साजना, सब व्रतमें व्रत सार, चौथो व्रत जाणना ॥ १५ ॥ खरतर गच्छपति चन्द, सूरीश्वर सोहता, सकल विमल गुण गेह भविक मन मोहता ॥ १३ ॥ प्रीतसागर गणि शिष्य सकल गुण

राजता, अमृतधर्म उदार वाचक पद छाजता ॥ १७ ॥ पाठकमें परधान क्षमा गुण सारता। तसु सुत धरम विशाल मुनिव्रत धारता ॥ १८ ॥ सुमति कहे गुण सार, भविक मन सोहता। बीकानेर मझार सकल मन मोहता ॥ १६ ॥ संघ सकल सुखदाय सेवो प्रभु भावसुं। पूज रची चित लाय अधिक चित चावसुं ॥ २० ॥ सम्वत सय उगणीसके तेपन जाणीये, माहा सुद चवदस वार मंगल मन आणिये ॥ २१ ॥ भणतां गुणतां एह सदा सुख पामसे, घर घर मंगल माल हुवे जिन नामसे ॥ २२ ॥ इति पंचपरमेष्टी पूजा सपूर्णम् ॥

श्री जिनहर्षसूरि कृत

॥ वीसस्थानक पूजा ॥

॥ प्रथम अरिहंतपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुखसंपति दायक सदा, जगनायक जिनचंद ।
विघनहरण मंगलकरण, नमो नाभि नृप नंद ॥
लोकालोक प्रकाशिका, जिनवाणी चित धार ।
विंशतिपद पूजन तणो, कहिस्युं विधि विस्तार ॥
जिनवर अंगे भाखिया, तप जप विविध प्रकार ।
विंशतिपद तप सारिखो, अवर न कोइ उदार ॥
दान शील तप जप क्रिया, भाव विना फलहीन ।
जैसे भोजन लवण विन, नहीं सरस गुण पीन ॥
जे भवियण सेवे सदा, भावे स्थानक वीश ।
ते तीर्थंकर पद लहे, वंदे सुरनर ईश ॥

॥ ढाल ॥

(चाल—तीरथपति त्रिभुवन सुखदाई)

श्रीअरिहंत पद१ सिधपद२ ध्यावो, प्रवचन३

आचारिज४ गुण गावो। स्थविर५ पचम पद पुनरुवभ्कायाई६, तपसि७ नाण८ दसण९ मन भाया ॥१॥

॥ ऊलालो ॥

मनभाय विनया१० वश्यका११ मल, शील१२ किरिया१३ जाणिये। तप१४ विविध उत्तम, पात्र१५ वेया,-वच्च१६ समाधि१७ वखाणिये। हितकर अपूरव नाण संग्रह१८, घरो मन सुजगीश ए। श्रुत भक्ति१९ पुनि तीरथप्रभावन२० एह थानक वीशक ॥ २ ॥

॥ ढाल ॥

एह थानक वीश जग जयकारा, जपता लहीये जिनपद सारा। करम निकदे विसवा वीशे, भाख्या जगतारक जगदीशे ॥ ३ ॥

॥ ऊलालो ॥

जगदीश प्रथम, जिणंद जगगुरु, चरम जिनवरजी मुदा। भव तीसरे पद, सकल सेवी, लही जिनपति सपदा ॥ वानीश जिनवर, सकल सुखकर, इन्द्र जसु गुण गाइये। इग दोय त्रिण, सहु पद जपीने, तीर्थपति पद पाइये ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

अरिहंतादिक पद सदा, भजिये तप करि शुद्ध ।
अति निर्मल शुभ योगता, करिके तसु गुण लुद्ध ॥
विमल पीठ त्रिक तदुपरे, ठविये जिनवर वीश ।
पूजन उपकरण मेलि करी, अरचीजे सुजगीश ॥
एक एक ए पद तणो, द्रव्य पूज परकार ।
पंच अष्टविध जाणिये, सत्तर इगविस सार ॥
अष्ट जातिना कलश करि, विमल जले भरिपूर ।
पूजो भवियण सहु मुदा, होय सकल दुख दूर ॥
सोहे सहु परमेष्ठिमें, जिनवरपद अभिराम ।
वेद४ निक्षेपे समरिये, वधते शुभ परिणाम ॥

॥ राग देशाख ॥

(चाल—पूर्वमुखसावनं, ए देशी)

सकल जगनायकं, परमपद दायकं, लायकं जिनपदं विमलभानं । चतुरधिकतीस३४ अतिशय अमल बारगुण१२ वचन पणतीस३५ गुणमणिनिधानं ॥ अइयो ॥ १ ॥ सुखकरण जिन चरण पद्मसेवित सदा, भमर सुर असुर नर हृदयहारी । एह जिनवर तणी आण पूरण सदा, दाम जिम जगतजन शिरसि धारी ॥ अइयो ॥ २ ॥ जिनप

पद्दरस, पारस फरसते हुवे, प्रगट निज रूप परिणति विभास। तजिय वहिरात्म, गिरिसारता भवि लहे, अनुपम आत्मकांचन प्रकाशं ॥ अइयो ॥ ३ ॥ हुवइ जिनराज पद, जाप रवि किरणतें, तुरत बहु दुरित भर तिमिर नाश। घनचिदानन्द वरकंदघन भवि लहे, तीर्थंकरचरण कमलाविलासं ॥ अइयो ॥ ४ ॥ वर विबुध मणि लही काच लघु शकलकों, ग्रहण करवा कवण कर पसारे। तिम लही जिन चरण, शरण शुभ योगसे, अवर सुरशरण कुण हृदय धारे ॥ अइयो ॥ ५ ॥ प्रभु तणे पंच, कल्याण केरे दिने, प्रगट तिहु लोक में हुइ उजेरो। भविक देवपाल, श्रेणिक प्रमुख जिन नमी, बाधियो गोत्र जिनराज केरो ॥ अइयो ॥ ६ ॥ जेह त्रिण काल, नित नमें जिन हरखशु, तेह भवजल तरे जनम आजे। अधिक भव यदि करे, तदपि निश्चय करी, सप्त वलि अष्टभव करीय सीझे ॥ अइयो ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

णमोणतविन्नाण सद्दसणाण, सयाणदिया सेसजतूगणाण ॥ भवाभोज विच्छेयणं वारणाण, णमोरोहियाण वराण जिणाण ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री अर्हद्भ्यो नमः अष्ट द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ द्वितीय श्रीसिद्धपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तनु त्रिभागके घटनतें, घन अवगाहन जास।
विमल नाण दंसण कियो, लोकालोक प्रकाश ॥
अविनाशी अमृत अचल, पदवासी अविकार।
अगम अगोचर अजर अज, नमो सिद्ध जयकार ॥

॥ राग सोरठ ॥

(चाल—कुँदकिरण शशि ऊजलो रे देवा)

अनुभव परमानन्दशुं रे वाला, परमातम पद वंदों रे। करम निकंदो वंदीने रे वाला, लहि जिनपद चिरनन्दो रे ॥ १ ॥ गगन पएसंतर वली रे वाला, समयान्तर अणफरसी रे। द्रव्य सगुण परजायना रे वाला, एक समय विध दरसी रे ॥ २ ॥ एक समय ऋजुगति करी रे वाला, भए परमपद रामी रे। भांगे सादि अनंतमा रे वाला, निरुपाधिक सुखधामी रे ॥ ३ ॥ अखिल करममल परिहरो रे वाला, सिद्ध सकल सुखकारी रे। विमल चिदानन्द घन थया रे वाला, वर इकतीस गुण धारी रे ॥ ४ ॥ उत्पन्नता वलि विगमता रे

वाला, ध्रुवता त्रिपदी संगे रे। प्रभुमें अनत चतुष्कता रे वाला, सोहे शमक्रम भगे रे ॥ ५ ॥ पनर भेदै ए सिद्ध थया रे वाला, सहजानंद स्वरूपी रे॥ परम ज्योतिमें परिणम्यारे वाला, अव्याबाध अरूपी रे ॥ ६ ॥ जिणवर पण प्रणमें सदा रे वाला, एहने दीक्षा अवसरे रे। तिण प्रभुपद गुणमालिका रे वाला, कंठ धरिये सुपरे रे ॥ ७ ॥ हस्तिपाल भवि भगतिशुं रे वाला, सिद्ध परमपद भजिने रे। पद श्रीजिनहरखे लह्यो रे वाला, परगुण परणति तजिने रे ॥८॥

॥ काव्य ॥

लोगग्गभागोपरि संठियाण बुद्धाणसिद्धाण मणिंदियाण। निस्सेस कम्मक्खय कारगाण, णमोसया मगल धारगाण ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीसिद्धेभ्यो नमः अष्ट द्रव्य यजामहे स्वाहा ॥ २ ॥

॥ तृतीय प्रवचनपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पद तृतीय प्रवचन नमो, ज्यू न भमो ससार।
गमो कुमति परिणमनता, दमो करण भयकार ॥
जैसे जलधर वृष्टितें, अखिल फलद विकसाय।
तैसे प्रवचनभक्तितें, शुभ परिणति उलसाय ॥

॥ श्री राग ॥

(चाल—जिनगुणगानं श्रुत अमृतं।)

प्रवचन ध्यानं सुखकरणं। परिहरिये सहु विषय विकारं, करिये प्रवचन आदरणं ॥ प्र० ॥ १ ॥ सप्त भंगि भूषित ए प्रवचन, स्याद्वाद मुद्राभरणं। सप्त नयात्मक गुणमणि आगर, बोधिबीज उतपति करणं ॥ प्र० ॥ २ ॥ जैसे अमृत पान करणतें, हुवे सकलविषसंहणं। तैसे प्रवचन अमृत पाने, कुमति हलाहल प्रविसरणं। प्र० ॥ ३ ॥ प्रवचनको आधेय ए कहिये, सकलसंघ तसु अधिकरणं। तिण ए संघ चतुर्विध प्रवचन, ए पद अखिल कलुष हरणं ॥ प्र० ॥ ४ ॥ यदि भविजन तुम ए चाहतु हा, सुगति रमणिको वशकरणं। करण तीन इक करि तद करिये, प्रवचन पद समरण धरणं ॥ प्र० ॥ ५ ॥ जिनवरजो पण ए तीरथने, प्रणमे मध्य समवसरणं। भवजल तारण तरणि समानं, ए तीरथ अशरण शरणं ॥ प्र० ॥ ६ ॥ जिम भरतेसर संघ भगति करी, कहियो पुण्यफलाचरणं। चक्री पद अनुभवि वलि शिवपद, लीध करिय कर्म निर्जरणं ॥ प्र० ॥ ७ ॥ नरपति संभव जिनहरषे करि,

आराधी प्रवचन चरणं। करम निकंदि थया जगदीसर,
जिनप रमा उर आभरण ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ काव्य ॥

अणंत संसुद्ध गुणायरस्स, दुक्खंधयारुग्गदिवायरस्स।
अणंतजीवाण दयागिहस्स, णमो णमो सघ चउव्विहस्स ॥१॥
ॐ ह्री श्रीप्रवचनाय नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ॥३॥

॥ चतुर्थ आचार्य पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पद चतुर्थ नमिये सदा, सूरीसर महाराज।
सोहम जबू सारिसा, सकल साधु सिरताज ॥
सारण वारण चोयणा, पडिचोयण करतार।
प्रवचनकज विकसायवा, सहस किरण अवतार ॥

॥ राग रामगिरी ॥

(तर्ज—गात्र लूटे मनरंग सुरे वाला)

आचारिज पद ध्याइयेरे वाला, तास विमल गुण गाइये। पाइये, हाहो रे वाला पाइये। जिनपति पद जगशिर तिलो रे ॥ आ० ॥ १ ॥ जिन शासन उजवालता रे वाला, सकलजीव प्रतिपालता ॥ पालता हा० ॥ पालता चरण करण मग चालतां रे ॥ आ० ॥ २ ॥ सूरि सकल

गुण सोहता रे वाला, सुरनर जन मन मोहता ॥ मोहता हां हो० भवियणने पडिबोहता रे ॥ आ० ॥ ३ ॥ पंचाचार विराजिता रे वाला, सजल जलद जिम गाजता ॥ गाजता हां हो० ॥ सूरि सकल सिर छाजता रे ॥ आ० ॥ ४ ॥ उपदेशामृत वरसता रे वाला, दुरित ताप सहु निरसता ॥ निरसता हां हो० ॥ परमातम पद फरसता रे ॥ आ० ॥ ५ ॥ धरम धुरंधरता धरा रे वाला, जगबांधव जग हितकरा ॥ हितकरा ॥ हां हो० ॥ स्वपर समय विद गणधरा रे ॥ आ० ॥ ६ ॥ पद श्रीजिनहरषे ग्रह्यो रे वाला, सूरीसर पद तप वह्यो । तप वह्यो हां हो० । पुरुषोत्तम नृप शिव लह्यो रे ॥ आ० ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

कुवादि केली तरु सिंधुराणं, सूरीसराणं मुणिबन्धुराणं ।
धीरत्तसन्तजिजय मंदराणं णमो सया मंगलमंदिराणं ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं श्री आचार्येभ्यो नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥४॥

॥ पंचम स्थविर पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

द्विविध थिविर जिनवर कह्या, द्रव्य भाव परकार ।
लौकिक लोकोत्तर वली, सुणिये भेद विचार ॥

जनकादिक लौकिक थिविर, लोकोत्तर अणगार।
पञ्चम पदमें जाणिये, द्वितीय थिविर अधिकार॥

॥ राग सारंग ॥

नित नमिये थिविर मुनीसरा। पंच महाव्रत धारक तारक, कुमति जगत जन हितकारा॥ नि०॥ १॥ संयम योगे सीदत पालक, ग्लानादिक सहु मुनिवरा। एहने उचित सहाय दियणते, वारे एहना दुःखभरा॥ नि० ॥ २॥ पर्याय वय श्रुत त्रिविध ए थिविरा, वीसरु साठ वरसो परा। वयधर समवायादिक पाठक, एह थिविर गुण आगरा॥ नि०॥ ३॥ त्रीजे अङ्ग कह्या दस थिविरा, रत्नत्रयीना गुणधरा। ते इह निर्मल भावे ग्रहिना, भविक सरोज दिवाकरा॥ नि०॥ ४॥ क्षीरजलधि सम अतिहि गंभीरा, सुरगिरि गुरु धीरज धरा। शरणागत तारणता धारा, ज्ञान-विमल जल सागरा॥ नि०॥ ५॥ श्रुत तप धीरज ध्यान धरणने, इत्यादिक शातातरा। तेह स्वरूप-स्मरण कर्या थिविरा, नहिय धवल केशांकुरा॥ नि०॥ ६॥ एह थिविरपद सेवी भवने, पद्मोत्तम वसुंधरा। पद श्रीजिन हरखे निज लहियो, मुनिवर कुमुद निशाकरा॥ नि०॥ ७॥

॥ काव्य ॥

सम्मत्तसंयम, पतित भविजन, अतिहि थिर करता भला।
अवगुण अदूषित, गुण विभूषित, चंद्रकिरण समुज्जला ॥
अष्टाधिकादश सहस शीलांग, रथ रुचिर धाराधरा। भव
सिंधु तारण, प्रवर कारण, नमो थिविर मुनीसरा ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं श्री स्थविराय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥५॥

॥ षष्ठ उपाध्याय पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रवरनाण दरसण चरण, धारक यतिधर्म सार।
समितिपंच त्रिण गुप्तिधर, निरुपम धीरज धार ॥
चरणकमल जेहनां नमे, अहोनिश सुर नर राय ॥
जड़तागिरिदारण कुलिश, जयजय श्रीउवझाय ॥

॥ राग भैरव ॥

(तर्ज —पंच वरणी अंगी रची)

भाव धरी उवझाया वंदो, विजयकारी। श्रीउवझाय परमपद वंदी, लहो जिनपद अतिशय धारी ॥ भा० ॥ १ ॥ कुमति मदतरु भंजन सिंधुर, सुमतिकंद घन अवतारी। अंग दुवादस भणे भणावे, शिष्य भणी चित्त हितधारी ॥ भ० ॥ २ ॥ सकल सूत्र उपदेश दियणतें, वाचक अति

विमलाचारी। भव त्रीजे अमृत सुख पावे, सुर असुरेन्द्र मनोहारी ॥ भा० ॥ ३ ॥ हय गय वृष पंचानन सरिखा, करमकद वर तरवारी। वासुदेव वासव नृप दिनकर, विधु भंडारि तुला धारी॥ भा० ॥ ४ ॥ जंबू सीता नदि कांचनगिरि, चरम जलधि ओपम भारी। ए ओपम बहु श्रुतनी जाणो, उत्तराध्ययन कही सारी॥ भा० ॥ ५ ॥ अमल पंचविंशति गुण मणि निधि, सकल भुवन जन उपकारी। संशय तिमिर हरण वासरमणि, पाप ताप आतप वारी॥ भा० ॥ ६ ॥ प्रवर संख पय भरियो सोहे, तिम ए ज्ञान चरण चारी। महेन्द्रपाल पाठकपद सेवी, लहियो जिनपद विजितारी॥ भा० ॥७॥

॥ काव्य ॥

मन्त्रोदि बीजाङ्कुर कारणाणं, णमो णमो जायग वारणाणं।
कुबोधि दती हरिणेसराणं निग्घोष सतार पयोहराणं ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीउपाध्यायेभ्यो नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ॥६॥

॥ सप्तम साधुपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जाणे जिनवाणी नरम, स्याद्वाद गुणवत्त।
मुनि कहिये शिर पयने, साधे साधु कहृत ॥

शमता रस जल झीलता, विशदानंद सुरूप।
तिण पाम्या पद सप्तमे, नमो नमो मुनि भूप॥

॥ राग गुंड मिश्रित भीम मल्हार॥

(तर्ज—मेघ वरसे भरी पुष्प वादल करी)

भक्ति धरि सातमे, पद भजो मुनिवरा, सुखकरा विजित इंद्रिय विकारा। गुण सतावीश, भूषण करि शोभिता, क्षोभिता विकट क्रम सुभट सारा॥ भ० ॥ १ ॥ चरणसत्तरि परम, करणसत्तरि धरा, शिव करण नाण किरिया प्रधाना। प्रतिदिने दोष, आहारना वरजिता, सप्त चालीश यति धर्म निधाना॥ भ० ॥ २ ॥ मदन मद भंजता, कुमति जन गंजता, भक्त जन रंजता क्षांति भरिया। सुमति धरिया सदा, चरण परिया जना, तारिया ज्ञान गंभीर दरिया॥ भ० ॥ ३ ॥ तृणमणि सम गिणे, चतुर विध धर्मना, परम उपदेश दायक उदारा। बहिरभ्यंतर भिदा, बारविध अति कठिन, तप तपे सकल जीउ अभयकारा॥ भ० ॥ ४ ॥ वलि अठावीश, मनहरण गुण लब्धि निधि, सातमे छट्ठ गुणठाण वसिया। सप्त भय वारका, प्रवरजिन आगन्या, धारका स्वगुण परिणमन रसिया॥ भ० ॥ ५ ॥ पंच परमाद, कल्लोलताकुल महा,

पार संसार सागर जिहाजा। विविध नव वाडि युत, शील व्रतके धरा, मधुर निज वाणि रजित समाजा ॥ भ० ॥ ६ ॥ कोडि नव सहस थुणिये महामुनिवरा, वीरभद्र जिम करिय साधु सेवा। परमपद जिनहर्ष सुग्रह्यो तसु तणा, चरणकज युग नमे सकल देवा ॥ भ० ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

संतज्जिया सेसपरीसहाणं, निस्सेस जीवाण दयागिहाण। सन्नाण पज्जाय तरूवणाणं, णमो णमो होउ तनोधणाण ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री सर्वसाधुभ्यो नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ ७ ॥

॥ अष्टम श्रीज्ञानपदपूजा ॥

॥ दोहा ॥

विमल नाण वर किरण किय, लोकालोक प्रकाश।
जीत लही निज तेजसे जिण अनत रविभास ॥
सहु सशय तम अपहरे, जय जय नाण दिणंद।
नाण चरण समरण थकी, विलयहोय दुख दद ॥

॥ राग घाटो ॥

(तर्ज—मेरो मन वस कर लीनो जिनवर प्रभु पास)

भावे ज्ञान वदन करिये, शिवसुख सुर तरु कंद ।भा०।
जिनचन्द्र पद गुण धरिये, वरिये परम आनद ॥ भा० ॥१॥

मतिनाण श्रुत पुनरवधि, मनपरजय जाण । भा० । लोकालोक भाव प्रकाशी, वर केवलनाण ॥ भा० ॥२॥ पंच ए इकावन भेदे, कह्यो जिनवर भान । भा० । जगजीव जडता छेदे, ज्ञानामृत रस पान ॥ भा० ॥ ३ ॥ विन ज्ञान कीधी किरिया, होय तसु फल ध्वंस । भा० । भक्षाभक्ष प्रगट ए करिये, जिम पय जल हँस ॥ भा० ॥ ४ ॥ वर नाण सहित सुकिरिया, करी फल दातार । भा० । हुवो ज्ञान चरण रसिला, लहो भवजलपार ॥ भा० ॥ ५ ॥ ज्ञानानंद अमृत पीधो, भरतेसर महाराय । भा० । तिणसें अमृत पद लीधो, सुरपति गुण गाय ॥ भा० ६ ॥ सेवी ज्ञान जयंत नरेश, भये जिन महाराज । भा० । सोहे ज्ञानए त्रिभुवनमें, सहु गुणपरि सिरताज भा० ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

छद्दव्व पज्जाय गुणुक्करस्स, सया पयासी करणोद्धुरस्स । मिच्छत्त अन्नाण तमोहरस्स, णमो णमो नाणदिवायरस्स ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीज्ञानाय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ ८ ॥

॥ नवम दर्शनपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दरिसण आश्रय धर्मनो, एहनां पट् उपमान ।
दरसण विण नहि चरणविद, उत्तराध्ययनें जाण ॥

जिनदरसण फरस्यो भलो, अंतर मुहुरत मान ।
अर्द्ध पुग्गल परियट रहे, तसु संसार वितान ॥

॥ राग कामोद ॥

(तर्ज—चंपक केतक मालती ए)

जिणदरिसण मुझ मनवस्यो ए, अडयो मन वस्यो ए, उपजत परम आनन्द । जिनदरसण दरसण दिये, विमल नाण तरु कंद ॥१॥ दरसण मोह रिपु जीतिया ए ॥अ०॥ वर सरसण उलसंत । दरसण घट परगट हुवा, भवियण भव न भमत ॥ २ ॥ जिनवर देव सुगुरु व्रती ए ॥ अ० ॥ केवलि कथित जिनधर्म । तीन तत्त्व परिणति रमे, ते दरसण करे शर्म ॥ ३ ॥ जिन प्रभु वचनोपरि सदा ए ॥ अ० ॥ थिर सरदहण धरत । इण लक्षणते जाणिये, समकितवंत महंत ॥ ४ ॥ इग दुग ति चउ पर दस विहा ए, सत्तसठि भेदविचार ॥ अ० ॥ वलि पररीति समकित भण्यो, द्रव्य भाव परकार ॥ ५ ॥ द्रव्ये जिण दरसण कह्यो ए ॥ अ० ॥ भावे समकित सार । द्रव्यत दरसण भावतो, दरसण कारण धार ॥ ६ ॥ द्रव्य दरस यदिगत वली ए ॥ अ० ॥ तदपि उत्तर हितकार । सय्यंभव जिनदरसणे, पायो दरसण सार ॥ ७ ॥ दरसण विण किरिया हता ए

॥ अ० ॥ अंक विना जिम बिंदु । बलि हणियो विन चन्द्रिका, वासरमें जिम इन्दु ॥ ८॥ हरिविक्रम नृप सेवतो ए ॥ अ० ॥ दरसण पद अभिराम । पद श्रीजिनहरषे धर्यो, वधते शुभ परिणाम ॥ ९ ॥

॥ काव्य ॥

अणंत विन्नाण सुकारणस्स, अणंत संसार विदारणस्स । अणंत कम्मावलि धंसणस्स, णमो णमो निम्मलदंसणस्स ॥१॥ ॐ ह्रीं श्री दर्शनाय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ ९ ॥

॥ दशमी विनयपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

विनय भुवन रंजन करे, विनये जस विसतार ।
विनय जीव भूषित करे, विनये जयजयकार ॥
विनय मूल जिनधर्मनो, विनय ज्ञानतरु कंद ।
विनय सकलगुण सेहरो, जयजय विनय समंद ॥

॥ राग सामेरी ॥

(तर्ज—पूजोरी माई जिनवर अंग सुगंधे)

ध्यावोरी माई, विनय दशम पद ध्यावो । पंच भेद दश विध तेरस विध, बावन भेद गणेशे । बासठ भेद कह्या

आगममें, विनयतणा सुविशेषे ॥ ध्या० ॥१॥ तीर्थंकर सिद्ध कुल गण संघा, किरिया धर्म वरनाणा। नाणी आचारिज मुनि थविरा, पाठक गणि गुण जाणा ॥ ध्या० ॥२॥ ए अरिहादिक तेरस पदनो, विनय करे जे भावे। ते तीर्थंकर पद अनुभविने, अमृतपद सुख पावे ॥ ध्या० ॥३॥ जिम कंचनमें मृदुगुण लाभे, नहीय कालिमा पावे। तिण ए सकल धातुमें उत्तम, नाम कल्याण कहावें ॥ ध्या० ॥४॥ तिम-विनयीमें छे मृदुता गुण, कुमति कठिनता नासे। कृष्णादिक लेश्यानी मलिनता, जाये विनय गुण भासे ॥ ध्या० ५ ॥ दोय सहस अरु अधिक चिहुत्तर, देवनदन निरधारो। गुरुनंदन विधि नारसे बाणूं, भेद वरी उर धारो ॥ ध्या० ॥६॥ तीर्थंकरादिकनो मन रंगे, विनय चरण शुभ ध्यायो। धन नामा भविजन शुभयोगे, पद जिनहर्ष पायो ॥ ध्या० ॥७।

॥ काव्य ॥

आणंदिया सेसजगज्जणस्स, कुंदिंदु पादा मलताचणस्स। सुधम्म जुत्तस्स दयामयस्स, णमो णमो श्रीजिणयालयस्स ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीजिनयाय नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ॥१०॥

॥ एकादशम चारित्रपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

इग्यारम पद नित नमुं, देश सरव चारित्र ।
पंक मलिनता दूर करि, चेतन करे पवित्र ॥
एह चरण सेवन करे, रंक थकी सुरराय ।
तीन जगतपति पद दिये, जसु सुर नर गुणगाय ॥

॥ राग सारंग ॥

(तर्ज—हां हो देवा बावन चन्दन घसि कु०)

चरण शरण मुझ मन हर्यो, सुख करण हरण घन पाप ए ॥ हां हो रे वाला ॥ एह चरण जलधर हरे, अज्ञान तरुणतर ताप ए ॥ हां ॥ १ ॥ आठ कषाय निवारतां, देशविरति प्रगट हुवे खास ए ॥ हां ॥ बार कषाय निवारिया, समविरति लहे गुणवास ए ॥ हां ॥ २ ॥ इगवासर सेव्यो थको ; शुद्ध सर्व संवरचारित्र ए ॥हां॥ परमानंद घन पद दिये, सुरलोक जनित सुखचित्र ए ॥ हां ॥३॥ भवभय तरुगण छेदवा, ए संयम निशित कुठार ए ॥ हां ॥ ज्ञान परंपर करण छे, अमृत पदनो हितकार ए ॥ हां ॥४॥ चरण अनंतर करण छे, निरवाण तणो निरधार ए ॥ हां ॥ सरवविरति शुद्ध चरणसे ; पामे अरिहंत पद सार ए ॥ हां

॥ ५ ॥ वरस चरण परजायमे, अनुत्तर सुख अतिक्रम होय ए ॥ हां ॥ सतर भेद चारित्रना, कहिया जिन आगम जोय ए ॥ हां ॥ ६ ॥ देशथी सम सयम विषे, उज्जवलता अनत गुण थाय ए ॥ हां ॥ अरुण देव सेवी चरणने, भये जगगुरु जिन महाराय ए ॥ हां ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

कम्मोघकतार दवानलस्स, महोदयानन्द लयाजलस्स।
विन्नाण पकेरुहकाणणस्स, नमो चारित्तस्स गुणापणस्स ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीचारित्राय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥११॥

॥ द्वादश ब्रह्मचर्यपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुरतरु सुरमणि सुरगवी, काम कलश अवधार।
ब्रह्मचर्य इण सम कह्यो, कामित फलदातार।
जिम जोतिषिया रजनिकर, सुरगणमे सुरराय।
तिम सहु व्रत सिर सेहरो, ब्रह्मचरिजकहवाय ॥

॥ राग काफी जंगलो ॥

(तर्ज—भला प्रभुगुण वाल्हा हो)

भवभयहरणा शिवसुखकरणा, सदा भजो ब्रह्मचारा (मैं वारी जाऊँ सदा०) हो ॥ भ० ॥ शील निवुध तरु

प्रतिपालनकों, कहि जिनवर नववारा हो ॥भ०॥ दिव्यो-दारिक करण करावण, अनुमति विषय प्रकारा हो ॥ भ० ॥ १ ॥ त्रिकरण जोगें ए परिहरियें, भजियें भेद अढारा हो ॥ भ० ॥ कनक कोडिनो दान दिये नित, कनक चैत्य करतारा हो ॥ भ० ॥ २ ॥ एहथी ब्रह्मचरज धारकनो, फल अगणित अवधारा हो ॥ भ० ॥ सहस चोरासी श्रमण दान फल, सम ब्रह्मव्रतफल सारा हो ॥ भ० ॥ ३ ॥ विजयशेठ विजया शेठाणी, उभय पक्ष ब्रह्मधारा हो ॥ भ० ॥ भये सुदर्शन शेठ शीलसें, मुगतिवधू भरतारा हो ॥ भ० ॥ ४ ॥ सहस अढार शीलांगरथ धारा, धार करो निसतारा हो ॥ भ० ॥ सिंहादिक वसुभय तरु भंजन, सिंधुर मद मतवारा हो ॥ भ० ॥ ५ ॥ कलहकारि नारदऋषि सरिखे, तर्या भवजलधि अपारा हो ॥ भ० ॥ पच्चक्खाण विरति नहि एहमें, ए ब्रह्मव्रत उपगारा हो ॥ भ० ॥ ६ ॥ सकल सुरासुर किन्नर नरवर, धरिय भगति हितकारा हो ॥ भ० ॥ ब्रह्मचरज व्रतधर नरवरके, प्रणमे चरण उदारा हो ॥ भ० ॥७॥ दशमे अंगे भणियो नरवर्मा, नरपति गुण आधारा हो ॥ भ० ॥ ब्रह्मचरज व्रत पाल लह्यो पद, जिनहर्षे जयकारा हो ॥ भ० ॥ ८ ॥

॥ काव्य ॥

सग्गापवग्गग्ग सुहप्पयस्स, सुनिम्मलाणंत गुणा-लयस्स ।
सव्वन्वया भूपण भूपणस्स, णमोहि सीलस्स अदूसणस्स ॥१॥
ॐ ह्रीं श्री ब्रह्मचर्याय नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाह ॥१२॥

॥ अथ त्रयोदशी क्रियापद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

करम निरजरा हेतु है, प्रवरक्रिया गुण खाण ।
जिनशासननी स्थिति रहि, किरियारूपे जाण ॥
भुवनमाहि किरिया मही, सकल शुद्ध विवहार ।
प्रवरनाण दरिसणतणो, शुद्ध किरिया सिणगार ॥

॥ राग मालवी गौडी ॥

(तर्ज—सन अरति मथनसुदार धूपं)

शुभ ध्यान किरिया हृदय धरोने, धर्म सकल उरधार रे। आर्त्त रौद्रनी हेतु किरिया अशुम पणनीस वार रे ॥ शु० ॥१॥ ज्ञानवत अशस्त्र भट हे, किरिया शस्त्र वतस रे। सुभट नाणी क्रियाशस्त्रे, करे कर्म अरिध्वस रे ॥ शु० ॥२॥ ज्ञानसेति वदे शिव यदि, तेरमे गुणठाण रे। एकनाणं करि जिनेसर, किमु न लहे निरवाण रे ॥ शु० ॥३॥ जिनप शैलेशीकरण करी, चउदमे गुणठाण रे। सरन

संवर चरण करणें, लहे पद निरवाण रे ॥ शु० ॥ ४ ॥ ए अनंतर अमृत कारण, कह्यो जिनवर भाण रे। सरव संवर चरण किरिया, न शिव इण विणु जाण रे ॥ शु० ॥ ५ ॥ एक नाणें इक क्रियामें, न शिव वितरण शक्ति रे। कहे जिनवर उभय योगें, लहे भविजन मुक्ति रे ॥ शु० ॥ ६ ॥ गरल मिश्रित सरस भोजन अशुभ परिणति धार रे। अमृत संयुत तेह भोजन, रूचिर परिणति कार रे ॥ शु० ॥ ७ ॥ ज्ञानसहित तेम किरिया, करि करे निसतार रे ॥ ज्ञान विणु किरिया न दीपे, मनोगत फलसार रे ॥ शु० ॥ ८ ॥ ज्ञान परिणत रमी किरिया, तेह किरिया सार रे। भयो हरिवाहन जिनेसर, शुद्ध किरिया धार रे ॥ शु० ॥ ६ ॥

॥ काव्य ॥

विशुद्धसद्धाण विभूसणस्स, सुलद्धि संपत्तिसुपोसणस्स।
णमो सदाणंतगुणप्पदस्स, णमो णमो सुद्धक्रियापदस्स ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीक्रियायैनमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥१३॥

॥ चतुर्दश तप पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

समतारस युत तपरुचिर, भणियो जिनजगभान।
शिवसुर सुख चंदनफलद, नंदनविपिन समान ॥

सघन करम कानन दहन, करन विमल तप जान ।
विपिन धूमकेतन समो, जय तप सुगुणनिधान ॥

॥ राग कल्याण ॥

(तर्ज—तेरी पूजा बनी है रस मे)

मेरी लगी लगन तप चरणे ॥ मे० ॥ सकल कुशलमें प्रथम कुशल ए, दुरित निकाचित हरणे ॥ मे० ॥ १ ॥ जैसे गणधरकी जिनचरणे, चातक की जलधरणे ॥ मे० ॥ जैसी चक्रवाककी अरुणें, चकोरको हिमकर किरणें ॥ मे० ॥२॥ जिनवर पण तद्भव शिव जाणे, त्रण चउ नाण सुकरणें ॥ मे० ॥ तदपि सुकोमल करण चरणने, ठवय कठिन तप करणें ॥मे०॥३॥ कपट सहित तप चरणधरणते, वांछित फल नवि तरणें ॥ मे० ॥ नित ए दम रहित तपपदके, सुरपति गण गुण वरणे ॥ मे० ॥ ४ ॥ पीठ महापीठ मुनि मल्लीजिन, पूरव भव तप शरणें ॥ मे० ॥ रहिया तदपि कपट नवि छंड्यो, भये स्त्री गोत्राचरणें ॥ मे० ॥ ५ ॥ दृढप्रहारी पांडव घनकरमी, छंड्या करमावरणे ॥ मे० ॥ तपसे शोभ लही त्रिभुवनमे, केवल कमलाभरणे ॥ मे० ॥ ६ ॥ लाख इग्यारह असी हजारा, पचसय शर दिन खिरणें ॥मे०॥ मासखमण करि नदन मुनिवर, पाम्यो फल

शिव धरणों ॥ मे० ॥ ७ ॥ तप करियो गुणरयण संवत्सर, खंधक शमता-दरणों ॥ मे० ॥ चउदसहस मुनिमें कह्यो अधिको, धन्नो तप आचरणों ॥ मे० ॥ ८ ॥ वहिरभ्यंतर भेदे ए तप, बार भेद अधिकरणै ॥ मे० ॥ वसिने कनककेतु पाम्यो पद, जिनहरषे भवतरणौं ॥ मे० ॥ ६ ॥

॥ काव्य ॥

लद्धीसरोजावलितावणस्स, सरूवसंगग्ग सुपावणस्स । अमंगलानो कुहदुद्दवस्स, णमो णमो निम्मल सत्तवस्स ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं श्री तपसे नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥१४॥

॥सुपात्रदानाधिकारे पंचदशम गौतमपद पूजा॥

॥ दोहा ॥

गौतम गणधर पनरमे, पद सेवो सुप्रसन्न ।
वलि सहु जिन गणधर नमो, चौदेशे बावन्न ॥
दान सकल जगवश करे, दान हरे दुरितारि ।
मन वांछित सहु सुख दिये ; दान धरम हितकारि ॥

॥ राग सोरठा ॥

(तर्ज—तेरी प्रीति पिछानी हो प्रभु मैं)

पनरम पद गुण गाना हो भवि । पनरम० । भाव धरी करिये मन रंगे, परम सुपात्रे दाना ॥ हो भवि

पनरम० ॥१॥ पात्र कह्या द्रव्य भाव दुभेदे, द्रव्यलच्छन ए जाना ॥ हो भवि प० ॥ सर्वोत्तम उत्तम हुवे भाजन, रतन-कनक रूपाना ॥ हो भवि प० ॥ २ ॥ मध्यम पात्र कहीजे एहवा, ताम्र धातु निपजाना ॥ हो भवि प० ॥ पात्र लोहादिक अपर जातिना, तेह जघन्य कहाना ॥ हो भवि प०॥३॥ भाव पात्रनो लच्छन कहिये, सुणिये सुगुण सयाना ॥ हो भवि प० ॥ पचम चरणधरे वलि वरते, क्षीणमोह गुणठाना ॥हो भवि प० ॥४॥ रतनपात्र सम ते सर्वोत्तम, पात्र कह्यां जिन भाना ॥हो भवि० प०॥ प्रवर नाण किरियाधर मुनिवर, लाभालाभ समाना ॥ हो भवि प० ॥५। ते काचन भाजन सम कहिये, भवजल तारन याना ॥ हो भवि प० ॥ शुद्ध मन द्वादस व्रत दरसन धर, तार-पात्र सम जाना ॥ हो भवि प० ॥६॥ शुद्ध समकितधर श्रेणिक परमुख, रह्या अविरति गुणठाणा ॥ हो भवि प० ॥ ताम्रपात सम एहने कहिये, भावी गुणमणि खाना ॥ हो भवि प० ॥७॥ अपर सकलजन मिथ्यादृष्टि, लोहादिक पात्र गिनाना ॥ हो भवि प० ॥ जिनशासन रगे रंगाना, वाचयम सुप्रमाना ॥ हो भवि प० ॥८॥ एहने दान दिया शिव लहिये, एह सुपात्र पहिचाना ॥ हो भवि प० ॥ पचदान दशदान निरूपमें,

अभयसुपात्र महिराना ॥ हो भवि प० ॥९॥ नरवाहन शुभ पात्र दानतें, भये जिनहरष निधाना ॥ हो भवि प० ॥ शालिभद्र वलि सुरसुख लहियो, सुर नर करय वखाना ॥ हो भवि प० ॥१०॥

॥ काव्य ॥

अणंतविन्नाण विभाकरस्स, दुवालसंगी कमलाकरस्स ।
सुलद्धवासा जरगोयमस्स, णमो गणाधीसर गोयमस्स ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीगौतमाय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ षोडश वेयावच्चपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सोलम पदमें जाणियें, वेवाच्च विधान ।
अखिल विमल गुणमणितणो, सोहेप्रवर निधान ॥
जिन सूरि पाठक मुनि, बालक वृद्ध गिलान ।
तपसी चैत्य संघकी करो, वेयावच्च प्रधान ॥

॥ राग जंगलो ॥

(तर्ज—मुने म्हारो कत्र मिलसे मनमेलू दे०)

सेवो भाई, सोलमपद सुखकारी । श्रीजिनचन्द्र प्रमुख दशपद नो, करो वेयावच्च भारी ॥ १ ॥ श्रीतीर्थङ्कर त्रिभुवन शंकर, अवर केवली हारी । मनपर्यवधर अवधि-

नाणधर, चौदपूरव श्रुत धारी ॥ से० ॥२॥ दशपूर्वि उत्कृष्ट चरणधर, लब्धिवंत अणगारी। ए जिन कहिये इन वदनते, भवि हुवे जिन अवतारी ॥ से० ॥३॥ जिनमंदिर बिम्ब करिय भरावे, पूज करे मनुहारी। वेयावच्च कहिये ए जिनकी, करिये भवजलतारी ॥ से० ॥ ४ ॥ आचारिज परमुख नवपदकी, वेयावच्च त्रिजितारी। भक्तिपूर्व वस्त्रौषध अनजल, देवे गुणविस्तारी ॥ से० ॥ ५ ॥ पंचसय मुनिनी करिय वेयावच्च, पूरवभव व्रतधारी। भरत बाहुबलि चक्रिपदभुज, बल लह्यो वरी शिवनारी ॥ से० ॥६॥ नंदिषेण सुलसा मुनिजनकी, करीय वेयावच्च सारी। तिनसे स्वर्गलोकमे दुईकी, भईय प्रशंसा भारी ॥ से० ॥७॥ इत्यादिक सोलमपद उधरे, बहुलभव्य क्रमजारी। तिनमें इन वेयावच्चपदकी, वारि जाउँ वार हजारी ॥ से० ॥८॥ नृप जीमूतकेतु सोलमपद, सेवी भये दुखवारी। श्रीजिन हर्ष धरो हरिवंदित, शरणागत निसतारी ॥से०॥९॥

॥ काव्य ॥

मणुण्ण सव्वातिसया सयाण, सुरासुराधीसर वंदियाणं।
रविंदु बिंबामल सग्गुणाण, दयाप्रधाण हि नमो जिणाण ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीजिनेभ्यो नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तदश समाधि पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सतरम पदमें सेविये, सहु सुख करण समाधि।
जिन सेवनतें भविकनो, गमे व्याधि अरु आधि ॥
ब्रह्मनगर पथि विचरतां, वर पाथेय समान।
ए समाधि पद जाणिये, सुरमणि किये हैरान ॥

॥ राग कहरवो ॥

(तर्ज—बाजे तेरा बिछुआ रे बा०)

मेरो रे समाधि चरण चित वसियो, तसु गुण समरण कियो मनु वसियो ॥ मे० ॥ सकल जगत जन जिनकु स्तवतुहे, अनुभवरंगे अतिहि विकसियो ॥मे० ॥१॥ द्रव्यत भावत दुविध समाधि, सुरतरु मानु नित भुवन विलसियो। असन वसन सलिलादिक भक्ति, करिय संघनी करुणा रसियो ॥ मे० ॥२॥ द्रव्य समाधि प्रथम ए सुणिये, कह्यो जिन लोकालोक दरसियो। सारण वारण चोयण प्रमुखे, पतित सुथिर करे धर्ममें हरसियो ॥ मे० ॥ ३ ॥ भाव समाधि द्वितीय ए कहिये, जो करे सो जिन चरण फरसियो। सकल संघको जो उपजावत, दुविध

समाधि दुरित तसु नसियो ॥ मे० ॥ ४ ॥ समिति पंच त्रण गुपति धरे नित, सुरगिरिवरनो धीरज करसियो। जगत जंतु अघ तपत हरणकुँ अनुभव अमृतधार वरसियो ॥मे०॥५॥ शुक्ल अनिल कर्मेन्धन दाहत, जिनसें परगुण परिणति खिसियो। ए मुनितरणि तेज सम दीपत, अमृत सुखामृतपान तिरसियो ॥ मे० ॥ ६ ॥ इन पदमें ऐसे मुनिजनके, समरनतें हुय जग अनतंसियो। ए पद सेवी नृपति पुरंदर, भये जगपति जिन हरख उलसियो ॥ मे० ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

सन्विदिया पारनिकारदारी, अकारणा सेमजणोवगारी। महाभयातंकगणापहारी, जयो सदा शुद्ध चरित्तधारी ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीचारित्रधारिभ्यो नमः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ॥ १७ ॥

॥ अष्टदशअपूर्वश्रुत ग्रहणरूप ज्ञान पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्रुत अपूर्व ग्रहिये सदा, अष्टादश पद मांहि।
इण पद सेवक जन तणा, सहु संकट भय जाहि ॥
जेमी सुमति विशुद्धता, धार तपे करि होय।
तत् अनंत गुण शुद्धता, सुज्ञानी की जोय ॥

॥ काव्य ॥

(तर्ज—दिलदार यार गवरू, राखुं रे हमारा घट में)

जिनचन्द्र ज्ञान तेरा, महाराज ज्ञान तेरा। हो जीते रे विकट भव भटने। सद्पूर्वज्ञान धरणा, वितरे जिनेन्द्र चरणा, करे सर्व कर्म हरणा। जी० ॥ १ ॥ जगमें महोपकारी, भवसिन्धु वारि तारी, कुमतांधता विदारी ॥ जी० ॥ २ ॥ सहु भावनो प्रकाशी, परम स्वरूप भासो, परमात्म सद्मवासी ॥ जी० ॥३॥ विन हेतु विश्वबन्धु, गुण रत्न राशि सिंधु, समता पीयूष अन्धू ॥ जी० ॥ ४ ॥ स्याद्वाद पक्ष गाजे, नयसप्तसे विराजे, एकान्त पक्ष भाजे ॥ जी० ॥५॥ लहि तीर्थ पाव तारा, इनसे जिनेन्द्र सारा, भविका किया उधारा ॥ जी० ॥ ६ ॥ पद सेवि ए नरिन्दा, भये सागरादि चन्दा, जिनहर्षके समन्दा ॥ जी० ॥ ७ ॥

॥ काव्य ॥

सुद्ध किरिया मंडल मंडणस्स, संदेह संदोह विखंडणस्स।
मुत्ती उपादाण सुकारणस्स, णमोहि नाणस्स जसोधणस्स ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री ज्ञानाय नमः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ एकोनविंशति श्रुतपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पाप ताप संहरण हरि, चंदन सम श्रुत सार।
तत्त्व रमण कारण करण, अशरण शरण उदार ॥

इगुनवीस पदमे भजो, जिनवर श्रुतनी भक्ति।
इनपद वदनसे लहे, विमलनाण युक्त भुक्ति॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—व्रजवासी कान तें मेरी गागर ढोरी रे)

भविजन श्रुतभक्ति, चरण उर धरिये रे। ए श्रुतभक्ति सुमगल माल, विमल केवल कमला वरमाल ॥ भवि० ॥१॥ सकल द्रव्यगण गुणपर्याय, प्रगट करण ए श्रुत मन भाय ॥ भ० ॥ अतुल अनतकिरण समवाय, धरण तरणि-गणनम कहिवाय ॥ भ० ॥२॥ ए श्रुत कुमति युवतिने संग अगणित रमणितणो करे भग ॥ भ० ॥ अरथे भाख्यो श्रीजिनराज, सूत्रे गणधर मुनि सिरताज ॥ भ० ॥ ३ ॥ ए श्रुत सागर अगम अपार, अनत अमल गुणरयणाधार ॥ भ० ॥ भवमय जलनिधि तरण जहाज, निगुणि मगन कई सकल समाज ॥ भ० ॥४॥ भवकोटी लगे तप करी जीव, अज्ञानी करे जितनी सदीव ॥ भ० ॥ कर्मनिरजरा तितनी होय, ज्ञानीके इक क्षणमें जोय ॥ भ० ॥ ५ ॥ एक सदस कोटि छसयकोडि, चतुरतीस कोडि अक्षर जोडि ॥ भ० ॥ अटसठि लाखरु सात हजार, अटसय असीय प्रमित निरधार ॥ भ० ॥ ६ ॥ इतने वरनसे इक पद होय,

एक श्लोकका गणित ए जोय ॥ भ० ॥ इक पद को परिमाण ए जाण, इण पदसे आगम परिमाण ॥ भ० ॥७॥ तीन कोडि अरु अडिसठि लाख, सहस बैयालिस ए पद भाख ॥ भ० ॥ इतने पदसे अंग इग्यार, करी गणना भवि चित्त धार ॥ भ० ॥८॥ बारम दृष्टिवादको मान, असंख्यात पदको पहिचान ॥ भ० ॥ इनको चौदपूरव इक देश, इसको पार लह्यो हे गणेश ॥ भ० ॥६॥ एह दुवालस अंग उदार, एहनी जइये नित बलिहार ॥ भ० ॥ एहनी द्रव्यभाव वहु भक्ति, करिये धरिये जिनपदयुक्ति ॥ भ० ॥१०॥ रत्नचूड नृप सुखमा धार, जिनश्रुत भक्ति करी हितकार ॥ भ० ॥ भये जिन हरष परमपद दाय, जिनके सुर नरपति गुन गाय ॥ भ० ॥११॥

॥ काव्य ॥

अन्नाणवल्ली वणवारणस्स, सुवोहिवीजांकुर कारणस्स ।
अणंतसंसुद्ध गुणालयस्स, णमो दयामंदिर सत्थुयस्स ॥१॥
ॐ ह्रीं श्रीश्रुताय नमः अष्टद्रव्यंयजामहे स्वाहा ॥ १६ ॥

॥ विंशति श्रीतीर्थपद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रावचनी अरु धर्मकथी, बादि निमित्ती जाण ।
तपसी विद्या सिद्ध पुनि, कवि एह मुनित्राण ॥

भाव तीर्थ प्रभुजी कह्या, प्रभाविक ए अष्ट।
तीर्थ प्रभावन जे करे, ते फल लहे विशिष्ट॥

॥ ढाल राग धन्याश्री ॥

(तर्ज —तेज तरण मुख राजे एहनी)

तीरथ परभावन जयकारा ॥ ती० जिनसे भव सागर जल तरिये, ते तीरथ गुण धारा ॥ ती० ॥१॥ जिनके गण घर तीरथ कहिये, वलि सहु संघ सुखकारा। एह महा तीरथ पहिचानो, वदि लहो भवपारा ॥ ती० ॥२॥ अडसठ लौकिक तीरथ तजि करि, भज लोकोत्तर सारा। द्रव्य-भाव दोय भेद लोकोत्तर, स्थिर जंगम भयहारा ॥ ती० ॥३॥ पुण्डरीक परमुख पच तीरथ, चैत्य पंच परकारा। एह वर तीरथ थावर कहिये, दीठां दुरित विदारा ॥ ती० ॥४॥ श्रीसीमंधर प्रमुख वीस जिन, विहरमान भवतारा दोय कोटि केवलि विचरन्ता, जंगम तीर्थ उदारा ॥ ती० ॥५। संघ चतुर्विध जंगम तीरथ, जिन शासन उजियारा। वर अनंत गुण भूषण भूषित, जिनको नमन जिनधारा॥ ती० ॥६॥ ए तीरथ परभावन करिये, शुभ भावन आधारा थिर फल जल निरुपतिम पदकी, जाऊं प्रतिदिन

गुणधर, सकल आगम सागरा। युगप्रवर श्रीजिनचंदसूरि, गुरु सकलसूरीसरा ॥ ४ ॥ तसु चरण कमलज युगलसेवन, अहनिशि मधुकरता धरी। पुन सुगुरुपद, अरविन्द युगनी, कृपा नित चित आदरी। गणधार श्रीजिनहरषसूरी, हरषधरि घन अघहरी। या वीस पदकी, विविध पूजन, विधि तणी रचना करी* ॥ ५ ॥

॥ विंशतिस्थानक आरती ॥

(तर्ज—जिया चतुरसुजाण नवपदके गुण गाय रे)

पिया विंशतिस्थान मंगलआरति गाय रे। सुमति-प्रिया कहे चेसनपतिको, निसुण वचन मन भायरे ॥ पि० ॥ १ ॥ यदि निजगुण परिणति तुम चाहिये, तिणको एह उपायरे ॥ पि० ॥ अरिहंत सिद्ध आचारिज पाठक, साधु सकल समुदाय रे ॥ पि० ॥ २। इत्यादिक विंशति पद समरण, भवभय हरण विधाय रे, एह आरती अरतिवारती,

---

* अट्ठारसय तदुवरि इकोत्तर वरसभाद्रव मासए, परब विशद दशमी रविज वासर अजीमगंजपुर वासए, विंशति पदों की विविध पूजा विध तणि प्रति खासए। उवझाय शिवचंद्र गणियें लिखी मन उल्लासए।

अनुपमसुर सुखदाय रे ॥ पि० ॥ ३ ॥ जैसे भगते करय आरतो, सकल सुरासुरराय रे। तैसे भवि तुमे करो आरती, ए पदगुण चित लाय रे ॥ पि० ॥ ४ ॥ पचप्रदीपसे करय आरती, जे नितचित उलसाय रे। ते लही पंच चिदानन्दघनता, अचल अमर पदपाय रे ॥ पि० ॥ ५ ॥ पच प्रदीप अखंडित ज्योते, दुर्मति तिमिर विलाय रे। एह आरती तुरत तारती, भवजल निपतित थाय रे ॥ पि० ॥ ६ ॥ पद जिनहरप तणी ए करणी, मनहरणी कहिवाय रे। चन्द्रविमल शिव सिधिनिधि धरणी, वरणी किण विध जाय रे ॥ पि० ॥ ७ ॥

— ० —

श्री बालचंद्रोपाध्याय कृत

॥ पंचकल्याणक पूजा

॥ प्रथम च्यवन कल्याणक पू

॥ दोहा ॥

ज्योतिरूप जगदीशनुं, अद्भुत रूप अनुप।
प्रवचन प्रभुता प्रगट पण, जय जय ज्योति सरूप॥
चौवीसे जिनवर नमी, पंच कल्याणक रूप।
शासननायक वरणचुं, दर्शन ज्ञान सरूप॥
कल्याणक ओच्छव करे, इन्द्रादिक जे देव॥
ते भावे भविजन करे, श्रीजिनवरनी सेव॥

॥ राग सरपदो ॥

ज्योति सकल जगदीसना। हां रे जगदीसनी ए॥ चार निक्षेप प्रमाण। नाम जिनादिक जिन कह्या, आगम मांहि प्रधान॥

॥ गाथा ॥

नाम जिणाजिण नामा, ठवण जिणाओ जिणंद पडिमाओ। दव्वजिणा जिण जीवा, भावजिणा समवसरणत्था॥ १॥

॥ ढाल ॥

विन कारण कारज नहीं, हां रे का० ए ॥ ए सब लोक प्रसिद्ध । भाव निक्षेप प्रधानता, कारज रूपे सिद्ध ॥ १ ॥ विण आकारे द्रव्यनो ॥ हां ॥ द्र० ए ॥ नाम न होय विशुद्ध ॥ नाम विना आकारनो, प्रगटपणो नवि शुद्ध ॥ २ ॥ नामादिक कारण सही ॥ हां ॥ का० ए ॥ इन विन भाव न होय । भाव विशुद्धे जिनतणी, पूज करो सहु कोय ॥ ३ ॥ व्यवहारे निश्चय लहे ॥ हां ॥ नि० ए० ॥ कारण कारज होय ॥ पावडशाला क्रम करी, सौध चढे सहु कोय ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानकला कलितातमा, लोकालोक प्रकाश ।
व्यापकभावे थिर रह्यो, शुद्ध विकास विभास ॥

राग—सारंग

हांहो रे देवा जोति सकल जिनराजनी, सहु लोकालोक प्रकाश ए। हांहो रे देवा राजत श्रीजिनराजजी, वाणी प्रवचन शुभवास ए ॥ १ ॥ हांहो रे देवा माता नमुं नित शारदा, गुरु पंच कल्याणक सार ए। हांहो रे देवा तीर्थंकरना वरणुं, गुण शास्त्र परपर धार ए ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

शासननायक जगधणी, त्रिभुवन पति परमेश ।
पर उपगारी प्रभु तणा, गुण गावत सहु वेस ॥

॥ ढाल ॥

हांहो रे देवा वीशथानक करि सेवना, बांध्यु जिन नाम प्रधान ए ॥ हांहो० दिव्य अमर सुख अनुभवे, प्राये प्रभु पुण्य प्रणाम ए ॥१॥ हांहो० निरमलतर वरज्ञानना, धारक कारक शुभयोग ए ॥ हांहो० शब्द वरण रस गंधना, शुभ फरस तणा वर भोग ए ॥२॥ हांहो० शाश्वत सिद्धायण तणा, नित उत्सव करत सुरंग ए ॥ हांहो० बालचन्द्र पाठक कहे, नित मंगल होय सुचंग ए ॥३॥

॥ दोहा ॥

पुण्य पूर्वभव प्रभु तणो, प्रगट्यो प्रगट प्रभाव ।
सुरकुमरी नित प्रति करे, नाटक नव नव भाव ॥

(तर्ज—पूर्व मुख सावनं)

शुद्ध निज दर्शने, करिय गुणकर्षना, जिन-चरण सेवना विविधकारी । हे अईयो विविधकारी ॥ ए आं० ॥

एक जिन धर्ममय परम लय लीनता, दीनता सकल तज, रज निवारी ॥ हे अर्ह० ॥र० ॥१॥ आत्मगुण अन्तरातमपणे वृत्तिता तजिय वहिरात्मजिन आण धारी ॥ हे अर्ह० ॥आ० ॥ २ ॥ शुद्ध सम्यक्त्व गुण, संपदा निज लही, सहीय शुद्ध धर्म रुचि, भास सारी ॥ हे अ० ॥ भा० ॥ ३ ॥ भानुजिम भलहले तेजपु जेकरी, प्रवर वपु भूषणे शोभ भारी ॥ हे अ० ॥ शो० ॥ ४ ॥ विविध मणि रत्ननी जोती जगमग जगे, चन्द्रिका भास भासित करारी ॥ हे अ० ॥ भा० ॥ ५ ॥ प्रवर कुल शुद्ध राजन्य प्रमुखे मुदा, आयुकर बंध नर भव सुधारी ॥ हे अ० ॥ न० ॥ ६ ॥ गर्भ अवतार निज मात उदरे लहे, वाल शुभ लग्न शुभ योगचारी ॥ हे अ० ॥ शु० ॥ ७ ॥

५ सुपारी ५ पान एवं पुष्प व इतर चढावें ।

॥ दोहा ॥

शुभदिन शुभ मुहूरत घडी, शुभ ऊँचे ग्रह चार ।
देवलोक चवि प्रभु लहे, मात उदर अवतार ॥
सुन्दरवर प्रासाद मांहि, मध्यनिशा जिनमात ।
स्वप्न देख सुख सेजमे, जागत अति हरखात ॥

राग काफी, घाटो चैति

(तर्ज —जिनजी हमें कछु दीजें)

जिनजी भजो भवि प्यारा, याते आनंद अधिक अपारा ॥ जि० ॥१॥ सुख सेज सूती जिन माता, देखे सुपना मन भाता। चित्त हरखित हुय तिण वारा ॥ जि० ॥२॥ गज वृषभ सिंह श्रीदेवी, वर पुष्प चन्द्र रवि सेवी। ध्वज कुम्भ पदमसर सारा ॥ जि० ॥ ३ ॥ वर क्षीरसमुद्र विमानं, रयणोच्चय मेरु समानं, निर्धूम पावक सुखकारा ॥ जि० ॥ ४ ॥ शिव धान्य मंगल श्रियकारी, जाणी अर्थ हृदय क्रमधारी, शुभसूचक पुण्य संभारा ॥ जि० ॥ ५ ॥ सुन्दर वर सखियन संगे, करिधर्म जागरिका रंगे, निशि शेष गई तिणवारा ॥ जि० ॥ ६ ॥

ए भणी दो पुष्पमाला चढ़ाइये।

॥ दोहा ॥

परम पुरुष परमातमा, भावी भगवन भास।
प्रवचन प्रगट करण प्रभु, पुण्य तणे सुप्रकाश।

॥ राग सारंग ॥

(तर्ज—पूजा सतर प्रकारी)

आज आनंद वधाई, भई त्रिभुवनमें। चौदह सुपन

सूचित गुण जेहनां, अवतरे माता उदरन में ॥ आ० ॥१॥ नृपति सदन बहु सुपन शास्त्रविद, अर्थ विचार करि निज मनमें। पुत्र रतन फल वदत नृपति कुल, परम कल्याण होत जननमे ॥आ०॥२॥ प्रफुल्लित हरख भरत हिय उलसत, जिन जननी तात सुनी तनमें। दिन दिन बढत प्रवर धन जन मन, अधिक उत्साह घर घरनमें ॥आ०॥३॥ स्वर्ण रजत मणि माणक मोतिय, शंख प्रवाल शिल बरसन में। धनद धनदसुर इन्द्र हुकमते, भरत भंडार नृपसदनमें। आ० ॥४॥ ताल कसाल मधु वीण बजावत, गावत गीत तान तननमें। दुन्दुंभि मुरज मृदंग घन गरजत, गरज गरज मानुं जैसे घनमें ॥आ०॥५॥ सुर नर लोक माहे अधिक उत्साह वाह, निशदिन होत जन जनपदनमें। इन्द्र इन्द्राणी नृप दोहद पूरत, मनोरथ होत जो जो मातु मनमें ॥ आ० ॥ ६ ॥ परम कल्याण शुभ योग सयोग भयो, शुभ घरि शुभ ग्रह शुभ दिनमें। वरण सके न ताहि कवि अवसरको, आनंद छायो तीन भुवनमें ॥ आ० ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्री परमात्मनेऽनंतानंतज्ञान शक्तये जन्म-जरा-मृत्यु निवारणाय च्यवन कल्याणक अष्ट-

द्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ इति प्रथम च्यवन कल्याणक पूजा ॥ १ ॥

हीरा चढ़ावें पुष्प गुलाबजल वर्षा करे।

॥ द्वितीय जन्मकल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रगटे पतित पावन प्रभु, अधम उधारण काज।
नृपकुलमांहें अवतरे, त्रिभुवनके शिरताज ॥

॥ राग सोरठी ॥

आज अधिक आनन्द भयो रे वाला, आज सुरंग वधाई रे। आछो जगपति जिनवर जनमिया रे वाला, सुरवधु बन मिल आई रे ॥१॥ आछो आज आनन्द घन उलट्योरे देवा, दिशि कुमरी हरखाई रे। आछो दशदिश निर्मलता थई रे देवा, फूल रही वनराई रे ॥ २ ॥ आछो फूले फूली बनलता रे वाला, मधु मालती महकाई रे। आछो शालि प्रमुख सहु धान्यनी रे वाला, निपजी राशि सवाई रे ॥३॥ आछो नारकी जीवे नरकमां रे वाला, क्षण इक शाता पाई रे। आछो सब जन मन हरषित भयो रे वाला, भूमंडल छवि छाई रे ॥४॥ आछो शुभ मुहूरत

शुभ घडी रे वाला, शुभ ग्रह शुभ पल आई रे। आछो जन्म थयो जिन राजनो रे वाला, प्रगटी पूर्व पुण्याई रे ॥५॥

ए भंगी पुष्प तथा गुलाबजल की वर्षा करें।

॥ सोरठो ॥

त्रिभुवन मांहि सुरूप, जन्म समय जिनराजके।
वाजित्र वाजत अनूप, सुरनर कृत उत्सव हुवे ॥

॥ राग सोरठ ॥

(तर्ज—रावण निरत वणावे हो भली)

आज आनंद वधाई रे, देखो आज आनंद वधाई। जय जयकार भयो जिनशासन, सुरकुमरी हरखाई रे ॥ दे० ॥१॥ घर घर गोरी मंगल गावत, मोतियन चौक पुराई रे। ईति उपद्रव भय सब भागे, खार समुद्रे जाई रे ॥ दे० ॥२॥ आज सनाथ भयो है त्रिभुवन, जिनवर जनम्या भाई रे। आज अधिक जग हर्ष भयो है, धनधन मात कहाई रे ॥दे०॥३॥ जन्म महोत्सव करनकुं सब, दिशिकुमरी मिल आई रे। करि कदलीगृह सुन्दर रचना, पावन कर कर लाई रे ॥ दे० ॥ ४ ॥ जिनजननी जिनवर पय प्रणमी, मस्तक आण चढ़ाई रे। स्नान करावत उभय शरीरे,

तेलाभ्यंग कराई रे ॥दे०॥५॥ भूषण भूपित अंग विलेपन, देवदूष्य पहराई रे, दर्पण ले मंगल घट थापी, चामर जुगल ढुलाई रे ॥दे० ॥ ६ ॥ पंच वरनके फूल सुगंधित, सुरकुमरी बरसाई रे। होम करी रक्षा पोटलिया, जिनवर करे बंधाई रे ॥ दे० ॥७॥ मंगल गावत जिन जगजननी, निजगृह मांहे ठाई रे। सफल भयो निज आतम जाणी, दिशिकुमरी घर आई रे ॥ दे० ॥८ ।

स्वस्तिक करे चमर ढोले इन्द्र बने २ या ४

॥ दोहा ॥

अतिहि अधिक उत्सव करी, गई कुमरी जिन थान ।
इन्द्र हवे उत्सव करे, जन्म समय जिन जान ॥

॥ राग गोड़ी सारंग मल्हार ॥

(तर्ज—सांझ समे जिन वंदो)

आज उच्छव मन भायो रे देखो माई। जगजननी जिन जायो रे ॥ दे०॥आ०॥ त्रिभुवन माहि प्रकाश भयो है, इन्द्रासन थररायो रे ॥दे०॥१॥ अवधिज्ञान धर जिनजीकुं निरखत, हृदय कमल उलसायो रे। हरिणगमेषी इन्द्र हुकमसे, घंट सुघोष घुरायो रे ॥ दे० ॥ आ० ॥२॥ बनठन

नव नव रूप मनोहर, सुर समुदय मन भायो रे। सुरकुमरी वरभूषण भूषित, अद्भुत रूप बनायो रे ॥दे०॥ आ० ॥३॥ नव नव यानवाहन रच सुरवर, सुरगिरि शिखरे आयो रे। चौसठ इन्द्र करत अति उत्सव, मेघ घटा घररायो रे ॥दे०॥ आ० ॥ ४ ॥ काली घटा बरदामनी चमकत, दादुर मोर सुहायो रे। अतिहि सुगध पुष्पव्रज बरसत, मोतियनकी झर लायो रे ॥ दे० ॥ आ० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

शक्र जाय जिनवर गृहे, जिनजननी जिनराज।
प्रणमी श्रीमहाराजनको, भक्ति करे सुरराज ॥

॥ राग कालिंगडो ॥

(तर्ज—सुन्दर नेमि पियारो माई)

तुम सुत प्रान पियारो माई तु० ॥ आंकणी। जगवत्सल जगनायक निरख्यो, धन धन भाग्य हमारो माई ॥तु० ॥१॥ धन जगजननी तुम सुत जायो, अधम-उधारण हारो माई। धन धन प्रगट भयो जगदिनकर, त्रिभुवन तारनहारो माई ॥तु०।२॥ सब सुर चाहत स्नात्र करनकुं सुरगिरि प्रभुजी पधारो माई ॥ कर जोडी प्रभु

अरज करत हूँ, सब जन काज सुधारो माई ॥तु०॥३॥ मैं सेवक तुम सुत चरननको, आयो हूँ अधिकारो माई ॥ इन्द्र कहे पद्पंकज प्रणमुं, भय सब दूर निवारो माई ॥ तु० ॥ ४ ॥ पांच रूप करीप्रभुजीकुं लावे, पांडुगवन सिणगारो माई ॥ चोसठ इन्द्र महोत्सव करी है ; पूजन अष्ट प्रकारो माई ॥ तु० ॥ ५ ॥

प्रभु प्रतिमा पंचतीर्थी अन्दर से लावे, सिंहासण ऊपर स्थापन करे, फिर स्नात्र पूजा करावे ।

॥ दोहा ॥

पंचरूप कर इन्द्र जिन, पंडुग वन ले जाय ।
सिंहासन उछरंग गहि, स्नात्र करे सुरराय ॥

(तर्ज—इतनो गुमान न करिये छबीली राधा हे)

जिनजी को पूजन करिये, हाँ रे हो रंगीले श्रावक हो ॥ जि० ॥ द्रव्य भाव बेहु भेदें करतां, भवसागर निस्तरिये ॥ जि० ॥१॥ गंगाजल चंदन पुष्पादिक, अडविध मंगल धरिये ॥ भाव विशुद्धे जिन गुण गावो, नाटक नवनव चरिये ॥ जि०॥२॥ बहुविध प्रभुकी भक्ति रचावत, वर्नन कर भव तरिये । वो आनन्द देखे सोई जाने, दुःख सब दूरे हरिये ॥ जि० ॥३॥ पूजन करी प्रभुकुं घर ल्यावे,

आतम पुण्यें भरिये ॥ करी अट्ठाई महोत्सव आवत, सब सुर मिल निज घरिये ॥जि० ॥४॥ ॐ ह्रीं श्रीप० अ० ज० जन्म कल्याणके अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥ २ ॥

॥ तृतीय दीक्षा कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुरकृत उत्सव अति अधिक, भये अनंतर प्रात ।
मात पिता उत्सव करे, निज कुल क्रम विख्यात ॥
पार नहीं धनको जहाँ, अगणित भरे भंडार ।
दान मनोवंछित दिये, दयावंत दातार ॥

॥ राग रामगिरी ॥

(तर्ज—गात्र लूहे०)

जिन जन्म महोत्सव रंगसुं रे, भये प्रात करत उछरंगसुं रे ॥ हां रे देवा रंगसु । नृपउत्सव करे अति घणो ॥ १ ॥ पुत्रजनम कुलक्रम करे रे देवा, जगजस कीरत विस्तरे ।वि०॥ घर घर उत्सव रंग में ॥२॥ सुरवधु मिल सुरसंगसुं रे ॥ सु० ॥ करे नाटक नवनव रंगसुं रे ॥ रंग ॥ हारे बाललीला जिन संगमें ॥ ३ ॥ रूपातिशयें शोभता रे ॥ दे० ॥ इन्द्रादिक मन मोहता रे बाला ॥ मो० ॥ वियाप्रभु विस्मयवता ॥४॥ परमप्रमोद प्रवीणता रे देवा,

एम कही फूल चढ़ावे ॥

॥ दोहा ॥

दाता दीन दयाल प्रभु, देत संवत्सरी दान।
दूर करे दारिद्र जग, त्रिभुवन मांहि प्रधान।

(तर्ज— मरुदेवा नन्दनकी क्या छवि लागत प्यारी)

जगपति जिनवरकी, क्या छवि मोहनगारी। ज० ॥ मोहत प्रभुके मोहन रूपे, निरख निरख नरनारी ॥ क्या० ॥ १ ॥ भोग कर्म अन्तरायकर्म कछु, क्षीण भये निरधारी। दानसंवत्सर घन जिम वरसत, पृथ्वी प्रमुदित-कारी ॥ क्या० ॥२॥ नवलोकांतिक देव सवे मिल, हाजर होय सुचारी। जय जय मंगल शब्द उचारत, धर्म गहो सुखकारी ॥ क्या० ॥३॥ दान धर्म शिवमारग प्रभुजी, प्रगट कियो हितकारी। दाता दोनदयाल जगतमें, जिन सम को सुविचारी ॥ क्या० ॥४॥ इन्द्रादिक सुरसुरी नर नारी, दीक्षोत्सव अति भारी। गान दान सनमान तान करि, प्रभुगति सकल सुप्यारी ॥क्या०॥ ५ ॥ तजि संसार लियो शुभयोगे, संयम सतर प्रकारी। मनपर्यव वर ज्ञान भयो तब, विहरत परउपगारी ॥ क्या० ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं श्री प० अ० ज० श्री दीक्षाकल्याणके अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥३॥

॥ चतुर्थ केवलज्ञान कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा

गजवर अश्व समूह रथ, पायक कोटाकोट।
जिन दीक्षा महोत्सव मंमे, हाजर होय तिन ठोर॥
इन्द्रादिक सुर असुर नर; प्रभुकुं करे प्रणाम।
नरनारी आशीष दे, जय जय त्रिभुवन साम॥
तजि आश्रव संवर गहे, संयम भाव निधान।
सब संसार तजी रुशी, भए अणगार प्रधान॥

राग—कल्याण (तर्ज—तेरी पूजा बनी है रस में)

धारी धारी धारी, जिन भये संयमपद धारी। चरन कमल बलिहारी॥ जि०॥ पच सुमतिधर तीन गुप्तिकर, सब जीवां सुखकारी॥ जि०॥ १॥ खांत लिये उपसर्ग परिसह, सहुनेसा समभारी। मर्मगते निःकंप भए, निर्मम निरहंकारी॥ जि०॥ २॥ क्रोध मान माया लोभ अकिंचन, अकिंचन ब्रह्मचारी। पुष्करसम निर्लेप जगगुरु, निर्दम्भ अविकारी॥ जि०॥३॥ ध्यान पर प्रभु अप्रमत्तवासी, गगन निरालम्बचारी। [illegible] धरे प्रकारी, अप्रतिबंध विहारी॥ जि०॥४॥

गुणक्षीर ॥पा०॥३॥ प्रातिहार्य अतिशय जिन संपद भयो अनुकूल समीर। दे उपदेश भविक प्रतिबोधत, वचनातिशय गंभीर ॥ पा० ॥ ४ ॥ लोकालोक प्रकाश परमगुरु, कहि न सके मति सीर। पाठक विजयविमल परमातम, प्रभुता परम सुधीर ॥पा० ॥५॥ ॐ ह्रीं श्री परम० अ० ज० श्री केवलज्ञानकल्याणके अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥

बासक्षेप चढ़ावें

॥ पंचम निर्वाण कल्याणक पूजा ॥

इन्द्रादिक सुर सब मिली, तीन भुवन सिरदार।
सब दरसी सर्वज्ञनी, महिमा करे अपार ॥

(राग—वसन्त, चाल—अतुल विमल मिल्या अखंड गुणे भिल्या)

अतुल विमल प्रभुता प्रभुकी लख, चौसठ इन्द्र उच्छव धरे रे। चार प्रकार के सुर सब मिलकर समवशरण रचना करे ए ॥अ०॥१॥ रजत कनकवर रत्न प्रकारे, कनक रत्नमणि कंगुरे ए। वृक्षअशोक सिंहासन शोभित, तीन छत्र चामर ढुरे ए ॥ अ० ॥ २ ॥ दुंदुभि प्रमुख श्रवणसुख दायक, गहिर सुरे वाजित्र घुरे ए। जानुप्रमाण पुष्पघन वरसत, जलज थलज्ज विकसित सुरे ए ॥ अ० ॥३॥

साधु साधवी श्रावक श्राविका, इन्द्रादिक सुरी सुरवरे ए। नरनारी तिर्यंग विद्याधर, द्वादश विध परिषद भरे ए ॥ अ० ॥ ४ ॥ भविजन धर्म तणे उपदेशे, योजनगामि मधुरगिरे ए। प्रतिबोधत चौमुख श्रीजिनवर, निज निज भाषा अनुसरे ए ॥अ०॥५॥

॥ दोहा ॥

प्रगटपणे प्रभुकी प्रभा, प्रगट प्रकाशक रूप।
प्रगटी प्रभुता परमसम, परमातम पद भूप ॥

(तर्ज—बिगरी कौन सुधारे नाथ बिन)

भूमंडल भविकमल विबोधन, दिनकर सम जिनराया रे ॥ भू० ॥ अणहूंते इक कोडि अमरपद, पंकज भ्रमर लुभाया रे ॥ भू० ॥१॥ ग्राम नगर पुर पट्टण विचरत, त्रिभुवननाथ कहाया रे। चौसठ इन्द्र करे जाकी सेवा, तन मन से लय लाया रे ॥ भू० ॥२॥ इन्द्राणी मिल मंगल गावत, मोतियन चौक पुराया रे। सर्व जीव हितकारक प्रभुजी, निःश्रेयस सुखदाया रे ॥ भू० ॥३॥ भव जलनिधि निर्यामक जगगुरु, तारक सकल कहाया रे। शासननायक संघ सकलकुं, प्रवचन तत्व सुनाया रे ॥भू०॥४॥ अनंत-

गुणाकर प्रभुजी की महिमा, वरने को कविराया रे। पर उपकारक प्रभुके पाठक ; विजयविमल गुण गाया रे। भू० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

निज निज भाषा भविकजन, तृपत न सुनतहि श्रोत।
मीठी अमृत सम गिरा, समझत श्रम नहिं होत ॥

॥ राग कहरवो ॥

जिनंदवा मिल गयो रे, दोय चरणों पर ध्यान शुक्ल मन गहगह्यो रे ॥ जि० ॥ ज्ञायक ज्ञेय अनंतनो रे, सब दरसी जिनचंद। सुरतरु सम जग वालहो रे, सेवत सुरनर इन्द। धर्म में लहलह्यो रे ॥ दो० ॥१॥ चौदम गुण थानक करे रे, आतम वीर्य अनंत। योग निरोधनकी क्रिया रे, सूक्षम बादरकंत। बंध सब टर गयो रे, सरव संवरभयो रे ॥दो०॥२॥ घन कर आत्मप्रदेशनो रे, कर शैलेशी कर्ण। कर्म सकल दूरे किया रे, जीर्णवृक्ष जिम पर्ण, मुक्ति पद जिन लह्यो रे ॥दो०॥३॥ ज्ञान क्रिया कर कर्मकोरे क्षय कर पर अनुबंध। निज आतम रूपे लह्यो रे, शाश्वत सुख सम्बन्ध, सिद्ध शुद्ध बुध थयो रे ॥ दो० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

अकल अगोचर अगमगम, सिद्ध भए सुविशुद्ध ।
परमातम प्रभु परमपद, चिदानंद अविरुद्ध ॥

॥ राग धन्याश्री ॥

(तर्ज—तेज तरणिमुख राजे)

तेज तरणिसम राजे, प्रभुजीको ॥ ते० ॥ एक समय प्रभु ऊरध गतिकर, मुक्तिमहल सुविराजे ॥ प्र० ॥ ते० ॥ १ ॥ सादि अनंत सदा शाश्वतवर, अनत महासुख छाजे । अचल अगोचर प्रभु अविनाशी, सिद्ध सरूप विराजे ॥प्र०॥ते०॥२॥ निरुपाधिक निरुपम सुख प्रभुके, कहि न सके कविराजे । अजर अमर अक्षय अविकारी, सकलानंद सहाजे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ संवत ओगणीसे तेरोत्तर (१९१३), श्रावण शुदि पख राजे । श्रीजिनराजतणा गुण गाया, पंचमी दिवस समाजे ॥ प्र० ॥ ते० ॥ ४ ॥ श्रीविक्रमपुर नगर मनोहर, श्रीसंघ सकल समाजे । पंच कल्याणक पूजा प्रभुकी, कीनो हित सुख काजे ॥ प्र० ॥ते०॥५॥ श्रीखरतरगच्छ नायक लायक, युगप्रधान पद छाजे । जंगमगुरु भट्टारक वर श्री, जिनसौभाग्य सुराजे

॥प्र०॥ते०॥६॥ प्रीतिविलास धर्म्मसुन्दर गणि, अमृतसमुद्र सुभ्राजे। पाठक विजयविमल प्रभुके गुण, गावत घन जिम गाजे ॥ प्र० ॥७॥ हंसविलास प्रवरगणिवरकी, प्रेरणया सुसमाजे। श्रीजिनवरकी स्तवना कीधी, धर्म प्रभावन काजे ॥ प्र०॥ते०॥८॥ ॐ ह्रीं श्री प० अ० जन्मजरामृत्यु-निवारणाय निर्वाणकल्याणके अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥

पंचकल्याणक पूजाकी आरती

॥ राग मालवी गोडी ॥

शुभ आरती प्रभुकी उदारचित्ते, करो भविक रसाल रे। प्रथम धूप सुगंध जिनकूं, उखेवो जिननाल रे ॥ शु० ॥१॥ भाल निजकर तिलक सुन्दर, पहरपुष्प सुमाल रे। दक्षिणकर जिनराज जीके, कर आवर्त्त सुथाल रे ॥शु०॥२॥ यथासकते शुद्धभगते, करो दिल खुशियाल रे। द्रव्यभावे द्विविध पूजा, भविक भाव विशाल रे ॥ शु० ॥ ३ ॥ गुण अनन्त महन्त गावो, प्रभु परमदयाल रे। जन्म सफल करो भविकजन, कहे पाठक बाल रे ॥शु०॥४॥

श्रीसुगणचंद्रोपाध्याय कृत

॥ पंच ज्ञान पूजा ॥

॥ प्रथम मतिज्ञान पूजा ॥

॥ दोहा ॥

वर्द्धमान जिनचंदकूं, नमन करी मनरंग।
पूज रचूं भवि प्रेमसे, सांभलजो उछरंग।
पाँच ज्ञान जिनवर कह्या, मति श्रुत अवधि प्रधान।
मनपर्यव केवल बडो, दिनकर ज्योति समान॥
ज्ञान बडो ससारमे, गुरु विन ज्ञान न होय।
ज्ञान सहित गुरु वंदिये, सुचि कर तनमन दोय॥
वीर जिणद वखाणियों, नदी सूत्र मझार॥
भव्य सदा अनुभव धरो, पावो सुख श्रीकार।
निरमल गंगोदक भरी, कचन कलश उदार।
श्रुत सागर पूजन करो, भाव धरी भविसार॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—चित हरख धरी, अनुभव रगे वीस परमपद सेवियें)

मति अतिहि भलो, सकल विमल गुण आगर, भवि-

जन सेविये । आंकणी ॥ ए मतिज्ञान सदा नमिये, निज पाप सकल दूरे गमिये, मम शुद्ध करी निज गुण रमिये ॥ म० ॥ १ ॥ व्यंजन कर अवग्रह इम जाणो, चउ भेद करी मनमें आणो, इम भाखे श्रीजिन जगभाणो ॥ म० ॥२॥ अरथे करी भेद जिणंद आखे, पण इन्द्रिय मनकर प्रभु दाखे, मुनि मानस ते दिलमें राखे ॥ म० ॥ ३ ॥ वलि षट् विध भेद ईहा कहिये, षट् भेद अपाय करी लहिये, षट् विध धारण भवि सरदहिये ॥ म० ॥ ४ ॥ इम भेद अठाइस भवि धारो, इम भाखे जिनवर सुखकारो, निश्चय व्यवहार ते अवधारो ॥ म० ॥ ५ ॥ वलि रतन जडित कंचन कलशे, भवि पूजन कर तन मन उलसे, चिद्रूप अनूप सदा विलसे ॥म० ॥६॥ ए ज्ञान दिवाकर सम कहिये, इम सुमति कहे दिलमें गहिये, एज्ञानथी अनुपम सुख लहिये ॥ म० ॥७॥ ॐ ह्रीं श्री परमात्मने श्रीमतिज्ञानधारकेभ्यो अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥१॥

॥ द्वितीय श्रुतज्ञान पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्रुतधारक पूजन करो, भाव धरी मनरंग ।
उपगारी सिर सेहरो, भाखे जिन उछरंग ॥

मृगमद चंदन वाससुं, जो पूजे श्रुतअंग।
अनुभव शुद्ध प्रगटे सही, पावे सुख अभंग॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—नाभिजीके नंदाजीसे लाग्या मेरा नेहरा)

श्रुतज्ञानकी पूजाकर सीखो भवि सेहरा ॥ श्रु० ॥ विनय सहित गुरु वदन करके, झुल झुल पाय नमें गुरुदेवरा ॥श्रु०॥ तीन तीस आसातन टाली, भगत करे भवि गुण-गण गेहरा ॥श्रु०॥१॥ श्रीगुरु ज्ञान अखंडित वरसे, ज्यूँ पावस ऋतु वरसे मेहरा ॥श्रु०॥ दश विध विनय करे श्रुत गुरुको, सेवे ज्युं अलि फूलने नेहरा ॥ श्रु० ॥ २ ॥ गुण मणि रयण भर्यो श्रुतसागर, देख दरश हरखावे मेरा जियरा ॥ श्रु० ॥ पूछन वायन वलि वलि करिये, सीखे वंछित ज्युं मुनि सेवरा ॥ श्रु० ॥३॥ गुरु भगती जैसी गणधरकी, वीर कहे सुण गौतम सेहरा ॥ श्रु० ॥ ऐसे गुरु भक्तिसे सीखो, ए श्रुतज्ञान सकल सुख देहरा ॥ श्रु० ॥ ॥४॥ गुरु बिन और न को उपगारी, श्रीगुरुदेव नित गुणमणि जेहरा ॥श्रु०॥ ऐसे गुरुकी कोरत करके, सुमति धरो दिलमे गुण गेहरा ॥श्रु०॥५॥

॥ ढाल बीजी ॥

(तर्ज—नित नमिये थिवर मुनिसरा नि०)

नित नमिये श्रुतधर मुनिवरा, नि० । अरथे श्रीजिनराज बखाणे, सूत्रे श्रीगुरु गणधरा ॥ नि० ॥ १ ॥ मेघधुनी जिम भवि जन सुणके, हरखे ज्यूं केकीवरा । अंग इग्यारे गुण-मणि धारक, बारे उपांग उजागरा ॥नि०॥२॥ जगत उद्धारण तूं परमेसर, सकल विमल गुण आगरा । छेद पयन्ना नंदी सेवो, मूल सूत्र भवि गुणकरा ॥नि०॥३॥ श्रुतधारी गौतम गुरु दीवो, पूरवचवद विद्याधरा । पहिलो आचारांग वखाणे, चरण करण गुण सुखकरा ॥ नि० ॥ ४ ॥ दूजो सूयगडांग सुणीजे, भेदतिसय तेसठ खरा । तीजो ठाणांग सूत्र विराजे, सुणता पाप मिटे परा ॥ नि० ॥ ५ ॥ चौथो समवायांग सुहावे, अर्थ अनेक करीवरा । पांचमे भगवइ महिमा करिये, सहस छतीस प्रश्नधरा ॥नि०॥६॥ छट्ठो ज्ञाता अंग सुध्यावो धर्मकथा कहे जिनवरा । सातमो अंग उपासक कहिये, दश श्रावक प्रतिमाधरा ॥ नि० ॥ ६ ॥ आठमे अंगे जिनवर दाखे, अंतगड़ केवली मुनिवरा । नवमे अंगे भवि सुन धारो, अनुत्तरवाइ शुभकरा ॥ नि० ॥ ८ ॥ प्रश्नविचार कह्या जिन दशमें, अंगुष्ठादिक शुभ

तरा। अंग इग्यारमें जिनवर दाखे, कर्मविपाक विविध परा ॥नि०॥९॥ बारमो अग जिणंद बखाणे, अतिशय गुण विद्याधरा। अक्षर श्रुत वलि सन्नी कहिये, सम्यक् भेद अधिकतरा ॥ नि० ॥ १० ॥ सादि भेद सपरजव लहिये, सम्यक् भेद सुणो नरा। अंग प्रविष्ट कहे जिनवरजी, भेद चवद सुणजो खरा ॥ नि० ॥११॥ इम जो श्रीश्रुतज्ञान आराधे, भाव भगत कर बहु परा, सुमति कहे गुरु ज्ञान आराधो, वछितपूरण सुरतरा ॥ नि० ॥ १२ ॥ ॐ ह्रीं श्री पर० श्रीश्रुतज्ञानधारकेभ्यः अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ॥

॥ तृतीय अवधिज्ञान पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अगर सेल्हारस धूपसे, पूजोअवधि उदार।
बोध बीज निरमल हुवे, प्रगटे सुक्ख अपार ॥
नवल नगीने सारखो, ज्ञान बडो संसार।
सुरनर-पूजे भावसुं, महियल ज्ञान उदार ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—निरमल हुय भजले प्रभु प्यारा, सब संसार)

अवधिज्ञानको पूजन कर ले, ज्यूं पावो भवपार सलूणा ॥ अ० ॥ ज्ञान बडो सुख देण जगतमें, उपगारी सिरदार

सलूणा ॥ अ० ॥ १ ॥ भेद असंख कहे जिनवरजी, मूल भेद षट् सार ; सलूणा । वड्ढमाण हियमाण वखाणे, सूत्रे श्रीगणधार, स०॥अ०॥२॥ सुरनर तिरी सहु अवधि प्रमाणे, देखे द्रव्य उदार ; सलूणा । अवधि सहित जिनवर सहु आवे। थाये जग भरतार; स०॥अ०॥३॥ ज्ञान बिना नर मूढ कहावे । ढोर समो अवतार ; स० । ज्ञानी दीपक सम जग मांहे पूजे सहु नरनार ; स० ॥अ०॥४॥ ज्ञानतणी महिमा जग मांहे, दिन दिन अधिकी सार ; स० । मूल-मंत्र जग वश करवाको, एहिज परम आधार, स० ॥ अ० ॥५॥ ज्ञाननी पूजा अहनिस करिये, लीजे वंछित सार, स० । ज्ञानने वंदी बोध उपावो, करम कलंक निवार, स० ॥ अ० ॥ ६ ॥ इत्यादिक महिमा भवि सुणके, पूजो अवधि उदार, स० । सुमति कहे भवि भाव धरीने, सेवो ज्ञान अपार, स०॥अ०॥७॥ ॐ ह्रीं श्री परमा० श्रीअवधिज्ञान धारकेभ्यः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥

॥ चतुर्थ ज्ञान पूजा ॥

केतकी

भाव

मनपर्यव पूजा करो, विविध कुसुम मनरंग।
महके परिमल चिहूं दिशे, पामे सुजस अभंग ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—सेत्रुंजानो वासी प्यारो लागे मोरा राजिंदा)

जिनजीरो ज्ञान सुहावे म्हांरा राजिंदा। जि० ॥ जिनजीरो ज्ञान अनंतो सोहे, कहतां पार न आवे ॥ म्हां० ॥ जि० ॥१॥ सन्नी नर मन परजव जाणे, ते मुनि ज्ञान कहावे ; म्हा० । विपुलमतिने ऋजुमति कहिये, ए दुय भेद लहावे । म्हा० ॥जि०॥ २ ॥ अंगुल अढिए उणो देखे, ते ऋजु नाम धरावे ; म्हा० । सपूरण मानव मन जाणे तेही विपुल कहावे म्हा० ॥ जि०॥ ३ ॥ मनगत भाव सकल ए भापे, ते चोथो मन भावे ; म्हां० । एहनी महिमा नित नित कीजे, तिम भवि नाम धरावे ; म्हा० ॥ जि० ॥ ४ ॥ जगजीवन जगलोचन कहिये, मुनिजन ए नित ध्यावे ; म्हां० । दीक्षा ले जिनवर उपगारी चोथो ज्ञान उपावे ; म्हा० ॥ जि० ॥ ६ ॥ मनका शंका दूर करत हैं, सुणता आण मनावे ; म्हा० । तनमन सुचिकर पूजन करले, जनम जनम सुख पावे ; म्हा० ॥जि० ॥६॥ विविध कुसुमसे पूजा करता, बोधि लता उपजावे ; महा०। सुमति

कहे भवि ज्ञान अराधो, श्री जिनदेव बतावे; म्हा० ॥ जि० ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपरमा० श्रीमनपर्यवज्ञानधारकेभ्यः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ॥

॥ पंचम केवलज्ञान पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु पूजा ए पंचमी, पंचम ज्ञान प्रधान।
सकल भाव दीपक सदा, पूजो केवलज्ञान ॥
फल दीपक अक्षत धरी, नैवेद्य सुरभि उदार।
भाव धरी पूजन करो, पावो ज्ञान अपार ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—तुम विन दीनानाथ दयानिधि कोन खवर ले)

तुं चिद्रूप अनूप जिनेसर, दरसण की वलिहारि रे ॥ तुं० ॥ निरमल केवल पूरण प्रगट्यो, लोकालोक विहारी रे। केवलज्ञान अनंतविराजे, क्षायक भाव विचारी रे ॥तुं० ॥१॥ ज्योति सरूपी जगदानंदी, अनुपम शिव सुख धारी रे। जगत भाव परकाशक भानू , निज गुण रूप सुधारी रे ॥तुं०॥२॥ सकल विमल गुण धारक जगमें, सेवत सब नर-नारी रे, आतम शुद्ध सरूपी भविजन, गुण मणिरयण भंडारी रे ॥तुं०॥ ३ ॥ केवल केवलज्ञान विराजे, दूजो भेद

न धारी रे। आतम भावे भविजन सेवो, जगजीवन हितकारी रे ॥ तुं० ॥ ४ ॥ अनर ज्ञान सब देश कहावे, केवल सरव विहारी रे। सर्व प्रदेशी जिनवर भाखे, साखे श्री गणधारी रे ॥ तुं० ॥ ५ ॥ भए अयोगी गुणके धारक, श्रेणी चढी सुखकारी रे। अष्ट कर्मदल दूर करीने, परमातम पद धारी रे ॥ तुं० ॥ ६ ॥ ऐसे ज्ञान बडो जगमांहे, सेवो शुद्ध आचारी रे ॥ सुमति कहे भविजन शुभभावे, पूजो कर इकतारी रे ॥ तुं० ॥ ७ ॥ फल अक्षत दीपक नैवेद्यसे, पूजो ज्ञान उदारी रे। पूजत अनुभव सत्ता प्रगटे, विलसे सुख ब्रह्मचारी रे ॥ तुं० ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपरमात्मने श्रीकेवलज्ञानधारकेभ्यः अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ कलश ॥

(तर्ज—केसरियाने जहाजको तिरायो)

अशरण शरण कहायो, प्रभु थांरो ज्ञान अनन्त सुहायो ॥ अ० ॥ मति श्रुति अवधि अने मनपर्यव, केवल अधिक कहायो। भव्य सकल उपगार करत है, श्रीजिनराज बतायो ॥ अ० ॥१॥ खरतर गच्छपति चन्द्रसूरीश्वर, राजत राज सवायो। तेजपुञ्ज रवि शशि सम सोहे, देखत दिल

उलसायो ॥ प्र० ॥ २ ॥ प्रीतिसागर गणि शिष्य सुवाचक, अमृतधर्म सुपायो । शिष्य क्षमाकल्याण सुपाठक, सद्गुरु नाम धरायो ॥प्र०॥३॥ धरमविशाल दयाल जगतमें, ज्ञान दिवाकर ध्यायो । ज्ञान क्रियानो मूल जे कहीये, तत्वरमन मन भायो ॥ प्र० ॥ ४ ॥ वीकानेर नगर अति सुंदर, संघ सकल सुखदायो । शुद्धमति जिन धर्म आराधक भगति करे मुनिरायो ॥ प्र० ॥ ६ ॥ उगणीसे चालीसे वरसे, आसु सुदि वरदायो । ज्ञान विजयकारक सब जगमें, नित प्रति होत सहायो ॥प्र०॥६॥ सुमति सदा जिनराज कृपासे, ज्ञान अधिक जस गायो । कुशलनिधान[1] सोहनमुनि भावे, ज्ञान तणो गुण गायो ॥ प्र० ॥ ७॥

१—तत्वदीपक।

श्री शिवचन्द्रोपाध्याय विरचित

॥ ऋषि-मण्डल-पूजा ॥

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रणमी श्रीपारस विमल, चरण कमल चितलाय।
ऋषिमंडल पूजन रचूं, वरविधि-युत सुखदाय॥
नंदीश्वर मंदिर गिरें, शाश्वत जिन महाराज।
अरचे अठ विध पूजसे, जिम समस्त सुरराज॥
तिम चितजिनपतिगुणधरी, श्रावक समकितधार।
विरचे जिन चौवीसकी, अठविधि पूज उदार॥

॥ गाथा ॥

सलिल सुचन्दन कुसुमभरं, दीवगकरणंच धूवदाणं च।
वर अक्षत नैवेद्यं, शुभ फलं पूजाय अट्ठ विहा॥ १॥

॥ दोहा ॥

यह अठविधि पूजा करण, सुनिये सत्र मझार।
जे भवि विरचे प्रभुतणी, ते पामें भवपार॥

प्रथम जिनेश्वर तिम प्रथम, योगीश्वर नरराय।
प्रथम भये युग आदिमें, सकल जीव सुखदाय ॥

॥ राग देसाख ॥

(तर्ज – पूर्व मुख सावनं करि दशन पावनं)

विमलगिरि उदयगिरिराज शिखरो परे, तरुणि तर तेज दीपत दिणिन्दा। युगल धर्मवार करी धरम उद्योत किये, विमल इक्ष्वाकु कुल जलधिचन्दा ॥ १ ॥ मातमरु देवी वर उदर दरी हरिवरा, सकल नृप मुकुट मणि नाभिनन्दा। अखिल जगनायका, सुगति सुखदायका, विमल वर नाण गुण मणि समंदा ॥ २ ॥ वृषभ लांछन धरा, सकल भव भयहरा, अमर वरगीत गुणकुशल कन्दा। गहिर संसार सागर तरणि समधरा, नमत शिवचन्द प्रभु चरण चंदा ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल चन्दन पुष्प फलव्रजैः सुविमलाक्षत दीप सुधूपकैः। विविध नव्य मधु प्रवरान्नकै, जिनममीभीरहं वसुभिर्यजे ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री परमात्मनेऽनंतानंत ज्ञान-शक्तये जन्म जरामृत्यु निवारणाय श्रीमत् ऋषभ जिने-

न्द्राय जलं चन्दनं पुष्प धूपं दीपं नैवद्यं फलं वस्त्रं यजामहे स्वाहा ॥

॥ श्री अजित जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जयजिणद दिणद सम, लखि भविऋज विकसात ।
परमानन्द सुकद जल, विजयामात सुजात ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—आय रहो दिल बागमे प्यारे जिनजी इस ख्यालकी)

एक अरज अवधारियें, अजित जिन एक अरज अवधारियें ॥ आकणी ॥ अजित जिनेसर, जग अलवेसर, करम निजर निहारियें। अजित जिन एक० । तारणतरण विरुद सुणि तेरो, आयो शरण तिहारियें ॥ अजित० एक० ॥१॥ चरम सिंधु भवभय जल निपतित, चरण पतित मोहे तारियें । अजित० एक० । परमानन्द घन शिर वनितानन, काज मधुपान सुकारिये ॥ अजित० एक० ॥ २ ॥ चिर सचित घन दुरित तिमिर हर । तुम जिन भये तिमिरारियें । अजित० । कहे शिवचन्द्र अजित प्रभु मेरे । एह अरज न विसारियें ॥ अजित० ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल चंदन० ॥ ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत् अजित-जिनेन्द्राय जलं चन्दनं० यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय श्रीसंभव जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जय जितारि संभव सदा, श्रीसंभव जिनराज ।
सकल लोक जिण जीतलिय, जीतो मोह समाज ।

॥ ढाल ॥

(तर्ज—गंधवटी घनसार केसर, मृगमदारस भेलियै)

अपरिमित वर शिखर सागर, धार संभव कार ए । जिनराज संभव पाय वंदो, लहो भव जल पार ए । वलि जलधि जात सुजात कुञ्जर, कुम्भ भंजन जानिये । तसु जनक नाम समान नामा, भए जिन उर आनियें ॥१॥ जसु चरण पंकज मधुर मधुरस, पान लय लागी रह्यो । मिल कर सुरासुर खचर व्यंतर, भमर नित चित्त उमह्यो ॥ जसु चरण कमलें प्लवग लांछन, कनक सुवरन काय ए । सहु भुवन नायक सुमति दायक, जननि सेना जाय ए ॥ २ ॥ जसु मधुर वाणी जग वखाणी, तीस शर गुण धारिणी । संसार सागर भय भराभर, पतित पार

उतारिणी। स्याद्वादपक्ष कुठार धारा, कुमति मद तरु-दारिणी। प्रभु वाणि नित शिवचन्दगणि के, हुवो मगल कारिणी ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिलचदन० ॐ ह्रीं श्रीप० श्रीमत्नमत्रजिने०

॥ चतुर्थ श्री अभिनन्दन जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्री चतुर्थ जिनवर सदा, पूजो भविचित लाय।
भक्ति युक्ति सकट हरण, करण तीन शुद्धथाय ॥

॥ राग सोरठ ॥

(तर्ज—कुद किरण शशि उजलो रे देया)

सवर नदन जिनवरु रे व्हाला, अभिनंदन हितकामी रे। जगदभिनदन जयकरु रे व्हाला, दुरित निकंदन स्वामी रे ॥१॥ लोकालोक प्रकाशता रे व्हाला, करता अविचल धामो रे। अयाबाध अरूपिता रे व्हाला, विमल चिदानद रामो रे ॥२॥ वछित पूरण सुरमणि रे व्हाला, ए प्रभु अतरजामी रे। ऐसे जिन महाराज कुं रे व्हाला, शिवचद्र नमे सिर नामी रे ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्अभिनन्दन जिने०

॥ पंचम श्रीसुमति जिन पूजा ।

॥ दोहा ॥

पंचमजिन नायक नमूँ, पंचमी गति दातार ।
पंचनाणवर विमल कज, वन विकसन दिनकार ॥

॥ राग कैरवो ॥

(तर्ज—वंशी तेरी वैरिणी वाजै रे)

शुद्धभाव चित्तथिर धरिके रे, पूजो सुमति जिणंद । जिन भक्ति करण रसीला, लहो परमानंद ॥शुद्ध भाव०॥१॥ जिनराज सुमति समंद, करे कुमति निकंद । प्रभुना चरण अरविन्द, वंदे असुर सुरिन्द ॥ शुद्ध० ॥ २ ॥ कनकाभ तनु द्युति सोहे, प्रभु सुमंगलानंद । करुणोपशम रस भरिया, वंदे नित शिवचंद ॥ शुद्ध० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिलचंदन० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्सुमति जिनेन्द्राय जल०॥

॥ षष्ठ पद्मप्रभ जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

हिव पष्टम जिनवर तणी, पूजन करो उदार।
भविचित भक्ति धरी करी, सुख सपति करतार॥

॥ राग सारग ॥

(तर्ज – बावन चंदन घसि कुम कुमा०)

हां हो रे वाला पद्मप्रभु मुख चन्द्रमा, नित सकल लोक सुखदाय ए॥ हा०॥ हरिसुर असुर चकोरडा, नित निरख रह्या ललचाय ए॥हा॥१॥ जिन मुख वचन अमृत तणो, जे श्रवण करे भवि पान ए॥ हां०॥ ते अजरामरता लहे, हरिगण करे जसु गुण गान ए॥हां०॥२॥ धर नृप कुल नभ दिनमणि, प्रभु मात सुसीमा नद ए॥हां०॥ प्रभु दर्शनतें प्रति दिने, होज्यो शिवचन्द आनन्द ए॥हा०॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं० श्री प० श्रीमत् पद्मप्रभु जिने०॥

॥ सप्तम सुपार्श्व जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्रीसुपार्श्व सुरतरु समो, कामित पूरण काज।
भो! भविजन पूजो सदा, वसुविधि पूज समाज॥

॥ राग कल्याण ॥

(तर्ज—मेरा दिल लागया जिनेश्वरसे)

मेरी लगी लगन जिनवरसे ॥ मेरी ॥ जैसे चन्द चकोर भमरकी, केतकि कमल मधुरसे ॥ मे० ॥ एह सुपारस प्रभु भये पारस, गुणगण समरण फरसे ॥मे०॥ चेतन लोह पणौ परिहरके, हुय ले कंचन सरिसे ॥मे०॥१॥ ए प्रभु करुणा-करकुँ धरिल्ये, उर जिम कमल भमरसे ॥मे०॥ जे भवि जिनपद लगन धरे तसु, नहीं भय मरण असुरसे ॥मे०॥ ॥२॥ मात पृथ्वी तनु जात तनु द्युति, सम शुभ कंचन सरसे ॥मे०॥ कहे शिवचन्द्र चित्त नित मेरो, रहो प्रभु पद लय भरसे ॥मे०॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्सुपार्श्व जिनेन्द्राय० ।

॥ अष्टम श्रीचन्द्रप्रभ जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अष्टम जिन पद पूजिये, विविध कष्ट हरनार ।
अष्ट सिद्धि नवनिधि लहे, जिन पूजन करतार ॥

॥ राग गुंड मिश्रित भीम मल्हार ॥

(तर्ज—मेघ वरसैं भरी कुसुम वादल करी)

परमपद पूर्व गिरिराज परि उदय लहि, विजित परचंद्र दिनकर अनन्ता। चन्द्रप्रभु चन्द्रिका विमल केवल कला, कलित शोभित सदा जिन महन्ता ॥परम०॥१॥ कुमति मत तिमर भर हरिय पुन भूरि भवि, कुमुद सुख करिय गुणरयण दरिया। गहिर भवसिंधु तारण तरण तरणि गुण, धारि भव तारि जिनराज तरिया ॥परम पद०॥२॥ राखिये आज मेरी लाज जिनराज प्रभु, करण सुख चरण जिन शरण परीया। परम शिवचन्द्र पद पद्म मकरन्द रस, पान नित करण तत्पर भरिया ॥ परम पद० ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलि० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्चन्द्रप्रभु जिने० जलं० ॥

॥ नवम श्रीसुविधि जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुविधि सुविधि समरण थकी, कामित फल प्रगटाय।
अतिगहन ससार वन, वहुल अटन मिट जाय ॥

॥ राग कामोद ॥

(तर्ज—चंपक केतकि मालती)

सुविधि चरणकज वंदिये ए ॥ अहृयो वं० ॥ नंदिये अति चिरकाल। शिव तरुवारि निकंदिये ए, विघन कंद तत्काल ॥१॥ आज जन्म सफलो भयो ए ॥हां अहृयो स०॥ दीठो प्रभु दीदार। तनु मन दृग विकसित भयो ए, जिम कज लखि दिनकार ॥२॥ अमृत जलधर वरसियो ए ॥ हां अहृयो व० ॥ भवि उरक्षेत्र मभार। दर्शन सुरतरु ऊगियो ए, शिव फलनो दातार ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री श्रीमत्सुविधि जिने० ॥

॥ दशम श्रीशीतल जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मुझ तन मन शीतल करो, श्रीशीतल जिनराय।
तुम समरण जलधारसे, अंतर तपत पलाय ॥

॥ राग घाटो ॥

(तर्ज—दादा कुशल सुरिन्द०)

मेरे दीनदयाल, तुम भये सकल लोक प्रतिपाल। सुणि शीतल जिनवर महाराज, चरण शरण धर्यो प्रभुनो

आज ॥ मेरे दीन० ॥ न नमूं सहु सविकारी देव, करसूं चरण कमलनी सेव ॥ मे० ॥१॥ जैसे सुरमणि करतल पाय, तुण त्यै-काच सकल उलसाय ॥ मे० ॥ तुम सम सुखर अवर न कोय, हेर हेर जग निरख्यो जोय ॥मे०॥२॥ प्रभु दर्शन जलधर घनघोर, लखिय नृत्य करे भविजन मोर ॥मे०॥ पढ शिवचन्द्र विमल भरतार, शिव वनिता वरे अति सुखकार ॥ मे० ॥३॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ श्री प० ह्रीं श्रीमत्शीतल जिनेन्द्राय जलं ॥

॥ एकादश श्री श्रेयांस जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

श्रीश्रेयांस जिनेन्द्र पद, नद द्युति सलिलाधार ।
जे नेत्रे मज्जन करे, ते शुचि हुई विधुतार ॥

॥ राग ॥

(तर्ज—सोहस सुरपति वृषभ रूप करि न्हवण०)

श्री श्रेयास जिनेश्वर जगगुरु, इन्द्रियसदन सभद हे । जसु वसु विध पूजनसे अरचो, उर धरि परमानन्द हे । ए समकित धर श्रावक करणी, हरिणी भविमन रग हे ।

विजय देव जिन प्रतिमा पूजी, जीवाभिगम उपांग हे ॥ श्री० ॥ १ ॥ सुरियाम प्रभु पूजन करियो, रायपसेणी उपांग हे। ज्ञाता अंगे द्रौपदी श्राविका, पूज्या जिन प्रतिबिम्ब हे। जे निन्हव कुमति जिन पूजन उत्थापे तेह अनंत हे। काल अनंत भमसी भव वनमें, मंदमती भय भ्रान्त हे ॥ श्री० ॥ २ ॥ विष्णु मात तनु जात विष्णु नृप, विमल कुलांबर हंस हे। सकल पुरन्दर अमर असुरगण, शिव वरि प्रभु अवतंस हे। इम सुरवरनी परे-श्रावक जे, पूजे जिन उछरंग हे। ते शिवचन्द्र परम पद लहिस्ये, निश्चय करि भव भंग हे ॥ श्री० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्री श्रेयांस जिनेन्द्राय० ॥

॥ द्वादश श्रीवासुपूज्य जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

हिव वारम जिनवरतणी, पूजन करिये सार।
भाव भक्ति युत भवि सदा, द्रव्य भक्ति चितधार ॥

॥ राग मालवी गौड़ी ॥

(तर्ज—नव वाड़ सेती शील पालौ०)

सकल जगजन करत वंदन, जया नंदन सामि रे ॥

देवा० ॥ दुरित ताप निकंद चंदन, परम शिवपद गामी
रे ॥१॥ नृपति वर वसुपूज्य नृप कुल, विपिन नंदन जात
रे ॥ देवा० ॥ सुहरि चन्दन नंद नदन, नद मदकिय घात
रे ॥ देवा० ॥ स० ॥ २ ॥ वासुपुज्य जिनेन्द्र पूजो सकल
जिन महाराज रे ॥ देवा० ॥ करत नुति शिवचन्द्र प्रभु ए
निखिल सुर सिरताज रे ॥ देवा० ॥ स० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्वासुपूज्य जिनेन्द्राय जलं० ॥

॥ त्रयोदश श्रीविमल जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

विमल विमल प्रभु कर मुझे, मलिन कर्म करो दूर ।
वेरम प्रभु, रमिये सदा, मुझ उरमहि गुणपूर ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज— सिद्धचक्र पद वंदो रे भ०)

विमल चरण कज वंदो रे ॥ भविजन वि० ॥ वंदनसे
आनन्दो रे ॥ भवि० वि० ॥ जसु गणधर मुनिवर गण
मधुकर, सेवत पद अरविन्दो । श्यामा उदर शुकति
मुक्ताफल, कृतवर्मा नृप नंदो रे ॥ भवि० ॥ १ ॥ सद्‌-
दृग मंडल विमल करनकु, जिन शासन नभ चन्दो । उदय

भयो भवि कुमुद विकस्वरा, वर गुण रयण समंदो रे ॥ भवि० ॥ २ ॥ यदि भव बंध हरण भवि चाहो, प्रभु वंदो चिरनंदो । विमल चिदानंद घन मय रूपी, नित वंदत शिवचन्दो रे ॥ भवि० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्री मत्विमल जिने० ॥

॥ चतुर्दश श्रीअनंत जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

हिव चवदस जिन पूजता, हरिये विषय विकार ।
भो भवियण सुणिये सदा, ए प्रभु सरणाधार ॥

॥ ढाल भैरवी ॥

(तर्ज—पंचवर्णी अंगी रची०)

पूज करणी प्रभुनी दुरित निवारी । दुरित० ॥ पू० ॥ अनंत तरणि हिम किरण तरुण तर, किरण निकर जीता है भारी । अनंत नाणवर दर्शन तेजे, प्रभु सुयशोदर है अवतारी ॥ पू० ॥ १ ॥ लोकालोक अनंत द्रव्य गुण, पर्याय प्रकट करण हारी । तातें अन्वय युत जिन धरियो, अनंत नाम अति मनुहारी ॥ पू० ॥२॥ सिंहसेन नृप नंदन, वंदन, करते इन्द्रचन्द्र सुखकारी ।

मादि अनत भग स्थिति धरियो, पद शिवचन्द्र विजयधारी ॥ पू० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्अनत जिने० जल० ॥

॥ पंचदश श्रीधर्म जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भानुभूप कुल भानुकर, पनरम जिन सुखकार ।
शोभित गहु जग विपिन वन, हरख फल्द जलधार ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—धार मर्मीरे जमुना तीरे यमति घने घनमाली)

धर्म जिनेश्वर धरम धुरंधर, जगनथन जगपाला ॥ मैं वारि०॥ सुनत्रा नंदन पाप निकंदन प्रभु भये दीनदयाला ॥मैं वारि०धर्म०॥१॥ प्रभु धीरज गुण निरखि अमरगिरि, तजि दीनो अचला धारा ॥ मैं वा० ॥ जिन गंभीरता चरम सिंधु लखि, किय लोकान विहारा ॥ मैं वारि०धर्म० ॥२॥ ए जिनचन्द्र चरण अरचनतें, लहि जिन पति अनगारा ॥ मैं० ॥ धरम वरि दल करि भवि लहिस्यो, पद शिवचंद्र उदारा ॥ मैं वारि० धर्म ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्धर्म जिने० जलं०॥

॥ षोडश श्रीशान्ति जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अचिरा उदरे अवतरी, शांति करी सुखकार।
मारि विकार मिटायके, नामधर्यो शांति सार॥

॥ राग विभास ॥

(तर्ज—भावधरि धन्य दिन आज सफलीगणुं)

शान्ति जिन चन्द्र निज चरण कज शरण गत, तरणि, गुणधारि, भवत्रारि तारी। कुमति जन विपिन जनि, कुमति घन व्रतनि तति, छिितिनि शितधार तरवार वारी ॥ शांति० ॥ १ ॥ एक भव पद उभय चक्रधर तीर्थंकर, धारिया वारिया विघनसारा। सकल मद मारिया, विमलगुण धारिया, सारिया भक्त वंछित अपारा ॥ शांति० ॥ २ ॥ हरिण लंछन धरा, वर्ण सुवरण करा, सुरवरा हित धरा गत विकारा। मोहभट धरणि-धर गण हरण वज्रधर, कुमुद शिवचन्द्र पद रजनिकारा ॥ शांति० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

मलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्शान्ति जिने० ॥

॥ सप्तदश श्रीकुन्थु जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मतरम जिनवर दीवसम, मझि भवसागर जाण ।
भक्ति युक्त नितपूजिये, लहिये अमल विनाण ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—अरिहन्त पद नित ध्याइये)

कुंथु जिणंद गुण गाइये ॥ वारि० ॥ मन वंछित फल पाइये रे । प्रभु समरण लय लाइये ॥ वारि० ॥ भविभव तजि शिव जाइये रे ॥ कुंथु ॥ १ ॥ मन जलगत निज आतमा ॥ वा० ॥ करुणा उर धरि ताइये रे । चरणकरण उपयोगिता ॥ वा० ॥ ग्रहण करण कुं ध्याइये रे ॥ वा० ॥ कुं० ॥ २ ॥ ए प्रभु दर्शन जीवने ॥ वा० ॥ अनुभव रसनो ढाइये रे । वर शिवचन्द्र विमल वधे, ॥वा०॥ दिन दिन शोभ सवाइये रे ॥ कु० ॥ ३ ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्कुंथु जिने० ॥

॥ अष्टदश श्रीअरनाथ जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जिन अठारमो ध्याइये, भविजन चित्त मझार।
करण तीन इक कर मुदा, प्रतिदिन जय जयकार ॥

॥ राग वसन्त ॥

(तर्ज—संग लागोही आवे, कुण खेले तोसुं होरी रे)

नित विमल भक्ति से, अर जिनसे नित रमिये रे ॥ ॥ नित० ॥ निजगुण जिनगुण तुल्य करणकुं, चंचल चित हय दमिये रे ॥ नि० ॥ १ ॥ सुमति युवति संयम उर धरिके, कुमति नारि संग गमिये रे ॥ नि० ॥ अनुभव अमृत पान करणते, विषय विकृति विष वमिये रे ॥ नित० ॥२॥ जिनवर संग रमण दव अनलें, पंक सघन वन धमिये रे। कहे शिवचन्द्र जिनेन्द्र रमणसे, भववनमें नहीं भमिये रे ॥ नि० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत् अर जिने० ॥

॥ उनविंशति श्री मल्लिजिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

उगणीसम जिन चरणकज, भमरहोय लयलाय।
सेवे तसु भवि भमरता, अगणित दुरित विलाय ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—संभव जिन सुखकारी रे वा०)

मल्लिजिणंद उपकारी रे ॥ वाला मल्लि० ॥ हां रे वाला, थारी जाऊं वार हजारी रे ॥ वाला मल्लि० ॥ कुंभ नरेश्वर गगनांगणमें सहसकिरण अवतारी रे ॥ वाला म० ॥ १ ॥ पूर्व भव पटूमित्र नरिन्द्र प्रति, बोधि-सिन्धु भवतारी रे वाला। वेदत्रयी विरही तनु धार्यो, सकल संघ सुखकारी रे ॥ वाला मल्लि० ॥ २ ॥ सकल कुशल हरि चंदन सुरतरु, नंदन वन अनुकारी रे वाला। संघ चतुर्विध भूरि खचरगण, प्रणत चन्द्र मनुहारी रे ॥ वाला मल्लि० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्मल्लि जिने० ॥

॥ विंशति श्रीमुनिसुव्रत जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पद्मोत्तर वर पद्मनद, गत पर पद्म समान।
विंशतितम जिन पूजिये, केवल लच्छी निधान ॥

॥ राग गरबो ॥

(तर्ज—सुण चतुर सुजाण, परनारी सुप्रीति कबहु नहीं कीजिये)

मुनिसुव्रत जिनेन्द्र सुनिजर धरी मुझपर वर दर्शन दीजिये। प्रभु दरश प्रीति निरुपाधिकता, करिये लहिये शिव साधकता। तब तुरत मिटे शिव बाधकता ॥मु० ॥१॥ अमृत में साध्य पणो विलसे, प्रभु दर्शन साधनता उलसे। तद मुझने साधकता मिलसे ॥ मु० ॥ २ ॥ भिन्नाधि करणता यदि विघटे, एकाधिकरणता यदि सुघटे। तद मुझ शिव साधकता प्रगटे ॥ मु० ॥ ३ ॥ एकाधिकरणता मुझ करिये भिन्नाधिकरणता परिहरिये। शिवचन्द्र विमल पद वरिये ॥ मु० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्मुनिसुव्रत जिने० ॥

॥ एकविंशति श्रीनमि जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अंतर वैरी नमाविया, तब लहियुं नमि नाम।
भविजन ए प्रभु-पूजसें, सरीये वंछित काम ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—हम आये हैं शरण तिहारे, तुम प्रभु शरणागत तारे)

श्रीनमि जिनवर चरण कमलमें, नयन भ्रमर युग धरिये रे। तिण किय गुण मकरंद पानसे चेतन मद मत करिये रे॥ वारि चेतन० ॥ श्री नमि० ॥१॥ एह चरण कज अहनिश विकसे, परकज निशि कुमलावे रे॥ वा० प० ॥ ए न धले वलि तुहिन अनलसे, अपर कमल वल जावे रे॥ वा० श्री० ॥ २ ॥ ए पद कज गुण मधुरस पीवत, जीव अमरता पावे रे॥ वारि० ॥ अवर कमल रस लोभी मधुकर, कजगत गज गिल जावे रे॥ वा० श्री० ॥ ३ ॥ परकज निजगुण लच्छिपात्र है, पदकज संपद् देवे रे। तातें पद शिवचन्द जिणिंदके, अहनिशि सुरनर सेवे रे॥ वा० श्री० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्रीं प० श्रीमत्नमि जिने० ॥

॥ द्वाविंशति श्रीनेमि जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

बावीसम जिन जगगुरु, ब्रह्मचारी विख्यात।
इण वदन चन्दन रसे, पाप ताप मिट जात॥

॥ राग रामगिरी ॥

(तर्ज—गात्र लूहे जिन मन रंगसु रे देवा)

नेमि जिणंद उर धारिये रे ॥ वाला ॥ विषय कषाय निवारिये रे ॥ वा० ॥ वारिये हां रे वाला वारिये। ए जिनने न विसारिये रे ॥ १ ॥ जलधर जिम प्रभु गरजता रे ॥ वा० ॥ देशना अमृत बरसता रे ॥ वा० ॥ देसना० ॥ वरसता हां रे वाला वरसता, भविक मोर सुनि उलसता रे ॥ २ ॥ समवसरण गिरि पर रह्या रे ॥ वा० ॥ भामंडल चपला वह्यारे ॥ वाला चपला वह्या ॥ हां रे च० ॥ सुरनर चातक उमह्या रे ॥ ३ ॥ बोधिबीज उपजावियो रे ॥ वा० ॥ भवि उरक्षेत्र वधावियो हां रे ॥ वा० वधावियो ॥ भविक सुगति फल पावियो रे ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल चं० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्नेमि जिने० ।

॥ त्रयविंशति श्रीपार्श्व जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अश्वसेन नंदन सदा, वामोदर खनि हीर ।
लोक शिखर शोभे प्रभु, विजित कर्म बड़वीर ॥

॥ राग कहरवो ॥

(तर्ज—बाजै तेरा बिछुआ बाजे)

पास जिणंदा प्रभु मेरे मन वसीया ॥ पा० ॥ मेरे मन० ॥ शिनकमलानन कमल विमल कल, तर मकरद पान अति रसिया ॥ पास जि० ॥ १ ॥ वामानन्दन मोहनी मूरत, सकल लोक जनमन किय वसीया ॥ पास जि० ॥ परम ज्योति मुखचन्द विलोकित। सुरनर निकर चकोर हरसिया ॥ चकोर ह० ॥ पास जि० ॥ २ ॥ अंजनगिरि तनु दुति जिन जलधर, देशना अमृतधार बरसिया ॥ धार० ॥ पास जि० ॥ ३ ॥ पीय करि भवि चिरकाल तिरसिया। मुगति युवति तनु तुरत फरसिया ॥ पास जि० ॥ कुमुद सुपद शिवचन्द्र जिणदनी। वारीजाउं मन मेरो अतिहि उलसिया ॥ पास जि० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमत्पार्श्व जिने० ॥

॥ चतुर्विंशति श्रीवीर जिन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

वर इक्ष्वाकु कुल केतु सम, त्रिसलोदर अवतार।
ए प्रभुनी नित कीजिये, विविध भक्ति सुखकार ॥

॥ राग धन्याश्री ॥

(तर्ज—तेज धरण मुख राजैं)

चरम वीर जिनराया ॥ हां रे ॥ जिनराया। मेरे प्रभु चरम वीर जिनराया। सिद्धारथ कुल मन्दिर ध्वज सम, त्रिशला जननी जाया। निरुपम सुन्दर प्रभु दर्शन तें, सकल लोक सुख पाया ॥ मेरे० ॥ १ ॥ वाम चरण अंगुष्ट फरसतें सुरगिरिवर कंपाया। इन्द्रभूति-गणधर मुख मुनिजन, सुरपति वंदत पाया ॥ हां रे मेरे० ॥ २ ॥ वर्तमान शासन सुखदाया, चिदानन्द घनकाया। चन्द्र किरण गुण विमल रुचिर धर, शिवचन्द्र गणि गुण गाया ॥ हां रे मेरे० ॥ ३ ॥ वरसनंद मुनि नाग धरणि सित, द्वितीयाश्विन मनभाया। धवल पक्ष पंचमि तिथि शनियुत, पुरजय नगर सुहाया ॥ मे० ॥ ४ ॥ श्रीजिनहर्ष सूरीश्वर साहिब, वर खरतरगच्छराया क्षेमकीर्ति शाखा भूषण मणि, रूपचन्द्र उवझाया ॥ मे० ॥ ५ ॥ महापूर्वजसु भूरि नरेश्वर, वंदे पद उलसाया। तासु शिष्य वाचक पुण्यशील गणि, तसु शिष्य नाम धराया ॥ मे० ॥ ६ ॥ समयसुन्दर अनुग्रही ऋषिमंडल, जिनकी शोभ

समाया। पूज रची पाठक शिवचन्दे, आनन्द संघ बधाया ॥ मे० ॥ ७ ॥

सलिल० ॐ ह्रीं श्री प० श्रीमद्वीर जिने० जल०॥

॥ स्नग्धरावृतं ॥

दुर्व्वारस्फार विघ्नोत्कट करटि घटोत्पाटन स्पष्ट जाग्रद। वीर्य प्राग् भार चंचत् कुशल हरिदरी जित्वरी दुर्मताना। ससारापार सिन्धुत्तरण तरतरी भक्ति भाजाम-जस्त्र। भव्यानां ब्रह्म पद्मभवण मधुकरी शकरी शंकरी सा ॥ १ ॥ लोकालोक प्रलोकास्खलित विमल सद्दर्शन ज्ञान भानुः। श्रीमज्जैनेश्वरीय त्रिभुवन विभुतात्रि-श्चतुर्नित्य-तिश्च। श्रीसिद्धानंत नाथालय विशदलसत् सर्व लोकाग्र भाग। प्रसादाग्र प्रदेशे जगति विजयते वैजयन्ती जयती ॥ २ ॥

—

पण्डित कपूरचन्दजी कृत

॥ बारह व्रत पूजा ॥

॥ प्रथम समकित व्रत दृढ़करण जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

व्रत बारे आदर करी, पूजा तेर विधान।
आनन्दादिक संग्रही, सप्तम अंग प्रधान ॥

॥ ढाल ॥

॥ राग सरपदो ॥

(तर्ज—ज्योति सकल जग जागती हां रे अइयो जा०)

ज्योति विमल जग झळहले हां रे अइयो झळहले ए शासनपति जिनचन्द, त्रिकरण प्रणमन करि नमूं ॥ वीर चरण अरविंद ॥ वी० ॥१॥ न्हवण १ विलेपन २ वासनी ३ हां रे० मालं ४ दीवंच ५ धूवणियं ६, फूल ७, सुमंगल ८ तंदुला ९ ए ॥ हां रे० ॥ अमलं दप्पणांच १० नेवज्जं ११, ॥ २ ॥ ध्वज १२ फलवृन्द १३ ए मेलिये, हां रे अ० ॥ पूजा त्रिदश प्रकार। व्रत ग्रहि अणुक्रम अरचीये, जगपति जगदाधार ॥३॥ शिवतरु सुख फल स्वादनो, हां

रे अ०, दायक गुणमणि खाण ॥ कुशल कला कलना थकी, प्रगटे परम निधान ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

समकित व्रत धुर आदरो, मेटो निजमन भर्म ।
दूर थकी ए परिहरो, कुगुरु कुदेव कुधर्म ॥

॥ राग रामगिरी ॥

(तर्ज—गात्र लूहे जिन मनरंगसूँ रे देवा)

धुर समकित चित में धरो रे वाल्हा, भव भय दुख-दल परिहरो । परिहरो, हां रे वाल्हा प० । शिवरमणी वर लीजिये ॥ १ ॥ वीर जिनेसर वंदिये रे वाल्हा, जिम चिरकाल सु नंदिये । नदिये, हां रे वाल्हा नं ॥ कुमति दुरति सर कीजिए ॥ २ ॥ चरण करण गुणमणि निलो रे वाल्हा, जगजन तारण सिरतिलो ॥ सिरतिलो, हां रे० सि० ॥ सदगुरु चरण नमीजिये ॥ ३ ॥ जिन भाषित श्रुत सागरो रे वाल्हा, भेद विविधविध आगरो । आगरो, हां रे० आ० । श्रवण जुगल-कर पीजिए ॥४॥ जिनसासन जिनधर्मनो रे वाल्हा, राग दलन वसु कर्मनो, हां रे० क० । कुशल कला रम पीजिये ॥५॥

॥ दोहा ॥

सकल करम दल मल हरण, पूजा धुर जलधार ।
जगनायक जिन तुज्झनी, उर धर भगति उदार ॥

॥ राग झिझोटी ॥

(तर्ज—निरमल होय भज के प्रभु प्यारा, सब)

जिनवर न्हवण करण सुखदाई, छूटे जनम मरण दुखदाई ॥ जि० ॥ ए टेर ॥ खीरजलधि गंगोदक मांहे, अमल कमल रस सरस मिलाई ॥ जि० ॥ १ ॥ निरमल सकल परम तीरथ जल, मणि युत कंचन कलस भराई ॥ जि० ॥ २ ॥ या जिनजीके न्हवण करणते, भव भय दुखदल दाघ समाई ॥ जि० ॥ ३ ॥ द्रव्य भाव विध समकित फरसे, ते नर नरक निगोद न जाई ॥ जि० ॥ ४ । याते भविजनके दुख नासे, कपूर कहे सुर होत सहाई ॥ जि० ॥ ५ ॥

॥ काव्य ॥

परमलंकृत संस्कृतश्रद्धया । स्नपति योजिनचन्द्रमिमं-मुदा ॥ भवभयं परिमुच्य सदोदयं भजति सिद्धिपदं सुखसागरं ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री परमात्मने अनन्तानंत ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय श्रीमत्समकितव्रत दृढ़-करणाय जलं यजामहे स्वाहा ॥

॥ द्वितीय प्राणातिपात विरमणव्रत चंदन केशर विलेपन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्राणातिपात विरमण व्रते, छंडो जंतु विनाश ।
इणसुं शिवसुख ना मिले, हिंसा दोष विलास ॥

॥ उल्लालो ॥

तिहां दर्शनाण सुचरण अणसण । धीर वीरज जानिये ।
तप इम सकलाना सिद्धि गज-वसु, पणतिवार सुठानिये ॥
अतिचार बार निवार इणपर, तुर्य गुणपद मानिये । गुण
पंचमो तिम थूल प्रत्या-ख्यान मान वखाणिये ॥ १ ॥

॥ राग बखो ॥

(तर्ज— हमकूं छाड चले वन माधो, राधा)

भविजन जीवदया व्रत धारो, सम परिणाम संभारो
रे ॥ भ० ॥ टेर ॥ अपराधी पिण जीव न हणिये, भाखे
जगदाधारो रे। देशविरतधर ने पिण भाख्यो, विन
अपराध न मारो रे ॥ भ० ॥ १ ॥ गो गज सेंधव महि-
सादिकने, बंधन वध न विचारो रे। कीजे न अवयव छेद
त्रिकाले, जलचारो न विसारो रे। ॥ भ० ॥ २ ॥ कीडी

कुञ्जरने सम गिणिये, सुख दुख जोग विकारो रे। थावर त्रस पंचेंद्रियादिकनो, होय रहिये हितकारो रे ॥ भ० ॥ ३ ॥ ए व्रत रत चित जे नर जगमें, सुर नर गण मन प्यारो रे। तेहिज लोभ महाभट मार्यो, सकल करम परिवारो रे ॥ भ० ॥ ४ ॥ थूल थकी ए व्रत जे पाले, ते लहे शिवसुख सारो रे। कुशलकला कलनाकर प्रगटे, अनुभव रंग उदारो रे ॥ भ० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

भव दव दाघ सवे मिटे, पूजो परम दयाल।
भावठ भंजन सुखकरण, दूजी पूज रसाल ॥

॥ राग घाटो ॥

(तर्ज—जिनराज नाम तेरा, हो रा०)

पूजो जिनेन्द्र प्यारा, हो तारो रे विकट भव-जलसे ॥ हो० ॥ टेर ॥ हांरे घनसार चंदन वासे, हांरे सुकुरंगना-भिजासे। दुख नारकादि नासे ॥ हो ता० ॥१॥ घसि खकडादि भेळी, नाना सुगंध मेली, शिव देन कर्म ठेली ॥ हो ता० ॥२॥ पूजा सदा रचावो, पर भावनापि भावो, शिव सौधसों समावो ॥ हो ता० ॥ ३ ॥ विधि भाव द्रव्य

धारो, हिंसा कुदोष वारो, प्रभु नाम ना विसारो ॥ हो ता० ॥४॥ तज पाप भार फंदा, शिवशंकलाप कंदा, साधे कपूरचंदा ॥ हो ता० ॥ ५ ॥

॥ काव्य ॥

अमल कुंकुम केशर मिश्रितै श्चति यो घनसार सुचन्दनैः ।
जिनपतेर्युग पादसमर्चनं, स हरते भवदाघम सवरम् ॥
ॐ ह्रीं श्रीपरमा० प्राणातिपात विरमणव्रत ग्रहणाय चदनं यजामहे स्वाहा ।

तृतीय मृषावादविरमण व्रत वासक्षेप पूजा

॥ दोहा ॥

मृषात्याग व्रत दूसरो, कुमति दुरति हरतार ।
भविजन भावे आदरो, शिवतरु फल दातार ॥

॥ राग वसन्त ॥

(तर्ज—सब अरति मथन मुदार धूपं)

सुण भविक नर धर दुतिय व्रत मन, मृषावाद न बोल रे, वाल्हा मृषा० ॥ टेर ॥ मृषावाद कुवाद शेखर, कुजसवाद न ढोल रे, वाल्हा कुज० सु० ॥ १ ॥ सकल शिवसुख धामधूरवि, ढकण राहु निटोल रे। शिवपुर

नगर पथि शक्कर सरिखो, अरति व्यापन घोलरे ॥ वाल्हा अर० सु० ॥ २ ॥ निपट कूट कलाप करिने, पर गुप्त मत खोल रे। ऋण विधौ धन धान्य निकरे, कपट कूट न तोल रे ॥ वाल्हा कप० सु० ॥ ३ ॥ कूट लेख कुशाख भरिने, रचय मा डमडोल रे। अन्य शिरसि कलंक धरिने, चरित छांनु न बोल रे। वाल्हा चरि० सु० ।४॥ वसुनरेसर वृथा रचिने, लह्यो कुगति कचोल रे। द्वितीय व्रत रस राग भाखी, कुशलसार विमोल रे॥ वाल्हा कु० सु० ॥५॥

॥ दोहा ॥

जगदाधार जिनेन्द्रने, पूजो वास रसेण।
शिव वनिता वस कीजिये, पूजा त्रयतमएण ॥

॥ राग गरबो ॥

(तर्ज—भवि चतुरसुजाण परनारीसुँ प्रीतड़ी कबहु न कीजिये)

भवि भाव धरी भव सागर निसतारक जिन पति सेवीये ॥ भवि० ॥ टेर॥ बावनचन्दन खंडन करिये, तेहमा वलि कुङ्कम रस भरिये, मृगमद परिमलता अनुसरिये ॥ भ० ॥ १ ॥ कंकोल सुवासित वलि कीजे, तिम विविध

कुसुम रसकस दीजे, ए चूर्ण विधि निज वश कीजे ॥ भ० ॥२॥ इम वास रसे जे जिन पूजे, तिणसे सवि करम सबल धूजे, सुख संपति जाय न घर दूजे ॥ भ० ॥ ३ ॥ सुर किन्नर नर शासन धारे, विन समर्या सहु संकट वारे, ए पूजन मन वंछित सारे ॥ भ० ॥ ४ ॥ विमला कमला सवला पावे, जे प्रभु गुणगण भावन भावे, इम चन्दकपूर सुजस गावे ॥ भ० ॥ ५ ॥

॥ काव्य ॥

मृगमदावरघुसृणमिश्रितं, वंरबरास सुचदनसस्कृतं ॥ विधति यो जिनपूजन मन्नमा, स लभते निभृतिं किल वामकैः ॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० मृपात्रादत्याग व्रतधारणाय वासक्षेपं यजामहे स्वाहा ।

॥चतुर्थ अदत्तादान विरमणव्रत पुष्पमालपूजा॥

॥ दोहा ॥

अयतम व्रत हिव सांभलो, भाखे जगत जिणंद ।
स्तेय करण भव सुख हरण, अष्ट कर्मदलकंद ॥

॥ राग सोरठ ॥

हां हो रे वाला, पर धन हरण गमण करो, धरि त्रिकरण शुद्ध विलास ए ॥ हां हो रे वाला, ए मंत्रजल

जलधर समो, वलि समकित वृन्द विनाश ए ॥ व० ॥ १ ॥ हां हो रे वाला, कनक रजत मणि धातुनो, जल थल खज पशु पटकूल ए ॥ ज० ॥ हां हो० इम तनु थूल जगत भस्या, लही सकल पदारथ मूल ए ॥ ल० ॥ २ ॥ हां हो० कुमति दुरति रमणी तणो, छे सदन ए चोरीनो कर्म ए ॥ छे० ॥ हां हो० विपद जलधि पिण जाणिये, सचपल थइ नाशे धर्म ए ॥ स० ॥ ३ ॥ हां हो० ए व्रत सुरतरु सारिखो, शिवसुख फल देन उदार ए ॥ शि० ॥ हां हो० ॥ कुशल कला युत कीजिये, लहीये भवजलनो पार ए ॥ ल० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

पूज चतुर्थी मालनी, करिये भक्ति वसेण ।
मोह तिमिर भर उपसमे, प्रगटे बोध खिणेण ॥

॥ राग खंमायची ॥

(तर्ज - भव भय हरणा, शिव सुख करणा, सदा भजो)

भविजन पूजो जिन ग्रीवा धरी, वर फूलन की माला, मैं वारी जाउं व० ॥ ए पूजन दुरगति घर छेदी, विरचे शिव सुख शाला ॥ मैं वा० विर० भवि० ॥ १ ॥

चंपक मरुक तिलक चपेली, पाडल लाल गुलाला ॥ मैं० पा० ॥ विमल कमल परिमल मदमाता, न तजे अलि मतवाला मैं० न० भवि० ॥ २ ॥ जाइ दमण जूही कोरटक, मालती मरुक रसाला ॥ मैं० मा० ॥ ऐसे पंच वरण कुसुमे करि, माल रचन परनाला ॥ मैं० मा० भवि० ॥३॥ ए माला पूजन करो नाशे, कोटि करम दुख जाला ॥ मैं० को० ॥ सुमति सुरति अनुभव वलि प्रगटे, त्रासे कुमति कुचाला ॥ मैं० त्रा० भवि० ॥ ४ ॥ ए विधि सवर द्वार विकासे, पाप सदन मुख ताला ॥ मैं० पा० ॥ कपूर कहे प्रभु चरण शरणमें, मगलमाल विशाला ॥ मैं० म० भवि० ॥५॥

॥ काव्य ॥

सरसमुद्गर चपकपाडलैः । मरुकमालति केतकीस-स्त्रजै ॥ विधिविगुफ्य जिनं परिपूजयेत स्त्रजमजस्र मनंत सुखेच्छुकः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री पर० अदत्तादान मोचनाय पुष्प माल यजामहे स्वाहा ॥४॥

॥ पंचम मैथुन विरमण व्रत दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

व्रत चौथे मैथुन तजो, भजो भविक भगवान ।
शीलाराधन योग से, लहिये शर्म्म वितान ॥

॥ राग सोरठ ॥

(तर्ज—कुंद किरण ससी ऊजलो रे देवा)

मन वच काया थिर करी रे वाला, कलुष कुशील निवारो रे आछो । ऐह नरक रमणी तणी रे वाला, शोदर अति हितकारो रे आछो ॥ १ ॥ नृ-सुर पशु सहु जातनो रे वाला, विषय कलित बहु दोषे रे आछो । ते परिहरीने थिर रहो रे वाला, निज दारा संतोषे रे आछो ॥ २ ॥ लंकापति नरके गयो रे वाला, ए मैथुन रस धार रे आछो । एहने तजकर केइ लह्या रे वाला, जीव सकल सुख सार रे आछो ॥ ३ ॥ शीलरतन जतने धरो रे वाला, तस दूषण सव छंडी रे आछो । कुशल कला करिने लहो रे वाला, शिवसुख माल प्रचंडी रे आछो ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

दीपक पूजा पंचमी, करे सकल दुख नाश ।
लोकालोक विलोकने, प्रगटे बोध प्रकाश ॥

॥ राग बरवो देश में ॥

(तर्ज—केसरियाने जहाजको लोक तिरायो)

भाव धरी दीपक पूज रचावो, याते शिवसुख संपति पावो ॥ भा० ॥ रक्तपीत सितवर्ण विचित्रित, सूतनी वाट बणावो । गो घृत मांहि अधिकतर करिने, शुभ मन दीप जगावो ॥ भा० ॥ १ ॥ दीपकने मिश मनमंदिरमें ज्ञानको दीप जगावो । जडता तिमर कलाप हरीने, मंगलमाल वधावो ॥ भा० ॥ २ ॥ अरति हरण रति दायक जग में, ए पूजन मन भावो । सुरनर पाय नमे ततखिण ही, यातें नरक न जावो ॥ भा० ॥३॥ अनुभव भाव विशाल करीने, आतमसुं लय लावो । कपूर कहे भविजनसे प्रभुके, वर गुणगण जस गावो ॥ भा० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

आत्मप्रबोधैकविवर्धनाय । जाड्यान्धकारव्ययमर्दनाय ।
भव्य प्रदीप कुरु भक्तिवृन्दैः, प्रभोर्गृहे वायघनर्ज्जनाय ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपरमात्मने अनंतानंत० मैथुनपरिहरणाय दीपं यजामहे स्वाहा ।

॥ षष्ठम परिग्रह विरमण व्रत धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भवि कीजे व्रत पंचमे, सकल परिग्रह मान ।
ए मोहादिक सवरनो, भूधर दुखनी खाण ॥

॥ राग वसन्त ॥

(तर्ज—अतुल विमल मिल्या, अखण्ड गुणे०)

सकल भविक भस्या, विमल गुणे वाल्हा, मान परिग्रहनो करो ए ॥ सकल० ॥ टेर ॥ वज्र समान ए सम गिरि भेदन, दोष दिवसपति वासरो ए ॥ स० ॥१॥ धन कण वसन गवादिक पशुनो, धातु निकर तिम जाणिये ए । इत्यादिक नव भेद विधाने, दशवैकालिक भाणीये ए ॥ स० ॥ २ ॥ एहने मूल थकी जे हरे नर, तेहने मोक्ष मिले सही ए । सुचिरकाल गृहवास वसे जे, तेहने देश-विधे कही ए ॥ स० ॥३॥ नरक निवास इणे विन पाम्यो, मम्मण सेठ ते भाषिये ए । भविजन ए व्रत भावथी पालो, कुशल कला निज दाखिये ए ॥ स० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

छठी पूजन धूपकी, धूपो जिनवर अंग।
कुसुरभि करम तणी हरे, दायक शिव सुखचंग।

॥ राग देशाख वा ठुमरी ॥

(तर्ज—प्यारी छवि वरणी न जाय, थारे मुखडारी हो वारीराज)

ऐसी विध पूजन, भाई दिल धार, धूपधूम घनसार धार करीं ॥ टेर ॥ या भव भीम वारि सागरमें, तरण तरंडक तरल विचार ॥ धू० ॥ १ ॥ चदन देवदारु वलि अवर, मृगमद गंधवटी घनसार ॥ धू० ॥२॥ ऐसे सुरभि द्रव्य बहु मेली, तिणमें सेल्हारस न विसार ॥ धू० ॥ ३ ॥ मणियुत कचन धूपदानमें, विमलानलयो करी सुप्रचार ॥ धू० ॥४॥ कपूर करत नुतिया जिनपूजा, भविजन गणकी तारणहार ॥ धू० ॥ ५ ॥

॥ काव्य ॥

नानासुगन्ध वसुनिर्मितसारधूप। चाकर्षितं भ्रमर-वृन्दमभिहि येन ॥ श्राद्धव्रये विधिनिरस्यनिशालभक्त्या। धूपेज्जिनाधिपतिनं शिवदमुदावे ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० परिग्रह परिमाण व्रतधारणाय धूप यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम दिशिपरिमाणव्रत पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

छट्ठो व्रत दिशमानको, गमनागमन निवार ।
अकुशलता सवि उपसमे, श्रेय संपजे सार ॥

॥ राग गरबो ॥

(तर्ज—सिद्धाचल मंडण स्वामीरे)

श्रीशिवसुख संपति वरिये रे, भव भय दुख वारण करिये रे। कर दिशिपरिमाण जे चरिये ॥ रसीला, भाव विमल दिल धरिये रे, वाला धरिये तो समरस भरिये ॥ र० भा० ॥१॥ अध ऊर्ध्व ने तिरछि वखाणो रे, दिशि विदिशिने तेम प्रमाणो रे, ए छे संकट जलधिनो राणो ॥ र० भा० ॥ २ ॥ ऐमां गमनागमन निवारो रे, ओ छे कुमति दुरति भरतारो रे, इक चक्री लह्यो दुख भारो ॥ र० भा० ॥३॥ ए व्रत शिवसाधन चंडो रे, तुमे भविजन एह न खण्डो रे, कहे कुशल कला नित मंडो ॥ र० भा० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

भवियण पूजा सातमी, कीजे भक्ति विशाल ।
ससुरभि नाना जातना, विमल कुसुम भरथाल ॥

॥ राग-धन्याश्री ॥

(तर्ज- कबहु मे नीके नाथ न ध्यायो)

प्रभुजीकी फूले पूजन सारो, प्र० ॥ टेर ॥ श्रीजिनजी के चरण कमलमें, अलि समता गुण धारो ॥ प्र० ॥ १ । चंपक कुंद गुलाब केवडा, पारधि नाग कल्हारो । जासु दमण वासंति मोगरा, पाडल लाल मंदारो ॥ प्र० ॥ २ ॥ इम नानाविध कुसुम घटाकर, भाव विमलजल भारो । तो लहिये भविजन ध्रुव करिने, अचिर थकी भव पारो ॥ प्र० ॥ ३ ॥ व्रतधर फूल कलाप रुचिर ग्रहि, पूजत जे जग तारो ॥ कपूर कहत जिन चरण शरण लहि, करम सकल दल मारो ॥ प्र० ॥ ४ ॥

॥ काव्य ॥

गंधामलादि गुण लक्षणलक्षितैर्वै पुष्पोत्करैर खिल-गुञ्जित चंचरीकैः । ससेवयेद्विविध जाति समुद्भवैर्यो । जैनेश्वरं व्रजतिसोद्यचिराच्छिवना ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्री पर० दिशिपरिमाण व्रत ग्रहणाय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम भोगोपभोग विरमण व्रत अष्टमंगल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जगनायक पद कमलमें, धरिये करि मन भृङ्ग ।
भोग अने उपभोगना, ए सहु व्रत गिरिशृङ्ग ॥

भक्तात्मा परिढ़ोकयेद्रुचिपरः सोघव्रजंनाशयेत् ।
भित्ते दुर्गति भूधरंच लभते स्वर्गादि मोक्षाश्रयं ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीपर० भोगोपभोग व्रत उपदेशकाय अष्ट-मंगलं यजामहे स्वाहा ॥

॥ नवम अनर्थदंड विरमण व्रत अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भवि ए व्रत अष्टम धरो, अनरथदंड विचार ।
पाप चिरंतन उपशमे, प्रगटे पुण्य प्रचार ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—सगुन सनेही साजन श्रीसीमंधरस्वाम)

त्रिकरण शुद्ध निसुण भवि अनरथ दंड विचार, समकित सुभटनो गंजन भंजन संवर द्वार । मनमथ बोध विकाशक शास्त्र पठन अधिकार, मुख भ्रू दृग तनुथी करे, भंड कुचेष्टा-गार ॥ १ ॥ हास्य थकी वलि कुवचन भाषण मुखर प्रबंध, ऊखल मूसल घरटादय अति धरण दुरंध, स्नान समे जल तेल अधिकतर अप्रति-बंध,* विन कारण

---

* इसके बाद रत्नसार में यह पाठ है :—

पाप विधाना देश प्रकाशन दूषण खंध । सरस वस्तु घृत पात्र मात्र विन छादन ठान । धरण करण सुविवेक विकल तिम दाना दान ।

षट् काय विराधनमें दुखदंध ॥ २ ॥* इङ्गालादिक करण करावण सकल विधान, उदर भरण पंचोत्तर दशविध कर्मादान। इम सहु अनरथ करम अवर पिण दुखनी खाण, व्यर्थपणे मनमान्या छेदे पुन्य प्रधान ॥ ३ ॥ इणकर पूर्वे केइ गया नर सकट धाम, व्रत ग्रहीने रहिये तव लहिये शिव सुख ठाम। ए व्रत तणो भवोदधि तारण तरण प्रकाम, कुशल कला नित करतां प्रगटे अभिनव माम ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

नवमी श्रीजिनराजनी, पूजा परम विलास।
विमलाक्षत भरि भाजने, भविजन करे प्रकाश ॥

॥ राग पीलू ॥

(तर्ज—अब तो उधारयो मोहि चहिये जिनदराय राग भरो०)

श्रीजिनवरजीकी सेवा सारे, सो भवभय दूर दूर निवारे ॥ श्री० ॥ टेर ॥ तंदुल विमल सकल गुण मंडित, खंडित दोषरहित उर धारे। कंचन पात्र भरि जिन आगे

खंडित दोषरहित उर धारे। कंचन पात्र भरि जिन आगे

* हिंसा विकथा पर विपरीत विचार विधान। स्वादिकरण दरसग कीरादिक पालन वान।

ढोकन बुद्धि प्रवल सुविचारे ॥ श्रीजि० ॥ १ ॥ या पूजन जन तन मन रंजन, गंजन कुगति कुबोध विदारे। सबल करम नग भेदनहारो, सघन भवोदधि पार उतारे ॥ श्रीजि० ॥२॥ सुमति सानुभव आण मिलावे, ते पिण पद शिवशर्म समारे। पीन महोदय धार भाव धरी चन्द-कपूर सनूर निहारे श्रीजि० ॥३॥

॥ काव्य ॥

यो खंडजाति गुणवृन्द समन्वितानि। ना ढोकये-द्विपुल निर्मल तंदुलानि ॥ कर्म्मावलिं झटति छेदतिस-ज्जिनाग्रे। सो ऽसौभजेच्छिवसुखं सुतरामनन्तं ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० अनर्थदंड समूलं मोचनाय अक्षतं यजामहे स्वाहा।

॥ दशम सामयिक व्रत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

नवमो नवनिधि जाणिये, सामायक व्रत सार।
सुर जेहनी आशा करे, सुरतरु सम दातार ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—आय रहो दिल बागमें, हो प्यारे जिनजी)

सामायक व्रत पाल रे, भविक जन सामा० ॥ टेर ॥

त्रिकरण त्रिकयोगे इक मुहुरत, निरतिचारे चाल रे ॥ भ० ॥ सा० ॥ १ ॥ गृह व्यापार तजीने शुभ मन, धरि निरवद्य विसाल रे । भ०॥सा०॥२॥ मन वच वपु प्रणिधान असेवन स्मृति विहीनता टाल रे ॥ भ० ॥ सा० ॥ ३ ॥ द्वात्रिंशत दूषण परिहरिने, पचम गुण घर झाल रे ॥ भ० ॥ सा० ॥ ४ ॥ इम धनमित्र तणी पर सीझो, कुशल कला परनाल रे ॥ भ० ॥ सा० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

दशमी दर्प्पण पूजना, कीजे श्रावक शुद्ध ।
सुर पादप शम शकरण, हरण पाप संक्रुद्ध ॥

॥ राग कालिंगडो ॥

(तर्ज—नेमप्रभुजी सुं कहज्यो जी म्हारा)

जिन पूजनमे रहिये रे, म्हारा जि० । मन वछित फल लहीये रे, म्हा० जि० ॥ टेर ॥ कंचन मणिरतनेकर जडियो, वर दरपण कर गहीये । जिनवर सनमुख दाखन विधिमें, सकल करम वन दहिये रे, म्हा० जि० ॥ १ ॥ प्रभुजीकी सेवा सब सुखदाई, भाव भक्ति उर चहिये । शिव वनिता तुम प्रेम विलूधे, अपर अधिक किम कहीने

रे म्हा० जि० ॥ २ ॥ निजकशरीर प्रमाद वशे करि, भव दल भीति न सहिये। शुभ मन समकित वीर संग ले, चंदकपूर निवहीये रे ॥ म्हा० जि० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

रुचिर निर्मल दर्पणदर्शनं। विनयभृद्विदथकिलका-रये। ज्जिनपतेरच्चिराद्भवसंगमं* । स च निरस्य भजेच्छिवमंजसा ॥१॥ ॐ ह्रीं श्री पर० सामायकव्रतग्रहण दृढ़करणाय दर्प्पणं यजामहे स्वाहा।

॥ एकादश देशावगाशिक व्रत नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दशमो व्रत हिव भवियणा, धारो धरि वरभाव।
संसारार्णव गहिरनो, तारण वरतर नाव ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—सिद्धाचल गिरि भेट्या रे, धन भाग्य हमारा)

श्रद्धा धर मन भाजे रे, धन पाप तिहारा ॥ श्र० ॥ टेर ॥ विमलसकल शुभ विनय धरीने, गुरु मुख वचन हजारा। ए व्रत सुन्दर दिल धरो भविजन, देशावकाश

---

* च्छिवदंव्यशं

विचारा रे ॥ घ० श्र० ॥ १ ॥ द्रव्यानयन प्रेक्ष प्रयोगे, शब्द रूप अनुसारा। पुद्गल प्रेक्षण प्रभृति सकलना, तजिये दूषण धारा रे ॥ घ० श्र० ॥ २ ॥ परमोत्कृष्ट जघन्य प्रकारे, प्रत्याख्यान प्रचारा। सहु व्रतनो आगमन ए व्रतमें, गुण मणिरयण भण्डारा रे ॥ घ० श्र० ॥ ३ ॥ कर्म कषाय हरीने छेदे, चउगति गेह विहारा। अजरामर धन दे लह्यो निरमल, कुशल कला करि सारा रे ॥ घ० श्र० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

एकादशमी पूजमें, विविध भाति नैवेद्य।
मेल करो* जिनराजनी, दायक सुख निरवद्य ॥

॥ राग कल्याण ॥

(तर्ज—तेरी पूजा वणी है रसमें ॥ हो ते०)

सेवा सारो श्रावक जिन चरणे ॥ हो से० ॥ टेर ॥ मोदक लपनश्री वरघेवर, सिता सुरस घृत भरणे। मुक्तचूर निंद्रादिक बहुतर, नैवेद्य नानावरणे ॥ हो से० ॥ १ ॥ रयणांकित कंचन भाजन भरि, मन वच तनु थिर करणे।

* धरी जिन आगले

करि ढोकन विधि परम विनय धरि, रहिये नित प्रभु शरणे ॥ हो से० ॥ २ ॥ दुखदल नाशन या पूजन विधि, निर्वृति विशद सुख भरणे। चंदकपूर कहत भविजनके, कलिमल माला हरणं ॥ हो से० ॥ ३ ॥

॥ काव्य ॥

धवलधाम शिताप्पि समुद्भवं। विमल भक्ति धरान्वित कर्पुरं। जिनपते विदधाति विपूजनं। स लभते शिवशं प्रवरान्नकैः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० देशावगाशिक व्रत दृढ़ करणाय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ॥

॥ द्वादश पौषध व्रत ध्वज पूजा ॥

॥ दोहा ॥

व्रत पौषध इग्यारसो, भावो भविक विधान।
ध्यावो ज्यूं द्रुत संहरे, प्राकृत कर्म वितान ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज—इण सरवरियारी पाल, ऊभा दोय राजवी म्हारा ला०)

भविजन भाव विशाल, प्रमाद निवारिये म्हारा लाल ॥ प्र० ॥ टेर ॥ पोसह व्रत चित मांहि, विनय धर धारिये ॥ म्हा० वि० ॥ ते पिण दुविध प्रकार, चतुर न विसारिये

म्हा० च० ॥ प्रति वासर प्रति पर्व, सजे तिम सारिये ॥ म्हा० स० ॥ १ ॥ पडिलेहण धुर धार, सकल किरिया करो ॥ म्हा० स० ॥ परिठावण विधिवाद, दयाधर आदरो ॥ म्हा० द० ॥ षट्काया संघट्ट तजीने सचरो ॥ म्हा० त० ॥ अचपल थइ पच्चखाण, विविध मन संभरो ॥ म्हा० वि० ॥ २ ॥ वलि सहु दूषण टालिने, पाप निरुंदिये ॥ म्हा० पा० ॥ चौगति च्यार कषाय, करम दल छंदिये ॥ म्हा० क० ॥ भवोदधि तारण तरण, सुगुरु पद वंदिये ॥ म्हा० सु० ॥ कुशल कला दल माल, करी चिरनंदिये ॥ म्हा० क० ॥ ३ ॥

॥ दोहा ॥

द्वादशमी ध्वज पूजमे, घोषण देई अमार।
धरिये द्वादश भावना, तरिये भवजल पार ॥

॥ राग देशाख ॥

(तर्ज—कुबजाने जादू डारा)

प्रभुजीसे प्रीत लाना, करि ध्वज पूजन विधाना हो ॥ प्र० टेर ॥ जोयण सहसमान मणि मंडित कंचन दंड रचाना हो० ॥ प्र० ॥ १ ॥ पच वरण युत वसन पताका, अधिवासित लहकाना हो ॥ प्र० ॥२॥ ढकनाद

करि तीन प्रदक्षिण, रोहण विधि मन भाना हो ॥ प्र० ॥३॥ या विधि सकल करम रिपु दारण, ज्योतिमें ज्योति समाना हो ॥ प्र० ॥ ४ ॥ जगतारण श्रीजिन दरसणसे, चन्द्रकपूर लुभाना हो ॥ प्र० ॥५॥

॥ काव्य ॥

सव्याच्चर्यंति ध्वजवरैःससुभैः सलीलैं, जैनेश्वरंकनकदंड-युततैःससोभैः । कर्मारिवृन्दजयछद्म समन्वितैर्यो । वै सो भजेच्छिद्दिवादिसुराज्य लक्ष्मीः ॥१॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० पौषध व्रत दृढ़करणाय ध्वजं यजामहे स्वाहा ।

॥ त्रयोदश अतिथि संविभाग व्रत फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

द्वादशमो व्रत सुख फलद, साधु दान सनमान ।
अजरामर पद संपजे, शालिभद्र अनुमान ॥

॥ राग कजली ॥

(तर्ज—मेरो मन मोह्यो माई, आनन्द झीले, आ०)

साधु दानव्रत भवि हृदय धरो, हृदय धरो रे भाई हृदय धरो ॥सा०॥ व्रत संयमगत परलिंगीने, पडिलाभन मति रिजु न करो ॥ रिजु० भा० सा० ॥१॥ जिनमत मुनिवर चरण

नमीजे, असनादिक देई सुकृति वरो ॥ सु० भा० सा० ॥ २ ॥ वलि पचातिचार निवारी, परम विरतिना विघन हरो ॥ वि० भा० सा० ॥३॥ श्रीश्रेयांस ने चंदनवाला, अनुमाने पद निर्वृत्ति वरो ॥ नि० भा० सा० ॥ ४ ॥ कुशल कला मुनिशाल करीने, भवजल सागर झटति तरो ॥ झ० भा० सा० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

फल दल पूजा तेरमी, भरि भाजन कमनीय ।
भविक रचो भगवंतनी, भव विषधर दमनीय ॥

॥ राग ख्याल ॥

(तर्ज—लोभी नेना रे, लोभी नेना हो ह०)

लोभी लेणा रे लोभी लेणा हो पूजन के लो० टेर ॥ पूजन विधि प्रभुकी दिल धर ले; थिर कर मन तनु वेणा ॥ हो० पू० ॥ १ ॥ श्रीफल पूगी बीजपूर वर, आम्र कदली फल लेणा ॥ हो पू० ॥ २ ॥ इम नानाफल गहि प्रभु आगे, भरि भाजन धर देणा ॥ हो पू० ॥ ३ ॥ भक्ति विमल सुचित धर मनमें, प्रभु समरण दिन रेणा । ॥ हो पू० ॥ ३ ॥ कपूर कहे प्रभु पद पकजमें, पटूपद भए युग नेणा ॥ हो० पू० ॥ ५ ॥

॥ कलश ॥

हां हो यश धारा, हां हो यश धारा, प्रभुजीका वचन अमृत यशधारा ॥ प्र० ॥ टेर ॥ सुरनर मुनि तिरियग वन सिंचन, वचन सजल घन भारा ॥ हां हो य० प्र० ॥ विक्रमपुर श्रीत्रिशला नंदन, जिनवर त्रिभुवन प्यारा। द्वादश व्रत पूजन विधि पभणी, भवियण गण हितकारा ॥ हां हो हि० प्र० ॥ १ ॥ गुरु खरतर जिनचंद्रसूरिवर, राजे विगत विकारा। श्रीमति साधृतिरादि कलितके, धरि मन वचन[1] अगारा ॥ हां हो अ० प्र० ॥२॥ संवत रस त्रिक निधि रात्रीकर, (१६३६) मासाश्विन मनुहारा। धवल पक्ष प्रति-पद तिथि शोभन, रजनीपति सुत वारा ॥हां हो सु० प्र० ॥ ३ ॥ श्रीजिनरत्नसूरि शाखा धर, पाठक पद विस्तारा। रूपचंद गणि चरण कमलमें, कुशलसार मधुकारा ॥ हां हो म० प्र० ॥ ४ ॥ अपर नाम करि चंदकपूरा, रचि जिनपति नुति सारा। कुशलनिधान[2] प्रवर मुनिवरकी, प्रेरणया सुविचारा ॥ हां हो सु० प्र० ॥५॥

---

१ शुचिवच भारा। २ लक्ष्मी प्रधान।

॥ काव्य ॥

जम्बाम्रादिफलव्रजैः ससुरसैः गंधादिभिर्मिश्रितैः, नूनं द्रव्यरनुम्दवैश्च विधिना कुर्यात्प्रभोरर्च्चन ॥* सोभक्त्या-स्मनवथजोत्कर निरा सकृत्य सद्य लभोच्छर्मस्वर्गतरोरक-सुखफलागार वर निर्मल ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं श्रीपर० अतिथि-संविभाग व्रतशोधनाय फलं यजामहे स्वाहा ।

---

* भक्त स प्रभु पूजनैक निरतो भूयोपि भूयोलभे ।

॥ श्री आदीश्वर पंचकल्याणक पूजा ॥

॥ प्रथम च्यवन कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

आदि जिनंद नमी करी, आदि जिनेसर राय।
कल्याणक पूजा रचूं, सिमरी शारद माय ॥१॥
च्यवन१ जन्म२ दीक्षा३ भली, चौथा केवल४ नाण।
पंचम पंचम५ गति कही, ए पांचो कल्याण ॥२॥
उत्तम जन गुण गानसे, उत्तम गुण विकसंत।
उत्तम निज संपद मिले, होवे भवको अंत ॥३॥
समकित प्राप्ति से कही, भव संख्या निर्धार।
आदिनाथके तेर हैं, नेमिनाथ नव धार ॥४॥
पार्श्वनाथ भव दश कहे, शांतिनाथ भव बार।
सात वीस भव वीरके, तिग तिग शेष विचार ॥५॥
प्रभु कीर्तन से होत है, निश्रेयस पद सार।
तिण श्री आदिनाथका, सुन्दर यह अधिकार ॥६॥
अष्ट द्रव्य पूजा प्रति, पूजन का विस्तार।
द्रव्य भाव पूजा करी, होवे भव निस्तार ॥७॥

॥ मालकोश ॥

समकित आनंद कंद भविक जन स० । अचली ॥ समकित विन नहीं ज्ञान चरण है, भाषे श्री जिनचद ॥ भविक जन स० ॥ १ ॥ देव गुरु और धर्म की श्रद्धा, समकित शिवतरु कंद ॥ भविकजन स० ॥ २ ॥ देव नहीं जस दोष अठारां, गुरु निग्रंथ मुनींद ॥ भविकजन स० ॥३॥ अरिहत भाषित धर्म दयामय, काटे भव भव फंद ॥ भविकजन स० ॥ ४ ॥ समकित आतम लक्ष्मी प्रगटे, वल्लभ हर्ष अमद ॥ भविकजन स० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

पश्चिम महा विदेहमें, खिती पइठ्ठ मझार ।
सार्थवाह धन नामसे, वसे धनद अवतार ॥१॥
एक समय ले सार्थको, गमन किया परदेश ।
व्यापारी निज काजको, भूले नहीं लवलेश ॥२॥
मारगमें वरसा हुई, रुका सार्थ इक ठोर ॥
द्वीप सरीखा हो गया, फिरे नीर चउ ओर ॥३॥

(तर्ज—देशी केसरिया थासुं)

जग साचा सार्थप, सार करेरे निज सार्थ की ।

अंचली ॥ द्रव्य भाव सार्थप दो कहिये, पहला जग उपकारी । वीतराग दूजा सार्थप भव, अटवी पार उतारी रे ॥ ज० ॥ १ ॥ एक दिवस निशि चरम समयमें, सार्थप चिंता व्यापी । अति दुःखी है कौन सार्थमें, देऊं झट दुःख कापी रे ॥ ज० ॥ २ ॥ हा हा अन्न अभावे सबजन, कंदमूल फल खावें । धर्मघोष सूरि आदि मुनि, हाथ जरा भी न लावें रे ॥ ज० ॥ प्रात समय गुरु पासे आके, चरणे, सीस नमावे । हाथ जोड़ अपराध खमावे, मुनि देखी शुभ भावे रे ॥ ज० ॥ ४ ॥ आतम लक्ष्मी संपद कारण, मुनि गण ध्यानमें लीना । देख देख धन सार्थप आतम, वल्लभ हर्ष भरीनारे ॥ ज० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

धर्मघोष गुण गण गणी, धर्मलाभके साथ ।
उपदेशी शांतन करे, सार्थनाथ मुनिनाथ ॥ १ ॥
विनति कर मुनि रायको, साथ हुआ धनसार ।
दोष रहित शुभ भावसे, देवे घृत आहार ॥ २ ॥

(तर्ज—लेली लेली पुकारे वनमें)

धन्य दान देवे दातार, करे निज आतम उद्धार ।
दान सर्व गुण गुणों की खान, देवे जिनवर भी जस मान

॥ ध० ॥ १ ॥ दान शील तपो भाव भेदे, धर्म चार प्रकार अखेदे। कहे जिनवर जग हितकारी, सेवे सुरनर अमरी नारी ॥ ध० ॥ २ ॥ तप शील भाव करे करता, हित दान उभय अघ हरता। तिण दान धुरि अधिकार, अभयादि पांच प्रकार ॥ ध० ॥ ३ ॥ अभय दान सुपात्र दो सार, अनुकंपा पुण्य प्रचार। यशोवाद उचित फलकारी, संसार करे ससारी ॥ ध० ॥ ४ ॥ घृत दान सुपात्रे देवे, बोधि बीज सुकृत फल लेवे। धन काल करी युग्म थावे, आतम लक्ष्मी वल्लभ हर्षावे ॥ ध० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

उत्तर कुरुमें पालके मिथुन आयु धन जीव।
सौधर्म सुख भोगवे, दान सदा सुख नीव ॥ १ ॥
च्यवनके गंध समृद्ध मे, पश्चिम महा विदेह।
नाम महाबल ऊपनो, शतबल नरपति गेह ॥ २ ॥
मंत्रि वचन दीक्षा ग्रही, कर अनशन अनगार।
काल करी ईशानमें, सुर ललितांग कुमार ॥ ३ ॥
अंत समय नंदीश्वरे, शाश्वत जिन कर सेव।
शुभ भावे शुभ तीर्थमें, काल करी ततखेव ॥ ४ ॥

॥ पनीहारी की चाल ॥

पूर्व विदेह पुष्कलावती म्हारा वालाजी, लोहार्गल पुरधाम वालाजी। सुवर्णजंघनृप सुत हुओ म्हा०। वज्रजंघ शुभ नाम वा० ॥ १ ॥ श्रीमती पूर्वभव प्रिया म्हा०, पत्नी हुई तस सार वा०। पितृदिया शुद्ध न्यायसे म्हा०, पाले राज्य उदार वा० ॥ २ ॥ सागरसेन मुनिसेन मुनि म्हा०। केवल ज्ञान उदंत वा०। सुनकर बंधु जानके म्हा०, मनमें अति उलसंत वा० ॥ ३ ॥ दीक्षा लेनी ठानके म्हा०, दंपती सूते रात वा०। विष प्रयोगसे पुत्रने म्हा०, मार दिये मायतात वा० ॥ ४ ॥ उत्तर कुरु युगलिक हुए म्हा०, एकसे अध्यवसाय वा०। काल करी दोनों जने म्हा०, सौधर्में सुर थाय वा० ॥ ५ ॥ धर्म बिना नहीं जीवको म्हा०, अन्य शरण संसार वा०। आतम लक्ष्मी पामिए म्हा०, वल्लभ हर्ष अपार वा० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

जंबूद्वीप विदेहमें, क्षिति प्रतिष्ठ मझार।
वैद्यसुविधि सुत नामसे, जीवानंद विचार ॥ १ ॥
महिधर केशव तीसरा, नाम गुणाकर जान।
चौथा पूरण भद्र है, सुबुद्धि पंचम मान ॥ २ ॥

एक दिवस घर वैद्य के मित्र मिले छः साथ।
देखे आए गोचरी, मुनि करुणाके नाथ ॥ ३ ॥
महिधर जीवानदको कहे रोगी मुनि देह।
औषध करना योग्य है, जन्म सफल स सनेह ॥ ४ ॥

॥ ठुमरी ॥

(तर्ज—जावो जावो नेमि पिया—देशी)

मुनि महाराज सेवा शिव सुख खानीरे। मुनि महाराज शिव सुख खानी महानद पद दानीरे मुनि० अंचली ॥ मित्र पट् आवे भावे, बावना चंदन लावे, रतन कंबल तेल लक्षपाक आनीरे मुनि० ॥ १ ॥ मुनि रोग दूर कीनो, निजातम कीनो पीनो। मूल्य देने आए सेठ, आपण पिछानीरे मुनि० ॥ २ ॥ वणिक जवाब दीनो, वैयावच्च फल लीनो। धन्य मात तात तुम, धन्य ए जवानीरे मुनि० ॥ ३ ॥ मूल्य नही मैंने लेना, चरणमें चित्त देना। लिया धार टार दिया, जग जानी फानीरे मुनि० ॥ ४ ॥ चंदन कंबल वेची, निज धन साथ सेची। चैत्य अरिहत कियो, भक्ति वंत प्राणी रे मुनि० ॥ ५ ॥ षड मित्र दीक्षा लीनी, आतम लक्ष्मी वश कीनी। वल्लभ हर्ष मन, मुनि सेवा मानी रे मुनि० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

आराधी चारित्रको, द्वादश कल्प सधार ।
आयु सागर दोय वीस, सोग लियो अवतार ॥१॥
पुक्खलवइ विजये हुओ, वज्रसेन नृप जात ।
वज्रनाभ पुण्डरीकिणि, जास धारिणी मात ॥२॥
वैद्य जीव ए जानिए, महिधर बाहु मान ।
जीवसुबाहु सुबुद्धिका, पीठ गुणाकर जान ॥३॥
महापीठ चौथा सही, पूर्णभद्रका जीव ।
ए पांचो बांधव हुए, सुयशा केशव जीव ॥४॥
राजपुत्र अति नेहसे, वज्रनाभके साथ ।
विचरे पूर्व संबंधसुं, जिस यति यतिपति नाथ ॥५॥

॥ पीलु ॥

जिनवर नाम करम परभावे, जिनवर तीरथ जग वरतावे ॥ जि० अंचली ॥ वज्रसेन जिन समय को जानी, वज्रनाभको राज्य भलावे । लोकांतिक वचने प्रभु वर्षी दान देई दालिद्र हटावे ॥ जि० ॥१॥ दीक्षा लेइ प्रभु विचरन लागे, वज्रनाभ निज राज्य चलावे । वज्रसेन प्रभु केवल पावे, वज्रनाभ चक्री तब थावे ॥ जि० ॥२॥ क्रमसे

प्रभु चरणोंमें दीक्षा, वज्रनाभ आदि सब पावे। तप-जप ध्यान प्रभावे सबही, निज आतमको उच्च बनावे ॥ जि० ॥ ३ ॥ बीस थानक तप अधिका सेवी, वज्रनाभ जिन नाम उपावे। आतम लक्ष्मी वल्लभ हर्षे, एक भवांतर जिनवर थावे जि० ॥ ४ ॥

॥ दोहा ॥

संयम निर्मल पालके, पूर्व लाख दस चार।
अनशन कर सबने किया, अन्तिम नाक विहार ॥१॥
देव आयु पूरण करी, सागर तेरां बीस।
भरते जंबूद्वीपके, अवतरिया जगदीस ॥२॥
अवसर्पिणिके तीसरे, आरे शेष विचार।
पक्ष नवासी पूर्व सह, लक्ष अमी अरु चार ॥३॥
चौथे बहुल आषाढकी, उतराषाढा तार।
नाभि नृप स्त्री उदरमें, मरुदेवी अवतार ॥४॥

॥ देशी वणजाराकी ॥

तीर्थंकर जग उपकारी, अवतरिया आनंदकारी ॥ अंचली ॥ सर्वार्थ सिद्धसे चविया, वज्रनाभ जीव अव-

समीर प्रसाररे जिन० ॥४॥ वस्त्र सुगंधमय पानी वर्षा, उच्छ्वास मेदिनी धाररे जिन० ॥५॥ आतम लक्ष्मी जिनवर महिमा, वल्लभ हर्ष अपाररे जिन० ॥६॥

॥ दोहा ॥

तीर्थंकरके जन्मको, अवधि नाणसे जान।
आय नमे सुत मातको, करती स्वात्म पिछान ॥१॥
छप्पन दिशा कुमारिका, जिन जनु महिमा काज।
आवे रीति अनादिकी, प्रथम बाद सुरराज ॥२॥

(तर्ज—श्री चंद्रप्रभ भगवान)

मिली दिशा कुमारी आय, जिन जन्म महिमा करे ॥ अंचली ॥ अधो लोककी आठ कुमारी, सूतिका घर करके तैयारी। अशुचि योजन मध्य निवारी, नमन करी गुण गाय जि० ॥१॥ उर्द्ध लोककी आठ कुमारी, गंधोदक वर्षा रज टारी। पांच वरण फूलोंकी भारी, वृष्टि करे सुखदाय जिन० ॥२॥ आठ आठ रुचक दिग चारे, दर्पण झारी पंखा कर धारे। चामर निज निज कार समारे, गाती निज दिशि ठाय जिन० ॥३॥ चार विदिशिकी चार कुमारी, गुण गाती दीपक कर धारी। रुचक द्वीपसें चार पधारी, नमती जिन जिनमाय जिन० ॥४॥ काटे अंगुल छोरके चारी, नाल विवर करी उसमें डारी। वज्र रत्न भरी विवर

निवारी, दूर्वा पीठ बनाय जिन० ॥५॥ पूर्व दक्षिण उत्तर दिशि तीनो, कदली घर देवीने कीनो। दक्षिण जिन जिन मात करीनो, मर्दन तैल सहाय जिन० ॥६॥ पूर्व सिंहासन स्नान करावे, पूजी वसन भूषण पहरावे। उत्तर घर दोनों पधरावे, चंदन होम कराय जिन० ॥७॥ रक्षा पोटली बांधी हाथे, आसीस दे घर लावे साथे। आतम लक्ष्मी नाथ सनाथे, वल्लभ हर्ष मनाय जिन० ॥८॥

॥ दोहा ॥

कंपे आसन इन्द्रको, ए ही अनादि चाल।
अवधिज्ञाने जानके, वंदे इन्द्र दयाल ॥१॥
सिंहासन को त्याग के, सात आठ पद जाय।
नमन करी स्तवना करी, हरिण गमेपि बुलाय ॥२॥
कहे आदेश करो प्रभु, जन्म महोत्सव हेत।
घंट सुघोष बजाय के, सबको किये सचेत ॥३॥
कतिपय जिनवर रागसे, कतिपय इन्द्र नियोग।
कतिपय देवी प्रेरणा, कतिपय मित्र सुयोग ॥४॥
नाना वाहन भावना, नाना रूप सुभाव।
शक्र समीपे आयके, पास कीया प्रस्ताव ॥५॥

(तर्ज—मानमदमन से परिहरता)

शचीपति जन्मोत्सव करता। कर अभिषेक जिनंद

शचीपति । जन्मोत्सव करता ॥ अंचली ॥ पालक नाम विमान बैठ सुर साथमें संचरता । जन्म थान आकर वज्री निज पांच रूप धरता ॥ कर० ॥ १ ॥ एक रूप जिन ग्रही दो पासे चामर दो करता । एक छत्र पाछल आगल एक वज्र ग्रही चरता ॥ कर० ॥ २ ॥ मेरु महीधर चउसठ सुरपति स्नात्र मिली करता । विधिसे पूजन करके प्रभुके चरननमें परता ॥ कर० ॥ ३ ॥ जननी पासे प्रभुको धर कर इन्द्र हुकम करता । द्वात्रिंशत कोटी रत्नोंसे जृम्भक घर भरता ॥ कर० ॥ ४ ॥ पूर्णरूप जन्मोत्सव करके आतम लक्ष्मी वरता । नंदीश्वर उत्सव कर वल्लभ हर्ष सदन चरता ॥ कर० ॥ ५ ॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

श्रीमदर्हते जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥ २ ॥

॥ तृतीय दीक्षा कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जागी माता देखके, पूजन पुत्र सुअंग ।
रोम रोम हर्षित भई, अति आनन्द अभंग ॥१॥
नाभिराय निज पुत्रका, नाम ऋषभ भगवान ।
धरते गुणयुत देखके, साथल ऋषभ निशान ॥२॥

कुल थापन वज्री करे, वंश थापना साथ।
राज्य स्थापना प्रभु हुई, निर्जर पतिके हाथ ॥३॥
लग्नविधि प्रभु साचवे, और उचित सब नीत।
समये प्रथम जिनंदके, इन्द्र करे यह रीत ॥४॥
इन्द्र किये व्यवहारको, देख देख सब लोग।
निज निज कारज साधने, करन लगे उद्योग ॥५॥

॥ लावणी ॥

(तर्ज—सग नर परनारी हरना)

ऋषभ प्रभु सब जग वस कीना। किये बहु उपकार जगतमें कर्त्तापन लीना ऋ० ॥ अचली ॥ सिखाया शिल्प पांच प्रभुने। कुम्भकार१ रथकार२ चित्रकृत३ तंतुवाय४ विभुने। पांचमा नापितका५ सहिए। क्रमसे भेद अनेक हुए जग कर्म विविध लहिए। कला नरनारीकी कहिए। युगला धर्म निवारिया, किया जगत उपकार। स्वामी शिक्षासे हुवा, दक्ष लोक नर नार। सफल जग उपकारी जीना ॥ किये बहु उपकार० ॥ १ ॥ उमर छः लाख पूर्व जानो। भरतादिक सतान सुपुत फल गृहस्थ तरु मानो। हुए नृप लाख पूर्व बीसे। पूरन त्रयसठ लाख चलाइ राज्य नीति ईसे। परम्पर आज जगत दीसे। एक दिवस उद्यानमें, कामवास मधुमास। क्रीडा करते लोकको, देख

विचारे खास। अहो जग विषयनमें लीना ॥ किये बहु उपकार० ॥ २ ॥ अरे धिग मोह फसे प्रानी। राग द्वेष वश जन्म गमा देवे नर अज्ञानी। क्रोधसे नाश करे प्रीति। मान विनयका नाश नाश मायासे मित रीति। लोभसे चलती नहीं। नीति काम सुभट वश जीव हा !, जाने नहीं निज रूप अरघट घटी के न्यायसु, क्रिया करे भवकूप। चिंतत इम चित्त हुआ खीना ॥ किये बहु उपकार० ॥ ३ ॥ प्रभु वैराग्य रसे भीना। त्यागन कर संसार चरण लेनेमें चित दीना। बुलाई राज्यसभा भारी। आशय अपना सुनाय भरतको राज्यासन धारी। बनाया विनीता अधिकारी। राज्य भाग सबको दिया, पुत्र बाहुबलि आद। उचित विधि सब साधके, कियो धर्मको नाद। प्रभुने वर्षीदान दीना ॥ किये बहु उपकार० ॥४॥ प्रभु हैं स्वयंबुद्ध धोरी। तो भी अनादि रीत लोकांतिक आए कर जोरी। नमन करी वाणी मधुर बोले। जग उपकारी नाथ नहीं कोइ जगमें तुम तोले। जो मारग शुद्ध धर्म खोले। धर्म तीर्थ वरताइए, आतम लक्ष्मी हेतु। धर्म सदा भवि जीवको, भवसागरमें सेतु। धर्म वल्लभ हर्षे चीना ॥ क्रिये बहु उपकार० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

एक कोड अड लाखका, रोज दिये प्रभुदान।
रकनको करते धनी, एक वर्ष का मान ॥१॥
अते वरसीदानके, सुरपति सह परिवार।
दीक्षा उत्सव भावसे, करते यह आचार ॥२॥
चैतर वदि तिथि अष्टमी, उतरासाढर तार।
ग्रहण कियो संयम विभु, त्यागन कर ससार ॥३॥

(तर्ज—दिन नीके बीते जाते हैं)

प्रभुदीक्षा लेने जाते हैं, जाते हैं हर्षाते हैं प्रभुदीक्षा० ॥ अचली ॥ नगरी विनीतासे प्रभु निकसी, सिद्धार्थ वनमें आते हैं ॥ प्र० ॥ १ ॥ वचन विभूषा त्याग अशोके, देव दुष्य प्रभु पाते हैं ॥ प्र० ॥ २ ॥ चउमुष्टि किया लोच प्रभुने, सुरपति शेष रखाते हैं ॥ प्र० ॥ ३ ॥ केशग्रही सुरपति भक्ति से, क्षीरसागर पधराते हैं ॥प्र०॥४॥ छठ तप सिद्ध नमन करी प्रभुजी, पाप योग वोसिराते हैं ॥ प्र० ॥ ५ ॥ मनपर्यव उत्पन्न हुओ तब सुर-सुरपति गुण गाते हैं ॥ प्र० ॥ ६ ॥ आतम लक्ष्मी वल्लभ हर्षे, हरि नदीश्वर जाते हैं ॥ प्र० ॥ ७ ॥

॥ चतुर्थ केवलज्ञान कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

इस अवसर्पिणि कालमें, हुए प्रथम अनगार।
आदिनाथ जिन साथमें, कच्छ आदि परिवार ॥१॥
पृथ्वी तल पावन कियो, कीनो उग्र विहार।
एक वरस ऋजु कारणे, मिलियो नहीं आहार ॥२॥
विचरंते आए विभू, गजपुर नगर मझार।
बाहुबलि सुत सोम प्रभ, करते राज्य उदार ॥३॥
भाग्यवान तस पुत्र है, श्री श्रेयांस कुमार।
देख प्रभु निज पूर्व भव, जान्यो सब अधिकार ॥४॥
इक्षुरस प्रति लाभके, कीनो मारग दान।
वरसी तपका पारणा, कियौ ऋषभ भगवान ॥५॥

(तर्ज —धन धन वो जगमें नर नार)

धन धन श्री श्रेयांस कुमार प्रवृत्ति दान कराने वाले ॥ अं० ॥ शुद्ध चित्त वित्त दियो दान, शुद्ध पात्र ऋषभ भगवान। फल पायो जस नहीं मान, प्रभु जग तरन तरानेवाले ॥ धन० ॥ १ ॥ हुओ पंच दिव्य परकास, अक्षय तृतीया दिन खास। मिले जन श्रेयांस आवास, अनुमोदन फल पाने वाले ॥ धन० ॥२॥ निर्दोष अन्न जल

नाथ, देवे भवि जो निज हाथ। उतरे झटपट भव पाथ, प्रभुके ध्यान लगानेवाले ॥ धन० ॥ ३ ॥ श्रेयांस दियो उपदेश, समझे तब लोक अशेष। विचरे भू पीठ जिनेस, करम जंजाल मिटानेवाले ॥ धन० ॥ ४ ॥ सहते परिषह भगवान, विचरे सम सहस प्रमान। आतम लक्ष्मीको न दान, हर्ष वल्लभ जिन पानेवाले ॥ धन० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

पुरिम तालमें अन्यदा, आए ऋषभ जिनंद।
वट नीचे प्रतिमा रहे, तप अष्टम आनन्द ॥१॥
कर्मेंधनको जालके, ध्यानानलसे नाथ।
फाल्गुन वदि एकादशी, केवल नाण सनाथ ॥२॥
आसन कंपे इन्द्रका, आवे सुर परिवार।
समवसरण रचना करे, जिन शासन जयकार ॥३॥
सिंहासन बैठे विभू, पूर्व दिये उपदेश।
तीन दिशि प्रति बिंबमें, भेद नहीं लवलेश ॥४॥

॥ होरी ॥

(तर्ज—हरि आवत वे करजोडी)

जगत उपकार करनको, प्रभुवाणी वदे सुखकारी ॥ अचली ॥ चार जातिके देवने मिलकर, समवशरण रच्यो भारी। द्वादश पर्षद गढ तिग मोहे, मन मोहे प्रभु

उपकारी। भवोदधि पार उतारी, प्रभु वाणी वदे सुखकारी ॥१॥ देश विरति अरु सर्व विरति दो धर्म कहे हितकारी। साधु साधवी श्राद्ध श्राविका, थापे तीर्थ प्रभु चारी। रत्न त्रयके अधिकारी, प्रभुवाणी वदे सुखकारी ॥ २ ॥ नित्य प्रति अति सोग धरंति, मरुदेवी माता निवारी। भरतजी साथ लिये वहां आए, देख मोह दियो जारी। गये शिव माता पधारी, प्रभुवाणी वदे सुखकारी ॥ ३ ॥ कच्छ महाकच्छ दो विना सघरे, तापस आए विचारी। प्रभु के चरणमें शरण ग्रहण करी, आतम निज लियो तारी। वारी जाउं वार हजारी, प्रभु वाणी वदे सुखकारी ॥ ४ ॥ पुण्डरीक प्रमुखा प्रभुकीना, चउरासी गणधारी। आतम लक्ष्मी प्रभुता प्रगटी, वल्लभ हर्ष अपारी। जयो जिनवर जयकारी, प्रभुवाणी वदे सुखकारी ॥५ ॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

श्री आदिजिनसर्वज्ञाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥४ ॥

॥ पंचम निर्वाण-कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

द्वादशगुण जिनमें वसे, अतिशय जिन चउतीस।
वाणी गुण पणतीस है, विहरवान जगदीस ॥१॥

भू पावन करते विभु, आए सिद्ध गिरिंद।
समवशरणमें बैठके, दे उपदेश जिनन्द ॥२॥
पुण्डरीकको उपदिशे, ऋषभदेव भगवान।
होगा क्षेत्र सुभावसे, सबको पद निर्वान ॥ ३ ॥
जिन वानी मानी करी, रहे सहित परिवार।
अष्ट करमको चूरके, पहुँचे मोक्ष मझार ॥ ४ ॥
चैत्य कराया भरतने, शत्रुञ्जय गिरिराज।
पुण्डरीक पडिमा युता, थापे श्री जिनराज ॥५॥

॥ सोरठ ॥

(तर्ज—कुच जाने जादु डारा)

प्रभु आदिनाथ सुखकारा, किया जगजीवन उद्धारा ॥ प्र० ॥ अ० ॥ आदिनरेसर आदि जिनेसर, आदि मुनीसर धारा। आदि तीर्थ प्रवर्त्तक कहिए, आदि ऋषभ अवतारा ॥ प्र० ॥ १ ॥ नाना देशमें विचरे जिनजी, बोधि दान दातारा। तीन लाख साध्वी गण सोहे, मुनि चउरासी हजारा ॥ प्र० ॥ २ ॥ तीन लाख पचास हजारा, श्रावक सुव्रत कारा। पांच लाख चउपन्न सहस्सा, श्राविका चित्त उदारा ॥ प्र० ॥३ ॥ चउ विह संघ धर्म में जोडी, जिम लौकिक व्यवहारा। दीक्षा समयसे लाख पूर्व प्रभु, संयम शुद्ध आचारा ॥ प्र० ॥ ४ ॥ मोक्ष समय

जानी प्रभु तीरथ, अष्टापदको सधारा। आतम लक्ष्मी निज ऋद्धिसे, वल्लभ हर्ष अपारा ॥ प्र० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

अष्टापद गिरि ऊपरे, दश हजार मुनि साथ।
भक्त चतुर्दश तप कियो, अनशन दीनानाथ ॥१॥
सुन आए चक्री वहां, भरत भरत भरतार।
आसन कंपे इन्द्र भी, आए सुर परिवार ॥२॥
अवसर्पिणि अर तीसरे, पक्ष नवाशी शेष।
त्रयोदशी वदि माघको, अभिचि तार विशेष ॥३॥
वासर पूरव भागमें पर्यंकासन धीर।
ध्यान शुक्ल बल कर्मको, नष्ट करे वड वीर ॥४॥
कर्म अभावे आतमा, सिद्ध परं पद जास।
अजर अमर अज नित्यता, सादि अनंता वास ॥५॥

॥ धनाश्री ॥

पूजन सुर तरुकंद जिनंद पद पूजन सुर तरुकंद ॥ अंचली ॥ नाभिनंदन परदुखभंजन, रंजन सुरनर वृन्द ॥ जिनंद०॥१॥ प्रभु निर्वाण महोत्सव कारण, आए चउसठ इंद ॥ जिनंद०॥२॥ प्रभु संस्कार स्थानमें सुरवर, रयण मय थुंभ करंद ॥ जि० ॥३॥ नंदीश्वर शाश्वत प्रतिमोत्सव, करी हरि हर्ष धरंद ॥ जि० ॥४॥ प्रभु संस्कार निकट भू

तलमें, चैत्य करावे जिनद ॥ जि० ॥५॥ चउवीस जिनबिंब थापी भरतजी, तन मन अतिविकमन्द ॥ जि० ॥६॥ वदन कमल कांन्ति प्रभु निरखी, हसभरतहुलसद ॥ जि० ॥७॥ आतम लक्ष्मी प्रभुता प्रगटी, वल्लभ हर्ष अमद ॥ जि०॥८॥

॥ कलश ॥

(रेखता)

प्रभुश्री आदि जिनराया, कल्याणक पाँच शुभ भावे । आराधे जो भवि प्रानी, अपुनरावृत्ति फल पावे ॥१॥ सिद्धाचल[१] आबू[२] मेत्राणा[३], जघडिया[४] कावी[५] देलवारा[६] । अचलगढ[७] कांगडा[८] कुल्पाक[९] , माणक[१०] स्वामी आनदकारा ॥२॥ घाणेरा[११] कोरटा[१२] नाडुलाई[१३], अयोध्या[१४] और पुरिमताला[१५] । राणकपुर[१६] राजनगर[१७] दीपे, केसरियानाथ[१८] उपरियाला[१९] ॥३॥ इत्यादि तीर्थ नगर ग्रामे, प्रभुश्री आदि जिनदेवा । कल्याणक पूजना काजे, करी रचना प्रभु सेवा ॥४॥ नगर शिवगजसे चलके, आयो सघ नाथ धूलेवा । करी करुणा कृपासागर, दीजे फल आपकी सेवा ॥५॥ मुखी गोमराज हसाजी, सकल परिवारके सगे । करी यात्रा कराई है, निकाली सघ अति रगे ॥६॥ सतावीस[२७]साधु साधविया, उणत्त[१६६] साथ सघ आवे । केसरिया नाथके दर्शन, करी महानदको पावे ॥७॥ ऋषि[७]

मुनि७ अंक९ चंद्राब्दे१ (१९७७), मधु दशमी सुदि सारी। करी यात्रा शशिवारे, हुओ आनंद अति भारी ॥८॥ दिवस महावीर जयंतीका, त्रयोदशी चैत्र गुरुवारे। आतम लक्ष्मी केसरियामें, पूरण वल्लभ हर्ष धारे ॥९॥ तपागच्छ नाम दीपाया, श्री विजयानंद सूरिराया। विजयलक्ष्मी गुरुदादा, विजय श्री हर्ष गुरु पादा ॥१०॥ लघु तस शिष्य वल्लभने, स्तवे श्री आदि जिन भावे। कारण छद्मस्थ स्खलनाका, मिच्छामि दुक्कडं थावे ॥११॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

श्रीआदिजिनपारंगताय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥५॥

卐

श्रीमद् विजयवल्लभसूरि विरचित

॥ श्री शांतिनाथ पंचकल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

शांतिनाथ जिन सोलमा, शांतिकरण सुखदाय ।
नमन करी स्तवना करूं, सिमरी शारद माय ॥१॥
विजयानद सूरीशके, चरनकमल मन लाय ।
शातिनाथ पूजा रचू, हेम सूरि सुपसाय ॥२॥
कल्याणक जिनदेवके, पच अनादि रीत ।
च्यवन१ जनम२ व्रत३ ज्ञान४ है,पचममोक्ष५ पुनीत॥३॥
समकितसे भव जानिये, अतिम भव निरधान ।
इस कारण अरिहंतके, वर्णन भव परमान ॥४॥
शातिनाथ अरिहतके, द्वादश भव विस्तार ।
द्वादशमे भव मानिये, कल्याणक अधिकार ॥५॥
नदीश्वर उत्सव करे, प्रति कल्याणक इन्द ।
श्रावक तिम शुभ भावसे, पूजे श्री जिनचंद ॥६॥
जल१ चदन२ सुम३ धूपसे४ दीपा५ क्षत६ फल७ सार।
शुचि नैवेद्य८ मिलायके, पूजा अष्ट प्रकार ॥७॥

(तर्ज सारंग—कहरवा-समकित आतम गुण प्रगटाना)

तीर्थंकर पद जाऊं बलिहारी ॥अंचली०॥ तीर्थ करे तीर्थंकर कहिये, तीरथ श्री संघ चार प्रकारी ॥ तीर्थंकर ॥१॥ चारों गतिमें जीव विलक्षण,+ तीर्थंकर पदके अधिकारी ॥ तीर्थंकर० ॥ २ ॥ उत्कृष्टा पुण्योदय होवे तीर्थंकर शुभ नाम. उचारी ॥ तीर्थंकर० ॥ ३ ॥ कल्याणक जिनदेवके करते, सुर सुरपति उत्सव अति भारी ॥ तीर्थंकर० ॥ ४ ॥ नाम थापना द्रव्य भावसे, तीर्थंकर सेवे नर नारी ॥ तीर्थंकर० ॥ ५ ॥ चौतीस अतिशय पैंतीस वाणी, प्रगटे अरिहंतके गुण वारी ॥ तीर्थंकर० ॥ ६ ॥ आतम लक्ष्मी संपदा प्रगटे । होवे वल्लभ हर्ष अपारी ॥ तीर्थंकर० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

पहला भव श्रीषेणका१ युगल२ दूसरा जान ।
स्वर्ग प्रथम३ है तीसरा, अमिततेज४ चउ मान ॥१॥
पंचम दशमें५ स्वर्गमें, अपराजित६ बलदेव ।
अच्युतपति भव सातमें, अष्टम भव नरदेव८*॥२॥

\+ तीर्थंकर होनेवाला जीव चारों गति में अन्यान्य उस-उस गति के जीवों से स्वाभाविक ही विलक्षण होता है ।

* नरदेव—चक्रवर्ती राजा ।

ग्रैवेयक९ नवमे भवे, दशम मेघरथ१० राय।
तीर्थंकर शुभ नामको, बांधे जिनपद दाय ॥३॥
अंतिम११– स्वर्ग एकादशे, द्वादशमे१२ अवतार।
हेमचन्द्रगुरु भाखिया, शांति चरित विस्तार ॥४॥
समकित सबका मूल है, ज्ञान चरण आधार।
तीनों जब पूरण मिले, तब होवे भवपार ॥५॥

(तर्ज वनजारा की—श्रीसुविधि जिनंद सुखकारी)

हुये निजगुण समकित धारी। आतम शांति सुखकारी ॥ अंचली ॥ श्रीषेण रतनपुर राजा, नीतिमंदों थिरताजा, अभिनंदिता तस नारी। आतम शांति० ॥१॥ इंदुषेण बिन्दुषेण नामा सुत दो नृपमन अभिरामा, कला यौवन वयमें धारी। आतम शांति० ॥२॥ पुण्योदय सुगुरु पाया, उपदेश सुनी सुखदाया, लिया समकित मिथ्या टारी ॥ आतम शांति० ॥३॥ एक दिन दोनों भाई वन मे, लगे लड़ने ईर्षा मनमें, वेश्या× कारण अवधारी। आतम शांति० ॥४॥ दोनों अभिमानी बलिया,

—अन्तिम स्वर्ग सर्वार्थसिद्ध नाम का २६वां देवलोक।

×कौशाम्बी नगरी की रहनेवाली 'अनंतमतिका' नाम की वेश्या। कौशांबी नगरीका राजा 'बल' नाम उसकी 'श्रीमती' नामकी

नहीं एक भी हठ से चलिया, श्रीषेण हुओ दुखी भारी। आतम शांति० ॥ ५ ॥ राणी संग राजा विचारी, मृत्यु दिलमें गिरधारी, कियो जहर प्रयोग लाचारी। आतम शांति ॥ ६ ॥ आतम लक्ष्मी प्रभु हर्षे, सिमरी उत्तर कुरु[१] वर्षे हुये[२] युगल रूप नर नारी। आतम शांति० ॥७॥

राणी से उत्पन्न हुई 'श्रीकांता' नाम कन्या थी। कन्याको उमरलायक हुई समझकर राजा बल ने बड़ी ऋद्धिसहित श्रीषेणराजा के पुत्र इन्दुषेण के स्वयंवर में भेजी थी। 'अनंतमतिका' नाम की वेश्या भी उस प्रसंग में वहाँ साथ में आई थी, जिसको देखकर मोहित हुये दोनों भाई आपस में उसकी प्राप्ति के निमित्त लड़ने लगे। पिता ने बहुत कुछ समझाया परन्तु एक भी अपने दुराग्रह से पीछे नहीं हटा। आखिर श्रीषेणने लाचार हो, मारे शर्म के जहरवासित कमलको सूंघकर अपने प्राणों की आहुति कर दी।

१ जंबूद्वीपांतर्गत 'उत्तरकुरु' नाम के युगलियों के क्षेत्र में।

२ श्रीषेणराजाकी 'अभिनंदिता' और 'शिखिनंदिता' दो रानियां थी। अभिनंदिता के जीव का संबंध श्रीषेण के जीव के साथ श्रीशांतिनाथस्वामि के अन्तिम भव पर्यन्त रहा है, इसलिये अभिनंदिता के जीव का खास वर्णन पूजा में लिया गया है। बाकी यूं तो राजा श्रीषेण के साथ दोनों ही राणियों ने और एक 'कपिल' नाम के दासी पुत्र की स्त्री 'सत्यभामा' नाम की ब्राह्मणी, जिसको धोखे में कपिल को ब्राह्मण पंडित समझकर उसके पिता ने

॥ दोहा ॥

लडते दोनों भ्राता को विद्याधर कहे आय ।
थिर चित्त हो दोनों सुनो, बात कहूँ सुखदाय ॥१॥
लडते हो जिस कारणे, सो तुम भगिनी होय ।
ज्ञानी विन नहि जीवको, बोध करे जग कोय ॥२॥
नाम[१] विजय पुष्कलवई, विद्याधर आवास[२] ।
पुरि आदित्याभापति, नाम कुण्डली खास ॥३॥
सती अजितसेना भली, राणी तस सुत जान ।
मणि कुण्डली शुभ नाम है, कुल जाती परधान ॥४॥
प्रभुवदनको एक दिन, गया[३] अमितयश पास ।
निज पूरव भव पूछके, पूरी मन की आस ॥५॥

विवाही थी, पीछे पर्दा खुल जाने से विरक्त होकर दीक्षा लेने की इच्छा से राजा की रानी के पास पुत्रीवत् रहती थी उसने, एवं चारों ने विषप्रयोग से प्राण त्याग दिये और चारों ही युगलिकपने पैदा हुवे। जिनमें श्रीषेण और अभिनंदिता पुरुष-स्त्री रूप पैदा हुये। दूसरा जोडा शिखिनंदिता पुरुष और सत्यभामा स्त्रीपने पैदा हुए।

१ जम्बूद्वीप महाविदेह सीता नदी के उत्तर तटपर।

२ वैताढ्य पर्वत।

३ पुण्डरिकिणी नगरीमें।

(तर्ज—लेली लेली पुकारे वनमें)

प्रभु अमितयशा फरमाना, सुन मणिकुंडली जग-आया। नहीं पार किसीने पाया, जिसने पाया उसने छिपाया ॥प्र०॥१॥ वीतशोक१ रत्नध्वज राजा, चक्रवर्ती गरीब निवाजा। कनक श्री हेमामालिनी रानी, सती शीलवती पतिमानी ॥प्र०॥२॥ पुत्री कनकश्री कनकलता थी, एक दूसरी पद्मलता थी। हेममालिनी पुत्री पद्मा, लियो संयम बनी गुण सद्मा ॥ प्र० ॥ ३ ॥ दैवयोग एक एक दिन वेश्या, देखी आयी अशुभ मन लेश्या। बनूं ऐसी तप परभावे, मरके देवी सुधर्में थावे ॥प्र०॥४॥ जीव कनकश्री दान प्रभावे, बना मणिकुंडली तूं भावे। कनक पद्मलता इम भावे, इंदुषेण बिंदुषेण थावे ॥ प्र० ॥५॥ पद्माजीव वेश्या हुई भारत, करे निजपर सबको गारत, इंदुषेण बिंदुषेण भाई, करते हैं उस हेतु लड़ाई ॥ प्र० ॥६॥ प्रभु मुखसे सुनी यह बात, युद्ध रोकने आयो भ्रात। पूर्व भवकी मैं तुमरी माता, भगिनी गणिका वस धाता ॥

---

१ पश्चिम पुष्करवरद्वीप शीतोदा नदी के दक्षिण किनारे सलिलावती नाम के विजयमें 'वीतशोक' नाम का नगर का राजा 'रत्नध्वज'।

प्र० ।७॥ मोह विलसित सारा ससार, समझो सोचो करो निरधार। राग द्वेष मोहको त्यागो, आतम लक्ष्मी मुनि पथ लागो ॥ प्र० ॥८॥

॥ दोहा ॥

धिक धिक हम पशुतुल्यको, इम बोले दो भ्रात।
गुरुसम हम समझाइया, धन्य पूर्व भव मात ॥१॥
छोर[1] सकल ससारको, धर्म रुचि गुरुपास।
चार सहस नृप साथमें, व्रत लीनो सुखरास ॥२॥
शुक्ल-ध्यान दावानलें, कर्म काष्टको जार।
सिद्धि नगर वासा किया, आवागमन निवार ॥३॥
आयु युगल पूरण करी, स्वर्ग सुधमें जाय।
काल करी नरलोकमें रथनूपुरमें[2] आय ॥४॥
अर्क[3] कीर्ति सुत ऊपनो, ज्योतिर्माला पेट।
अमिततेज अभिधा धरे, मात पिता दुख मेट ॥५॥

---

१ इन्दुषेण विन्दुषेण दोनों भाई।

२ भरतक्षेत्र वताढ्य पर्वत रथनूपुरचक्रवाल नाम का नगर।

३ ज्वलनजटी विद्याधरपुत्र अर्ककीर्त्ति की स्त्री ज्योतिर्माला की कूख से श्रीषेण का जीव पुत्रपने पैदा हुआ जिसका नाम अमिततेजा रखा।

(तर्ज—लावणी देश-त्रिताल-सिद्धाचल तीरथनाथ)

आतम गुण समकित सार जगतमें जानो, समकितसे निर्मल ज्ञान क्रिया सब मानो ॥ अंचली ॥ शुद्ध देव गुरु शुद्ध धर्म तत्त्व हैं तीनों, अथवा नव तत्त्व कहे जिनदेवके चीनो । है जीव१ अजीव२ पुण्य३ अरु पाप४ पिछानो, आस्रव५ संवर६ और बंध७ निर्जरा८ ठानो । नवमा है मोक्ष९ स्वरूप कहे जिनरानो ॥ समकितसे० ॥ १ ॥ समकित परभाव श्रीषेण जीवको कहिये, शोडष जिन शांतिनाथ शांति पद लहिए । चौथे भव नाम अमिततेजा तस नारा, नारायण× पुत्री ज्योतिप्रभा गुण भारी । शिखिनंदिता श्रीषेण पूर्व भव मानो ॥ समकितसे० ॥२॥ रविकीर्ति पुत्री सुतारा भामा* थावे, अभिनंदिता नारायण पुत्र कहावे । श्रीविजय नाम शुभ मात तातने दीनो, जस लग्न सुतारा संग तातने कीनो । इम चारोंका संबंध

× श्रीषेण के भव में शिखिनंदिता नाम की श्रीषेण की जो दूसरी राणी थी उसका जीव, त्रिपृष्ट नाम के वासुदेवकी स्वयंप्रभा नाम की राणी की कूखसे पुत्रीपने पैदा हुआ जिसका नाम ज्योतिप्रभा रखा गया, वह अमिततेजा के साथ विवाही गई ।

* सत्यभामा का जीव ।

विचारी जानो ॥ समकितसे० ॥ ३ ॥ अर्ककीर्त्ति छोरी राज्य हुतो अनगारी, करे अमिततेज अब राज्य न्याय अनुसारी। भ्राता त्रिपृष्ट वियोग सोग हलधारी[१] हुओ साधु कर श्रीविजय राज्य अधिकारी। प्रगट्यो निज आतम केवल ज्ञान खजानो ॥ समकितसे० ॥ ४ ॥ विद्याधर अशनिघोष कपिल अवधारो, हरी नार सुतारा कीनो कपट विस्तारो। आखिर संग्रामसे भाग शरण बलर लीनो, श्रीविजयामिततेजा ने पीछो कीनो। ज्ञानी मुनिने पूरव संबध बखानो ॥ समकितसे० ॥ ५ ॥ श्रीषेण अमिततेजाको प्यारे जानो, अभिनंदिता श्रीविजयराज को मानो। शिखिनंदिताको ज्योति प्रभा दिल धारो, सत्यभामा नाम सुतारा जीव ये चारो। विद्याधर अशनिघोप कपिल अभिधानो ॥ समकितसे० ॥ ६ ॥ अशनि[२] माता वहाँ आई सुतारा लेके, मुनि चरणी दोनों भावसे मस्तक टेके। उपदेश सुनि मुनि त्याग दिया ससारा, लिया सयम अपने

---

१ अचल नाम का बलदेव। २ अचल बलदेव केवलज्ञानी मुनि के शरणमें अशनिघोष विद्याधर श्री विजयराज और अमिततेजा के प्रताप को न सहनकर संग्राम को छोड भागकर आ गया, पीछे ही पीछे श्री विजयराज और अमितेजा भी वहा ही आये।

२ अशनिघोष।

आप किया निस्तारा। आतम लक्ष्मी वल्लभ मन अति हर्ष खानो ॥ समकितसे० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

मुनि उपदेश प्रभावसे, शांत हुये सब छेक१ ।
अशनिने२ संयम लिया, नृपति साथ अनेक ॥१॥
स्वयं प्रभा श्रीविजय की, माता तज संसार ।
शुद्ध भाव संयम ग्रही, निज आतम उद्धार ॥२॥
श्रीविजयामिततेजने, अणुव्रत लीना धार ।
नमन करी मुनिराजको, पहुँचे नगर मझार ॥३॥
विधिसे श्रावक धर्मको, आराधी दो राय ।
राज्य देश निज पुत्रको, आप हुये मुनिराय ॥४॥
श्रीविजयामिततेज दो, अनशन कर सनिदान ।
निर्निदान३ क्रमसे बने, प्राणत४ कल्प विमान ॥५॥

---

१ छेक-चतुर । २ अशनिघोष ।

३ श्रीविजय राजर्षिने अपने पिता त्रिपृष्ट वासुदेव की ऋद्धि को याद करके आप वासुदेव बनने का नियाणा किया था इस लिये 'सनिदान' नियाणावाला और अमिततेजा ने नियाणा नहीं किया था इसलिये 'निर्निदान' नियाणा विनाका ॥

४ प्राणत कल्प दशमा देवलोक ।

(तर्ज पीलू—अथवा—गिरिवर दर्शन विरला पावे)

जिनवर वचन जगत हितकारी, निज निज भाव करण अधिकारी ॥ अ० ॥ कर्माधीन जीव जग फिरता, नाना रूप धरत ससारी । कर्म रहित आतम निजरूपे, सत चित आनद रूप विहारी ॥ जिन० ॥१॥ पूर्व* विदेहे रमणी विजयमें, शुभ नामा नगरी शुभकारी । स्तिमित सागर नृप राणी वसुन्धरा, कूख अमिततेजा अवतारी ॥जिन० ॥२॥ गज१ वृष२ चांद३ सरोवर४ पूरण, देखे सुपने राणीने चारी। पूछा पतिको नृप कहे देवी, सुत होगा उत्तम हलधारी× ॥ जिन० ॥३॥ पुत्र हुआ दिया नाम पिताने, अपराजित रूप लक्षण भारी । देखत दिलमें हर्ष मनावत, मात पिता सज्जन नर नारी ॥ जिन० ॥४॥ नाम अनुंधरा दूसरी राणी देखत सुपना शयन मझारी । केसरी१ लक्ष्मी२ सूर्य३ कलश४ फुन, सागर५ रतन६ जलन७ महोहारी ॥जिन०॥५॥ पतिको कहती प्रेमसे राणी, सुपने देखे मात उदारी । क्या होगा फल नाथ कहे नृप, विष्णु सुत होगा नलकारी ॥ जिन० ॥६॥ स्वर्गसे जीव श्री विजयका च्यवके, आया गर्भमें पुण्य आधारी । समये पुत्र हुओ अति सुन्दर, नाम

* जंबुद्वीपमें । × हलधारी-बलदेव ।

अनंतवीर्य अवधारी ॥ जिन० ॥७॥ राम कृष्ण दोनों बड-भागी, विद्या यौवनके हुये धारी। आतम लक्ष्मी हर्ष अनुपम, वल्लभ उत्तम जन बलिहारी ॥ जिन० ॥८॥

॥ दोहा ॥

स्तिमितसागर नृप एकदा, मुनिसे सुन उपदेश।
अनंतवीर्यको नृप बना, आप लियो मुनिवेश ॥१॥
मूलोत्तर गुण साधता, तप तपता मुनि इंद।
अंत विराधक दैववश, हुआ बना चमरींद ॥२॥
राम कृष्ण दो न्याय से, करे पिताका राज।
विद्याधर सहवाससे, सीखे विद्या व्राज ॥३॥
एक दिवस नारदमुनि, आया पर्षद माह।
नाटक[१] दासी तानमें, ख्याला किसीने नाह ॥४॥
रोष करी चलता हुआ, गया दमितारि पास।
शोभा चेटीकी करी, हुई दमितारी नाश ॥५॥

---

१ बर्वरी और किराती नाम की दो दासी गीत नाटकादि कला में अति कुशल थीं, जिस वक्त नारदजी अनन्तवीर्य और अपराजित दोनों भाइयों की राजसभा में आए उस वक्त वहाँ उन दोनों दासियों का संगीत हो रहा था, इस कारण किसी ने इधर ख्याल नही किया, जिस पर नारदजी विगड़ पड़े।

(लावणी-चाल सग नर परनारी हरना)

करमकी वात जगत भारी, किये करम फल पाय शुभाशुभ, जग सब नरनारी ॥ क० ॥ अचली ॥ करम फल निज निजका पाना, मीठा हो वा कटुक विना किये नहीं फल नाना । निमित्त मातर परको जानो, भोजन किया खराब बुरा उडकार भी तस मानो । थान सब रीति यह ठानो । नारद दासी दो वने, दमितारिके निमित्त । होण-हार ही होत है, होणी आवे चित्त । मांगता दासी दमितारि ॥ किये करम० ॥१॥ दूतने दासी मांग कीनी, भेजेंगे कर सोच चलो आज्ञा विष्णु दीनी । सलाह कीनी दोनों भाई, कीजे विद्या सिद्ध प्रथम पीछे सब चतुराई । करी सिद्ध विद्या अपनाई । दूत दुबारा आगया, दीनो तस समझाय । विद्यावल दासी बने, राम कृष्ण दो भाय । गये सग दूत खबरदारी ॥ किये करम० ॥ २ ॥ देखके दमितारि मनमें, सोचे रूप अपूर्व अहो इन दोनोंके तनमें । करण नाटक आज्ञा दीनी, दोनोने कर रग अपूरब सभा मूढ कीनी । धार ससार सार लीनी । खुश हो दमितारि कहे, सुनो हमारी वात । सिखलाओ नाटक कला, पुत्री मुझ दिनरात । कनकश्री होवे हुशियारी ॥

तुम० ॥ १ ॥ न्याय नीतिसे राज्य चलाते अत्याचार निवार । पर उपकार करनमें सूरे धन धन तुम अवतार ॥ तुम० ॥ २ ॥ विरता माता कूखसे उपनी सुमति कन्या सार । बलभद्र जस तात कहावे वार वार बलिहार ॥ तुम० ॥ ३ ॥ धर्म पसाय स्वयंवर मंडप बोध दियो सुरी[1] आय । मात पिता परिवारकी आज्ञा लेकर संयम पाय ॥ तुम० ॥ ४ ॥ कर्म खपाई मोक्ष सधाई सुमति हुई भव पार । अनंतवीर्य वियोगसे मनमें अपराजित दुख धार ॥ तुम० ॥ ५ ॥ धिक संसार असार विचारी नृप संग सोल हजार । जयंधर गणधर चरनोंमें त्याग दियो संसार ॥ तुम० ॥ ६ ॥ आतम लक्ष्मी कारण संयम पारी अनशन धार । द्वादश स्वर्ग पति सुरवल्लभ उपनो हर्ष अपार ॥ तुम० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

नरकायु पूरण करी, दो चालीस हजार ।
अनंतवीर्य वैताढ्यकी, उत्तर श्रेणि सार ॥ १ ॥
नगर गगनवल्लभ पति, मेघवाहन भूपार ।
मेघमालिनी कूखसे, मेघनाद अवतार ॥ २ ॥

---

१ सुरी-देवी जो समति कन्या की पूर्व जन्म की बहिन थी ।

यौवन वय राजा हुओ, दो श्रेणी भरतार।
विद्यावल मेरु गिरि, सिद्धायतन जुहार ॥ ३ ॥
शाश्वत जिन वदन लिये, आयो सह परिवार।
पूर्व सहोदर देखके, जाग्यो स्नेह उदार ॥ ४ ॥
बोध दियो हरि भाइको, करो त्याग संसार।
मानलियो गुरुवचन सम, मानी अति उपकार ॥ ५ ॥

(तर्ज वसन्त—होई आनन्द वहार)

धर्म सदा जयकाररे भवि धारो हियेमें। धारो हियेमें सारो जिये में, धर्म सदा जयकार रे ॥भवि०॥अं०॥ अमर-गुरु नामा मुनिरे, आये करत विहाररे ॥ भवि० ॥ १ ॥ मेघनाद विद्याधरे रे, लीनो सयम भार रे ॥ भवि० ॥ २ ॥ एक दिवस मेरु गिरि रे, लायो ध्यान उदाररे ॥भवि०॥३॥ अश्वग्रीव नंदन अरिरे, पूरव भव अनुसाररे ॥ भवि० ॥४॥ दैत्य हुओ भटकत भवेरे, वैर मुनिपर धाररे ॥ भवि० ॥ ५ ॥ कष्ट दिये दिये कई जातकेरे, सहन किये अनगाररे ॥ भवि० ॥ ६ ॥ आतम लक्ष्मी हर्षसेरे, मुनि अनशन अवधाररे ॥ भवि० ॥ ७ ॥ अच्युत सामानिक हुओरे, वल्लभ हर्ष अपाररे ॥ भवि ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

अष्टम भव जिन शांतिका, सुनिये चित्त लगाय ।
अच्युतपति पद भोगके, अपराजित सुखदाय ॥१॥
पूर्व विजय मंगलावती, रत्नसंचया नाम ।
पुरि क्षेमंकर नरपति, योग क्षेमके धाम ॥२॥
रत्नमाला राणी सती, तस कूखे अवतार ।
पंदरमा[1] सह वज्रके, चउद सुपन अवधार ॥३॥
राणी पूछे रायको, नाथ कहो फल आप ।
होगा सुत चक्री तुझे वज्री[2] सम परताप ॥४॥
जन्म समय सुत तातने, कियो उत्सव अभिराम ।
वज्र सुपनके ख्यालसे, दियो वज्रायुध नाम ॥५॥

(तर्ज—सीया राम भजो मन मेरा)

धन्य वज्रायुध अवतारा, जिने समकित दृढ़तर धारा ॥ धन्य०॥ अंचली ॥ यौवन वय वज्रायुध धारी, पाली सकल कला हुशियारी, मात पिता संबंधी विचारी, लक्ष्मीवती विवाही नारी ॥ प्रभु० ॥ जीव अनंतवीर्यका च्यवके अच्युत कल्पसे आवे, लक्ष्मीवती कुक्षी सुक्तिमें मुक्ताफल सम थावे । सूचित सुन्दर स्वप्न अनुपम समय सुत फल पावे,

---

१—राणी रत्नमालाने वज्र सहित १५ स्वप्न देखे । २ वज्री-इन्द्र ।

सहसायुध ठवी नाम महोत्सव विधविध तात करावे । यही रीति सब समारा ॥ धन्य वज्रायुध अवतारा ॥१॥ यौवनवय कलावान कहायो, दादा दादी दिलमें सुहायो, नृपपुत्री कनकश्री करायो, आनंद मंगल मग्न समायो ॥ प्र० ॥ तिसकाभी सुत हुवा अनुपम शतबलि नाम धराया, बैठे एक दिन सब परिवारे क्षेमंकर महाराया । ईशानेंद्र देवसभामें वज्रायुध गुण गाया, चित्रचूल सुर माने नाही लेन परीक्षा आया । जग दुर्जन यह अधिकारा ॥ धन्य वज्रायुध अवतारा ॥२॥ नास्तिक मतिसे सुर प्रश्न कीनो, समकित में वज्रायुध लीनो, उत्तर सुरको यथारथ दीनों तू प्रत्यक्ष विरोध में भीनो ॥ प्र० ॥ खुद ही अपने ज्ञानमे देखो पूरव भव क्या कीता, सुकृत जिसका फल वैभव यह सुरभवका है लीता । पूरव भव थे ना तुम इस भव देव जीव है जीता, इस भव परभव उभय लोक है सिद्ध वचन यह गीता । कहे जिनवर महगणधारा ॥ धन्य वज्रायुध अवतारा ॥३॥ चित्रचूल कहे धन्य बलिहारी, भवजल गिरतो लीनो उगारी, चिर मिथ्यात्व में दीनो विसारी, दीजे समकित मुझ उपकारी ॥ प्र० ॥ वज्रायुधने समकित दीनो सुर कहे अति हरखाना, किंकर हूँ मैं तुमरा स्वामी

अवसर याद कराना। नमन करी आभूषण देई पहुँचा देव विमाना, सुरपति संमुख भावे कीना वज्रायुध गुणगाना। होवे गुणी गुणिजन गुण भारा॥ धन्य वज्रायुध अवतारा ॥४॥ इन्द्र कहे सुन सुरवर प्यारे, धन्य है वो जो समकित धारे, आप तरे औरोंको तारे, वज्रायुधमें गुण हैं अपारे। ध्र०। क्षेमंकर जिन केवली होके होंगे तोरथ स्वामी, चक्री होगा तब वज्रायुध चक्ररत्नको पामी। पंचम भवमें पंचम चक्री शांतिनाथ अभिरामी, आतम लक्ष्मी तीर्थंकर पद सेवा आतमरामी। होगा वल्लभ हर्ष अपारा॥ धन्य वज्रायुध अवतारा ॥५॥

॥ दोहा ॥

ऋतु वसंतमें एक दिन, जलक्रीडा के हेत।
वज्रायुध वापी[१] गयो, अंतेऊर समेत ॥१॥
दमितारि अरि पूर्वका, देव[२] हुओ वहां आय।
वज्रायुधको देखके, पूर्व वैर मन लाय ॥२॥
मारणकी इच्छा करी, सपरिवार कुमार।
वापी ऊपर डारियो, पर्वत एक उखार ॥३॥

---

१ वापी=वाव-बौडी। २ दमितारी प्रतिवासुदेवका जीव चिरकाल संसार में परिभ्रमण करता हुआ इस समय विद्युदंष्ट्र नाम का देवता हुआ था।

निज बल तोड पहाडको, वज्रायुध बलवान।
बापि बाहिर आइयो, तोडी सुर अभिमान ॥४॥
इस अवसर नदीश्वरे, हरि[१] यात्रा मन धार।
नमन विदेहज[२] जिनकरी जाता देख कुमार ॥५॥

(बरवा—कहेरवा चाल धन धन वो जगमे)

धन धन वज्रायुध नरनाथ, जाऊं तुम चरनन पर वारी ॥ अचली ॥ तुम इम भव हो नरनाथ, पंचम भव शांतिनाथ। बनोगे नर[३] और तीरथ नाथ, नमन करुं चरनन वार हजारी ॥ध०॥१॥ गयो हरि निज स्वर्ग मझार वज्रायुध नगर पधार। किया क्षेमकरने विचार, राज्यका वज्रायुध अधिकारी ॥ध०॥२॥ समये लोकांतिक आय, विनवे क्षेमकर पाय। लेइ दीक्षा तीर्थ चलाय, करो उपकार जगत उपकारी ॥ध०॥३॥ दियो प्रभुने वार्षिकदान, लियो संयम अति सनमान। कियो प्रगट केवलज्ञान, करी क्षय घातीकर्मको चारी ॥ध०॥४॥ वज्री वज्रायुध साथ, उपदेश सुनी जगनाथ। भावे नमी जोरी हाथ, गये निज धाम अतुल सुखकारी ॥ध०॥५॥ आतम लक्ष्मी सुपसाय,

---

१ इन्द्र। २ महाविदेह के तीर्थंकरोंको। ३ नरनाथ—चक्री और तीर्थनाथ - तीर्थंकर।

क्षेमंकर श्रीजिनराय विचरे भविजन हर्षाय, करी वल्लभ जिनराज दिदारी ॥ ध० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

वज्रायुध चक्री बन्यो, विजय कियो छै खंड ।
न्याय सहित पालन करे, प्रजा नहीं कर दंड ॥१॥
यौवराज्य स्थापन कियो, सहस्रायुध कुमार ।
बैठो एक दिन पर्षदि, साथ सकल परिवार ॥२॥
डरतो१ विद्याधर युवा, शरणे आयो राय ।
पीछे मारनको कई, आये दिये समझाय ॥३॥
सबने संयम ले लिया, क्षेमंकर जिन पास ।
कर्म खपी मुक्ति गये, हो गई पूरण आस ॥४॥
वज्रायुध सुत सुत भलो, कनकशक्ति शुभ नाम ।
संयम लेइ मुक्ति गयो, पायो आतमराम ॥५॥

---

१ एक दिन चक्रवर्ती राजा वज्रायुध अपने मातहतके राजा सामंत और मंत्री मंडल आदिके साथ सभा में बैठे हुए थे इतनेमें एक युवा विद्याधर कांपता हुआ आकाशसे नीचे उतरा और वज्रायुध की शरण में आया । उसके बाद ही ढाल तलवार हाथ में लिये एक विद्याधरी और गदा हाथ में लिये हुए एक विद्याधर भी आ पहुँचे ।

(माढ दादरा-मेरे गमका तराना यह तर्ज चाल-हिमाचल धारा)

जिनवर हितकारी अति उपकारी नमिये वार हजार। प्रभु आनंदधारी जय जयकारी, जाऊं बलिहारी नमिये वार हजार ॥ अ० ॥ क्षेमकर प्रभु आवियारे, सुन वज्रायुध राय। आडंवर शुद्ध भावसेरे, आय नमे प्रभु पायरे ।प्रभु०। ॥१॥ शुभ भावे प्रभु देशनारे, सुन संयम मन धार। राजा१ राणी पुत्रकेरे, साथ हुओ अनगाररे ॥ प्रभु० ॥२॥ सहन करत उपसर्गकोरे, करता उग्र विहार। तप तपता कड जातकेरे, निज आतम उद्धाररे ।प्रभु०॥३॥ सहस्रायुध सुन आवियारे, पिहिताश्रव गणधार। कर्णामृत सुनो देशनारे, लीनो संयम भाररे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ सहस्रायुध मुनि विचरतारे, वज्रायुध मिला आय। पुत्र पिता दोनों मुनिरे, विचरे साथ सदायरे ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ पदरमे देवलोकमे रे, उपने अनशन पाल। आतम लक्ष्मी संपदारे, वल्लभ हर्ष निहालरे ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

---

१ चार हजार मुकुट बध राजा, चार हजार राणिया और सात सौ पुत्रों के साथ वज्रायुध चक्रर्तिने श्री क्षेमंकर तीर्थंकर के चरणोंमें दीक्षा धारण की।

॥ दोहा ॥

पुंडरकिणी नगरी भली, राजा घनरथ सार।
प्रियमति और मनोरमा, दो तस सुन्दर नार ॥१॥
ग्रैवेयक पूरण करी, वज्रायुध निज आय[1]।
प्रियमति उदरे आवियो, मेघ सुपन दरसाय ॥२॥
सहस्रायुध रथ स्वप्नसे, मनोरमा उर धार।
समये सुत दो ऊपने, आनंद हर्ष अपार ॥३॥
नाम मेघरथ ठानियो, प्रियमति सुत अभिराम।
मनोरमा सुत धारियो, दृढ़रथ सुन्दर नाम ॥४॥
यौवन वय शादी[2] हुइ, नंदिषेण घनसेन[3]।
तनय मेघरथ जानिये, दृढ़रथ सुत रथसेन ॥५॥

(तर्ज— कुबजाने जादू डारा)

धन्य घनरथ नृप अवतारा, जिनें सार लिया संसारा ॥ धन्य० ॥ अं० ॥ एक दिन पुत्रप्रपुत्र सहित नृप, अंतेउर परिवारा। नाना विनोद करत उसवेरा, गणिका वचन उचारा ॥ धन्य० ॥१॥ देव मेरा यह कुर्कुट जिसके, कुर्कुटसे जाय हारा। लाख सुनैये देऊं उसको, सच्चा प्रण है म्हारा ॥ धन्य० ॥ २ ॥ राणी मनोरमाने मंगवाया,

---

१ आयु। २ शादी=विवाह-लग्न। ३ मेघसेन।

क्रीडा कुर्कुट सारा। दोनों युद्ध करत आपसमें, देवत खून प्रहारा ॥ धन्य० ॥ ३ ॥ कहे घनरथ दोनोंमें कोई, जीतेगा नही प्यारा। प्रश्न मेघरथ[१] उत्तर घनरथ, पूरव भव विस्तारा ॥ धन्य० ॥४॥ स्वयं बुद्ध हैं तो भी आये, लोकांतिक अधिकारा। मेघरथको राज्य दिया प्रभु, दृढरथ युवराज धारा ॥ धन्य० ॥ ५ ॥ वार्षिकदान देइ लेइ दीक्षा, घाति करम निवारा। आतम लक्ष्मी केवल पायो, वल्लभ हर्ष अपारा ॥ धन्य० ॥ ६ ॥

॥ दोहा ॥

देवरमण उद्यानमें, राजा प्रियासमेत।
इक दिन नाटक देखता, बैठा आनद देत ॥१॥
आयो इस अवसर वहां, एक पुरुष सह नार।
प्रियमित्रा[२] ने पूछियो, दे उत्तर भरतार ॥२॥
विद्याधर विद्याधरी, अमित वाहन भगवान।
दर्शन करी आये यहाँ, भाग्यवान गुणवान ॥३॥

---

१ राजा घनरथ ने कहा इन दोनों मे से किसी एक का भी जय या पराजय न होगा। इस बात को सुनकर मेघरथ ने प्रश्न किया कि, पिताजी ! इसका क्या कारण है ? तब तीन ज्ञान के धर्त्ता राजा घनरथ ने पूर्व भव सम्बन्ध विस्तार से वर्णन किया।

२ एक दिन मेघरथ राजा अपनी प्रियमित्रा राणी सहित

राज्य पुत्रको सौंपके, घनरथ जिनवर पास ।
लेइ दीक्षा खपी कर्मको, पावेंगे शिववास ॥४॥
नमन मेघरथको करी, दोनों गये निज धाम ।
देवरमणसे मेघरथ, आयो अपने ठाम ॥५॥

(लावनी—नेमजी की जान बड़ी भारी)

जगतमें जिनवर जयकारी, धरम जिनवरका सुखकारी ॥ अंचली० ॥ दोष अष्टादशके त्यागी, प्रभु नहीं द्वेषी नहीं रागी । धरम जग उनका फरमाया, सही है सच्चा सुखदाया । वीतराग जिनदेव हैं, नामका नहीं विचार । अरिहंत जिन शिव विष्णु विधाता, राम महेश गोपार । चाहे हों हरि हर गिरधारी, जगतमें जिनवर जयकारी ॥१॥ धरम साधु श्रावक कहिये, सर्वविरति साधु लहिये ।

देवरमण नाम के उद्यान में अशोक वृक्ष के तले बैठा हुआ सुन्दर संगीत-नाटक देख रहा था । इतने में वहां हजारों भूतों ने आकर राजा को खुश करने के लिये बड़ा भारी नाटक करना शुरू किया । उनका नृत्य हो ही रहा था, कि एक विमान आसमान से नीचे उतरकर मेघरथ राजा के पास आया विमान में सुन्दराकृति एक पुरुष स्त्री सहित बैठा हुआ था । इनको देखकर प्रियमित्रा ने अपने पति से पूछा कि हे नाथ ! ये कौन हैं ? और यहां किस कारण आये हैं ? राजा ने उसका खुलासा किया ।

देशविरति श्रावक साधे, निरंतर आतम गुण वाधे। मेघरथ पौषध धारके, बैठो पौषधागार। जिनवर धर्म सुनावत साथी सुनते हर्ष अपार। नमोनित जिनवर अनगारी, जगतमें जिनवर जयकारी ॥२॥ कांपता पारापत[१] आके, गिरा गोदी[२] चकर खाके। बोलता गदगद[३] नरवानी, निशानी शरणागत प्रानी। पीछे ही झट झपट के, आयो पक्षी बाज। कथनी अपनी सबही सुनावन, लागो मेघरथ राज। कबूतर अरज करी जारी, जगतमें जिनवर जयकारी ॥ ३ ॥

(तर्ज— पूजन तो हो रहा है)

कबूतर—

शरणा तो ले लिया है चाहे मारो या उगारो ॥ अंचली० ॥ तुम धर्मके हो धोरी, सुनो अर्ज एक मोरी। न गुनाह कोई किया है, चाहे मारो या उगारो ॥ श० ॥ १ ॥ हो प्राणका भी जाना, आश्रितको बचाना। तुम धर्म कह दिया है, चाहे मारो या उगारो ॥ श० ॥ २ ॥

राजा—

बस धर्म मुझ हिया है चाहे मानो या न मानो

---

१ कबूतर। २ खोले मे। ३ डुसके भरता।

॥ अं० ॥ भय कुछ न कर तूं प्रानी, करनी मैं रक्षा ठानी। जबतक मेरा जिया है, चाहे मानी या न मानी ॥ वस० ॥ ३ ॥

बाज—

मैं भी शरण लिया है, चाहे मानो या न मानो ॥ अं० ॥ राजन् यह भक्ष्य मेरा, देना है धर्म तेरा। दया दान मानिया है, चाहे मानो या न मानो ॥ मैंभी० ॥४॥ दया धर्मी तुम कहाओ, मुझको न क्यों बचाओ। कहना मैं कह दिया है, चाहे मानो या न मानो॥ मैं भी० ॥५॥

राजा—

शिर जावे तो जावे, मेरा दया धरम ना जावे ॥अं०॥ दया बिना कोई धरम नहीं है, धर्मका मूल कहावे ॥ मेरा० ॥ १ ॥ दया के कारण ऋषि मुनि तापस, वन में ध्यान लगावे ॥ मेरा० ॥२॥ शिर जावे तो जावे, मेरा सत्य धरम ना जावे ॥ अं० ॥ सत्यसे धर्म परीक्षा होवे, जग जय सत्य मनावे ॥ मेरा सत्य० ॥३॥ सत्य प्रभावे जगजन सज्जन, सतियोंके गुण गावे ॥ मेरा सत्य० ॥४॥ सिर जावे तो जावे मेरा क्षात्र धरम न जावे ॥ अं० ॥ सच्चा क्षत्री वो है जगमें, शरणागतको बचावे ॥ मेरा क्षात्र० ॥५॥ मैं नहीं

दूंगा शरणे आया, पलो क्यों नहीं आवे ॥मेरा क्षात्र०॥६॥ सच्चा धर्मी उसको कहिये, धर्म लिये मर जावे ॥ मेरा आत्म धरम ना जावे ॥ ७ ॥

(तर्ज—लावणी)

जगत में जिनवर जयकारी, धरम जिनवर का सुख-कारी ॥ अंचली ॥

बाज—

बाज कहे सुन राजन् प्यारे, कहा मेरा क्यों नही धारे। बचाया पारापत जैसे, बचाओ मुझको भी वैसे। मरता हूँ मैं भूख से, दया करी मुझ तार। दे दो भक्ष मेरा मांहे जल्दी, होगा अति उपकार। कहाते तुम उपकारी। जगतमें जिनवर जयकारी ॥४॥

राजा—

शरण आया नहीं मैं देना, यदि तैं मास ही है लेना। कबूतर सम अपना देऊं, शरण वत्सल मैं हो लेऊं। इम कही मगवाई तुला, दीनो कबूतर धार। काट काट निज देहसे दीनो, मान न कीनो विचार। देखियो पापाप भारी। जगतमें जिनवर उपकारी ॥ ५ ॥ अतुल साहस राजा धारी। तुलापर बैठो हुशियारी। देख मय

हाहाकार करते, दुःख दिल अपनेमें धरते। मायावी कोई देव है, पक्षी न इतनो भार। बिन कारण क्यों नाश करत हो, अपने आप विचार। प्रगट हुओ देव चमत्कारी। जगतमें जिनवर जयकारी ॥ ६ ॥

देवता— (तर्ज—इस कल्युग में लाखों गुरु हैं हुये)

इस दुनियांमें लाखों करोड़ों हुये शाह तुमसा तो कोई मगर न हुआ। खुदको रहमकी खातिर किया कुरबां, तुमसा और किसीका जिगर न हुआ ॥इस०॥अं०॥ तेरी इन्द्रने जो सिफ्त की स्वर्गमें, सुनकर मुझसे न बिलकुल सही वो गइ। आया तेरा मैं लेने यहां इमतिहां, मुझसा और कोई बेकदर न हुआ ॥ इस० ॥ १ ॥ लाया जोर था जितना मेरेमें सभी, कार आमद न हुआ जरा भी यहां। तुमने धार लिया करना परका भला, इसलिये तुमपै कुछ भी असर न हुआ ॥ इस० ॥ २ ॥

॥ दोहा ॥

धन्य धन्य तुम धन्य हैं, धन्य मात अरु तात।
धन्य जन्म तुम सफल है, धन्य धन्य दिनरात ॥१॥

(तर्ज—लावणी—जगत में जिनवर जयकारी)

स्तुति करता नमता राजा, गया कर देव स्वर्ग

साजा। पूछिया१ कारण परिवारा, कहा पूरव भव विस्तारा। पारापत और बाज दो, सुन पूरव भव आप। नमन करत आतम धन्य मानत करता मनमें ताप। करी अनशन सुरपर धारी। जगतमें जिनवर० ॥१॥

॥ दोहा ॥

बाज कबूतर जीवका, याद करी वृत्तांत।
प्रशम बीज वैराग्यको, पायो अवनीकांत ॥१॥
अष्टम तप उपसर्गको, सहन परीषह हेत।
धीर वीर सम मेरुके, कायोत्सर्ग समेत ॥२॥

---

१ जब देवता—"पूर्व भव के वैर से युद्ध मे तत्पर इन दोनों पक्षियों को देख इनके शरीर मे अधिष्ठाता होकर परीक्षा लेने के निमित्त हे सत्पुरुष! मने जो कुछ आपको कष्ट दिया मेरे उस अपराध को क्षमा कर" इत्यादि कहता हुआ राजा को राजी करके स्तुति करता हुआ चला गया, तब चकित होकर सामंतादि परिवार ने राजा मेघरथ को पूछा—हे स्वामिन्! ये बाज और कबूतर पूर्व जन्म में कौन थे? इनका पारस्परिक वैर किस निमित्त से हुआ? और यह देवता पूर्व भव मे कौन था? इसने बिना ही किसी अपराध के इतनी माया फैलाकर आपको प्राणांत कष्ट मे क्यों डाला? इसके जवाब मे राजाने पूर्व वृतांत सुनाया।

खडे समाधि ध्यानमें, देख इन्द्र ईशान।
मन वच काया शुद्धिसे, नमन करत भगवान ॥३॥
नमन किया किसको विभो, खुद ही तुम हो नाथ।
इन्द्र कहे नृप मेघरथ, नाथ अनाथ सनाथ ॥४॥
भावी जिन हैं ध्यानमें, नमन कियो कर जोड।
ध्यान चलाया ना चले, इन्द्र सुरासुर कोड ॥५॥

(लावणी-माराठी-ऋषभजिनंद विमलगिरिमंडन)

चित्तसमाधि आधि व्याधि टारे सब संसारारे, ध्यान समाधि दृढ़कर धारे धन्य जग वो नर नारारे ॥ अं० ॥ ईशान इन्द्र करी महिमाको सुन इन्द्राणी उचारारे, आवेंगी हम उसको चलाकर क्या मानव इतबारारे ॥ चि० ॥१॥ इम कहती आई भूमिपर ला रहीं जोर अपारारे, अंत हार गई क्षमा याचतीं राजा पौषध पारारे ॥चि०॥२॥ आये विचरते घनरथ अर्हन् वंदत नृप परिवारारे, सुनी उपदेश हुओ वैरागी प्रभु चरणी चित धारारे ॥चि०॥३॥ मेघरथ दृढ़रथ दोनों भाई नृप सह चार हजारारे, सातसौ पुत्र साथमें संयम लीना आत्म उदारारे ॥ चि० ॥ ४ ॥ सहन करत उपसर्ग परीषह समिति गुप्ति भंडारारे, विविध अभिग्रह तप एकादश अंग ज्ञान अवधारारे ॥ चि० ॥५॥

वीस थानक सेवी मेघरथने तीर्थंकर पद सारारे। निकाचितपने प्राप्त किया शुभ आनद मगलकारारे ॥ चि० ॥६॥ सरवारथ सिद्ध उपने दोनों मुनि अनशन निरधारारे। आतम लक्ष्मी हर्ष अनुपम वल्लभ जय जयकारारे ॥ चि० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

भरत क्षेत्र कुरु देशमें, गजपुर नगर सुठाम।
विश्वसेन नृप घर सती, अचिरा राणी नाम ॥१॥
एक दिवस पुण्य योगसे, राणी आधी रात।
सुखशय्यामे देखती, चउद सुपन महा जात ॥२॥
भादरवा वदि सातमे, शशि भरणीके योग।
सरवारथ सिद्धसे च्यवी, आयु पूरण भोग ॥३॥
जीव मेघरथ जानिये, अचिरा उदरे आय।
पुत्रपने पैदा हुआ, पूरण पुण्य पसाय ॥४॥
जागी अचिरा सुपनको, याद करी क्रमवार।
राजा पासे जायके, सुन्दर वचन उचार ॥५॥

(तर्ज—आशावरी ऋषभ प्रभु भवजउ पार उतार)

सुपन फल कहिये नाथ विचार—सुपन० ॥ अंचली ॥
आधि व्याधि शोच फिकर नहीं, नहीं है तनमें विकार।

सुखशय्या आनंदसे देखे, सुपने दस और चार ॥सुपन०॥१॥ गज१ वृष२ केसरी३ लक्ष्मी४ देवी, फूलमाला५ श्रीकार। चंद्र६ सूर्य७ ध्वज८ कुंभ९ पद्मसर१०, रत्नाकर११ जलधार ॥ सु० ॥ २ ॥ देवविमान१२ रतनकी राशि१३ निर्धूम अग्नि१४ झार। इन सुपनोंका क्या फल होगा, कहिये मुझ भरतार ॥ सु० ॥ ३ ॥ सुन हर्षित नृप कहे सुन देवी, सुपन अति मनोहार। सुत होगा तुझ तेज प्रतापी, तीर्थंकर सुखकार। सुनो सुनो सुपने मंगलकार, सुपने मंगलकार ॥ सु० ॥ ४ ॥ अथवा होगा छै खंड स्वामी, चक्री रतन चउद धार। अचिरा बोली एवं भवतु, नाथ वचन सतकार ॥ सु० ॥ ५ ॥ आतम लक्ष्मी हर्ष मनाती, पति आज्ञा अनुसार। अपने शयनागारमें पहुँची, वल्लभ हर्ष अपार ॥ सु० ॥ ६ ॥

॥ काव्यम् ॥

गर्भस्थोऽपि च संस्तुतो हरिगणैर्जातस्तु हेमाचले,
सद्भक्त्या सुरनायकैः शुचितरैः कुम्भाम्बुभिः स्नापितः।
दीक्षाकेवलबोधपर्वणि महानन्दाप्तिकाले सुरः सद्बोधाप्ति-
कृतेऽर्चितो जिनवरः श्री शांतिनाथोऽवतात् ॥१॥

ॐ ह्रीं श्रीं परमात्मने अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जन्म-जरामृत्युनिवारणाय श्रीपरमेष्ठिने जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥ १ ॥

॥ द्वितीय जन्मकल्याणकपूजा ॥

॥ दोहा ॥

देव गुरु और धर्मकी, बातचीत परधान ।
जागरणा रात्रि करी, पालन सुपन निदान ॥१॥
प्रातःकाल बुलायके, नैमित्तिक समुदाय ।
विश्वसेन फल पूछिया, राणी सुपन सुनाय ॥२॥
नैमित्तिक कहे नरपति, सुनो हमारी बात ।
चउद सुपन हैं देखती, जिन चक्रीकी मात ॥३॥
इस कारण सुत होयगा, तीर्थंकर महाराज ।
अथवा चक्री होयगा, राजवंश शिरताज ॥४॥
दान मान सनमानसे पंडित किये विदाय ।
राणी अपने गर्भकी रक्षामें चित्त लाय ॥५॥

(तर्ज ठुमरी—जाओ जाओ नेमि पिया)

धन्य जिनराज जनपद[१] शांति दातारे ॥ धन्य० ॥

अचली ॥ गर्भे प्रभु आये जब, रोग कुरुदेश तब । नाना

---

१ जनपद देश ।

जात पात दुख नर नारी व्रातारे१ ॥ धन्य० ॥१॥ विविध ऊपाय कीने, पुण्य किये दान दीने। हुई नहीं तो भी भाग्यवश सातारे ॥ धन्य० ॥२॥ गर्भ प्रभाव जानो, पुण्य भी प्रबल मानो। एकदस सारा जनपद शांति पातारे ॥ धन्य० ॥ ३ ॥ प्रभु परताप मानी, अवधि नहीं ज्ञानी जानी। पावे नहीं पार गणपति गुण गातारे ॥धन्य०॥४॥ आत्मलक्ष्मी स्वामी थावे, अनुपम हर्ष पावे। वल्लभ परमपद मुक्तिसुख रातारे ॥ धन्य० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

आवे जिन जब गर्भमें, कंपे आसन इन्द।
अवधि ज्ञानसे देखके, नमन करे जिनचंद ॥१॥
आते भक्ति भावसे, नमन करत जिन मात।
ज्ञापन करते स्वप्नफल, तीर्थंकर तुम जात ॥२॥
इम कही उत्सव कारणे, नंदीश्वरमें जाय।
आठ दिवस पूजा रचे, शाश्वत श्रीजिनराय ॥३॥
सुर सुरपति निज थानमें, जावे हर्ष मनाय।
राजा भी निज शक्तिसे, नव नव ठाठ बनाय ॥४॥
माता गर्भ प्रभावसे, दिन दिन तेज लहंत।
धन्य जाति कुल धन्य है, अवतरिया अरिहंत ॥५॥

---

१ व्रात समूह।

(तर्ज सोहनी ढूढ फिरा जगसारा)

जनमत जिन सुखकारा, सुखकारा भविजन कीजे अर्चना ॥ अं० ॥ गर्भसमय पूरण जब होवे, शुभ ग्रह शुभदृष्टि से जोवे। ऊंचपना लिये धारा, सुखकारा भविजन कीजे अर्चना ॥ जनमत० ॥ १ ॥ जेठ वदि तेरस सुखकारी, भरणी साथ निशाकर१ धारी। जनमे जिन जयकारा, सुखकारा भविजन कीजे अर्चना ॥ जनमत० ॥ २ ॥ मात पुत्र दुःख दोनों न पावे, तीर्थंकर स्वभाव प्रभावे। त्रिभुवन होवे उजारा, सुखकारा भविजन कीजे अर्चना ॥जनमत०॥ ॥ ३ ॥ नारक भी उस क्षण सुखी थावे, आनंद मगल लोक मनावे। शुभमें शुभ अधिकारा, सुखकारा भविजन, कीजे अर्चना ॥ जनमत० ॥ ४ ॥ मृग लंछन कांचन छवि प्यारी, आतम लक्ष्मी जाउं बलिहारी। वल्लभ हर्ष अपारा, सुखकारा भविजन कीजे अर्चना ॥ जनमत० ॥५॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

श्रीमदर्हते जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥ २ ॥

---

१ चंद्र।

॥ तृतीय दीक्षाकल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अवधि ज्ञानसे जानके, जन्म जिनेश्वरराय ।
रीति अनादि अनुसरी, दिशाकुमारी आय ॥१॥
उरध अधो चारो दिशा, आठ रुचक परमान ।
चउचउविदिशामध्यकी, षट पंचाशत५६ जान ॥२॥
करके निज निज कार्यको, क्रमसे सह परिवार ।
जिन जिनजननीको नमी, करती जय जयकार ॥३॥
आसन कंपे इन्द्रका, अवधिज्ञान विचार ।
जिन जन्मोत्सव कारणे, आवे जन्मागार ॥४॥
मात नमी प्रभुको ग्रही, गयो सुमेरु आप ।
इन्द्र सभी हाजर हुये, जिनवर पुण्य प्रताप ॥५॥

(तर्ज ठूमरी— लागी लगन कहो कैसे छूटे०)

प्रभु पूजन सुखकारा भविजन, भवजल पार उतारारे । प्रभु० ॥ अंचली ॥ चउसठ सुरपति सुरगिरि ऊपर, करे अभिषेक उदारारे । इक अभिषेके कलश अड जाति, जानो चउसठ हजाररे ॥ प्र० ॥ १ ॥ चंदन पुष्प आदि सब विधिसे, पूजन नाना प्रकारारे । आरात्रिक कर प्रभुके आगे, स्तोत्र पवित्र उचारारे ॥ प्र० ॥ २ ॥ इम पूरण कर जन्म

महोत्सव, अपना आप सुधारारे। लाकर प्रभुको जननी पासे, धार किया नमोकारारे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ रत्न स्वर्ण महावृष्टि कीनी, गजपुर नगर मझारारे। कर्त्तव्य अपना करके मघवा[1] आठमे[2] द्वीप सधारारे ॥ प्र० ॥४॥ सुर सुरपति सब मिल नदीश्वर, किया उत्सव अधिकारारे। आतम लक्ष्मी प्रभु पूजन कर, वल्लभ हर्ष अपारारे॥ प्र० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

सुर पूजित निज पुत्रको, देखी अचिरा मात।
रोम रोम हर्षित भई, धन्य धन्य मुझ जात ॥१॥
विदित किया परिवारने, विश्वसेन महाराय।
दान देइ उत्सव किया, पुत्र जन्म हर्षाय ॥२।
रोग शांत किया गर्भमें, इस कारण शुभ नाम।
तात दियो शांति प्रभु, शांति शांतिको धाम ॥३॥
तीन ज्ञान धारी प्रभु, योवन वय जब पाय।
मात पिता तब हर्षसे, पाणिग्रहण कराय ॥४॥
विश्वसेन देइ पुत्रको, राज काज लियो साध।
शांतिनाथके राज्यमें, नाम नहीं अपराध ॥५॥

---

१ इन्द्र, २ नदीश्वर।

(तर्ज—अवतो पार भये हम साधो)

दीक्षा उत्सव करे सुखकारी, सुर सुरपति मिल चार प्रकारी ॥ दी० ॥ अंचली ॥ सरवारथ सिद्ध से चवी आयो, दृढरथ जीव हुओ अवतारी । शांति प्रभु सुत नाम दियो शुभ, चक्रायुध निज सम अधिकारी ॥ दी०॥१॥ क्रमसे षट खंड साधी प्रभुने, चक्री पद लीनो अव धारी । अवधिज्ञान से समय को जानी, कीनी संयम लेन तैयारी ॥ दी०॥२॥ लोकांतिक आ अरज गुजारें, अपनी अनादि रीति विचारी । नाथ तीरथ वरताओ जगमें, होवे जिन शासन जयकारी ॥ दी० ॥ ३ ॥ वरसी दान देइ प्रभु दीनो, चक्रायुध को राज्य आचारी । चक्रायुध सुरपति मिल कीनो, दीक्षा उत्सव आनंद भारी ॥ दी० ॥ ४ ॥ जेठ वदि चौदस भरणी शशी, छठ तप कीनो सिद्ध नमोकारी । शांति प्रभु दीक्षा कल्याणक, साथ हुए नृप एक हजारी ॥ दी० ॥ ५ ॥ नंदीश्वर जा उत्सव कीनो, दीक्षा कल्याणक मनोहारी । आतम लक्ष्मी प्रभु पूजन से, होवे वल्लभ हर्ष अपारी ॥ दी० ॥ ६ ॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

ओंशान्तिजिननाथाय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥३॥

॥ चतुर्थ केवलज्ञानकल्याणकपूजा ॥

॥ दोहा ॥

शांति प्रभु संयम लियो, शुद्ध हुए अनगार।
मनपर्यव तब ऊपनो, ज्ञान अनादि चार ॥१॥
मंदिरपुर परमान्नसे, पारणा प्रभु अवधार।
पांच दिव्य सुरवर किये, सुमित्र नृप आगार ॥२॥
अनासीन निर्मम प्रभु, मूलोत्तर गुण धार।
शयन रहित निःसंग हो, करते उग्र विहार ॥३॥
समिति गुप्ति धारी प्रभु, निश्चल मेरु समान।
धर्म ध्यान तत्पर विभु, सहसाम्र उद्यान ॥४॥
गजपुर नगर पधारिया, शांतिनाथ भगवंत।
ग्राम नगरमें विचरते, बार मासके अंत ॥५॥

(तर्ज—थइ प्रेमवश पातलिया)

प्रभु ध्यानकी बलिहारी, भवसागर पार उतारीरे ॥अचली॥ नंदिवृक्षतले प्रभु छठकी, तपसा ध्यान लगायो। सप्तमसे अष्टमसे आयो, सित[१] ध्यान प्रथम पद धारीरे ॥ १ ॥ नवमे लोभ कषायको सूक्षम, करके दशमे आवे।

१ शुक्ल।

सूक्ष्म संपराय कहावे, क्षय मोह करण अधिकारीरे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ मोहके क्षय होने से पहुँचे, क्षीणमोह गुणठाने । तस अंतसमय शुक्ल ध्याने, पद दूसरे होय विहारीरे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ मंत्र प्रभावे जिम विष अहिका, देहसे दंशमें आवे । इस ध्यानसे तिम मन थावे, अणु-मात्र विषय अवधारीरे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ अग्नि जिम अन्य काष्ट अभावे, आप शांत हो जावे । तिम विषयांतर के अभावे, स्वयमेव शांत मन धारीरे ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ ध्याना-ग्निसे घाति करमका, नाश प्रभुने कीना । उज्वल केवल धरलीना, धन्य शांतिनाथ जयकारी रे ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥ पोष सुदि नवमी भरणी शशी, शांति शांतिके धामी । आतम लक्ष्मी पद पामी, वल्लभ मन हर्ष अपारी रे ॥ प्रभु० ॥ ७ ॥

[जिनसे ऊपर की तर्ज (चाल) न गाई जावे उनके लिये और खास करके पंजाबियों के लिये यही ढाल कव्वाली में रखी है । दोनों में से जिनकी जो मर्जी होवे गा सकते हैं, क्योंकि मतलब दोनों का एक ही है । हाँ यदि अधिक उत्साह होवे और दोनों ही गाना चाहें तो वड़ी खुशी से गा सकते हैं ।]

॥ कव्वाली ॥

प्रभु श्रीशांति जिन तुमने, लगाई ध्यानकी धारा। होवे धारा वही जिसको, वही हो जावे भव पारा॥ अंचली॥ तरु नंदितले छठकी तपस्या ध्यानमें लीना। क्षपक श्रेणी लगे चढने सातसे आठ पगधारा॥ प्रभु०॥१॥ प्रथम पद ध्यान चौथेका, जोर जस स्थान नवमेमें। लोभ को सूक्ष्मतरकरके, दशम गुणस्थान स्वीकारा॥ प्रभु०॥२॥ बारमे स्थान जा पहुँचे, करी क्षय मोहको जडसे। क्षणे अन्तिम द्वादशके, दूसरा पाय उजियारा॥ प्रभु०॥३॥ जहर ज्यूं मत्रसे अहिका१ डकमें देहसे आवे। ध्यानसे त्यूं विषय अणुमें, होतहै मनका सचारा॥ प्रभु०॥४॥ अभावे अन्य काष्ठोंके, अनल२ ज्यूं शांत हो जाता। स्वयं मन शांत त्यूं होता, विषयसे होत जब न्यारा॥ प्रभु०॥५॥ अनल शुभ ध्यानसे घाति, करमको भस्म करदीना। हुओ प्रभु ज्ञान केवल है, लिया निजरूपको धारा॥ प्रभु०॥६॥ तिथि सुदि पोषकी नवमी, निशाकर३ वास भरणीमें। आत्म लक्ष्मी प्रभु पाये, वल्लभ मन हर्ष नही पारा॥ प्रभु०॥७॥

---

१ अहि-सर्प। २ अनल—अग्नि। ३ निशाकर—चंद्र

तीन दिशा प्रतिरूपको* थापे व्यंतर देव ।
भामंडल पीछे रचे, चक्र× ध्वजा पुर एव ॥३॥
मुनि१ सुरनारी२ साधवी३ अग्नि१ कूण अवधार ।
ज्योति१ भवन२ व्यंतर३ सुरी, नैरित२ कूण विचार॥४॥
ज्योति१ भवन२ व्यंतर३ सुरा, वायव३ कूण मझार ।
सुर१ नर२ नारी३ कूणमें, ईशाने४ श्रीकार ॥५॥

(मालकोश-त्रिताल)

प्रभु शांतिनाथ उपदेश देत, सुने भव्य जीव भव तरण हेत ॥ प्रभु० ॥ अंचली ॥ दुर्लभ भव मानवको पायो, धर्म करे तो हो सुखदायो । शुद्ध करी निज आत्म खेत । प्रभु० ॥ १ ॥ क्रोध मान मायाको विसारे, लोभ कषाय को दूर निवारे । इन्द्रिय जय मन धार लेत ॥ प्रभु०॥२॥ इन्द्रिय जय विन निष्फल जानो, काय क्लेश यम नियम बखानो । राग द्वेष तज देत चेत । प्रभु० ॥ ३ ॥ चक्रायुध सुनी प्रभु मुख वानी, राज्य देइ सुत हुओ मुनि ज्ञानी ।

---

*—प्रभु समवसरणमें पूर्वाभिमुख विराजते हैं, अन्य तीन दिशा में व्यंतर देवता प्रभु के प्रतिबिंब स्थापन करते हैं, प्रभु के प्रभाव से वे भी प्रभु के समान ही दीखते हैं ।

×—धर्मचक्र और इन्द्र ध्वज प्रभु के आगे ही होते हैं ।

दीक्षा पैंतीस नृप समेत ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ आतम लक्ष्मी प्रभु गण ईशा, चक्रायुध आदि छै तीसा। वल्लभ हर्ष है शिवसकेत ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

लाख वरस जिन आयुके, व्रत मंडलिक कुमार।
चक्रवर्त्ति मिल चारके, प्रति पणवीस१ हजार ॥१॥
एक वर्ष छद्मस्थका, शेष केवली धार।
भूमडलमें विचरते, हुआ प्रभु परिवार ॥२॥
साधु बासठ२ सहस हैं, साधवी कम३ शत चार।
श्रावक दो लख ऊपरे, जानो नवति४ हजार ॥३॥
सहस तिरानवे५ श्राविका, तीन लाख सह जान।
चार कल्याणक गजपुरि, समेतशिखर निरवान ॥४॥
अन्त समय जानी प्रभु, आये शिखर गिरींद।
नवसौ साधु सगमे अनशन कियो जिनन्द ॥५॥

(तर्ज—न छेरो गारी दूंगीरे भरने दो मोहे नीर)

शांति प्रभु अनशन कीनोरे वलिहारी धीर वीर।
शांति० ॥ अंचली ॥ अनशन कीनो प्रभु जानी, सुर सुरपति

१—२५०००, २ ६२०००, ३—६१६००, ४—२९००००,
५—३९३०००।

अवधि ज्ञानी। आये निज कारज मानी रे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥ १ ॥ मासांते जेठ की काली, तेरस भरणी शशी भाली। मन वाक योग कियो खाली रे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥ २ ॥ शुक्लध्यान तीसरा जानो, चौथे शेलेशी मानो। लघु अक्षर पांच प्रमानो रे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥ ३ ॥ अवशिष्ट कर्म क्षय कीना, पद मोक्ष निजातम लीना। हुआ जनम मरण भय खीनारे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥४॥ आतम लक्ष्मी प्रभु धारी, दियो आवागमन निवारी। कल्याणक उत्सव भारीरे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥५॥ निर्वाणोत्सव सुर करके, पूजन शाश्वत जिनवर के। गये नंदीश्वर चित धरकेरे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥६॥ करके उत्सव सुर जावे, आतम लक्ष्मी फल पावे। वल्लभ मन में हर्षावेरे। बलिहारी धीर वीर ॥ शांति० ॥७॥

॥ काव्यम् मंत्रश्च पूर्ववत् ॥

श्रीशान्तिजिनपारंगताय जलादिकं यजामहे स्वाहा ॥५॥

॥ कलश ॥

(धन्याश्री)

पूजन शिवतरु कंदी, श्रीशांति जिन पूजन शिवतरु

कदी ॥ अंचली ॥ शान्ति जिनेश्वर जग-परमेश्वर, जग शान्ति हुलमदी ॥ श्रीशांति० ॥१॥ च्यवन१ जन्म२ दीक्षा३ अरु केवल४ , मोक्ष५ परम सुख नंदी ॥ श्रीशांति० ॥२॥ तीर्थंकरके पाँच कल्याणक,उत्सव करे सुर वन्दी ॥श्रीशांति० ॥३॥ तिम श्रावक उत्सव करे भावे, समकित सार गहंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥ ४ ॥ तपगच्छगगनमें दिनमणि× सरीखा, सूरि श्रीविजयानदी ॥ श्रीशांति० ॥५॥ प्रथम शिष्य श्री लक्ष्मी विजयजी, कुमति कुपंथ निकदी ॥ श्रीशान्ति०॥६॥ तस शिष्य मुनि श्री हर्ष विजयजी, मुनिजन हर्ष अमंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥७॥ तस लघु किंकर मदमति अति, वल्लभ-विजय कहदी । श्रीशान्ति० ॥८॥ शक्ति नहीं पिण भक्तिके वस, जिन गुण कथन करदी ॥ श्रीशान्ति ॥९॥ सवत˜ शशी१ शर५ वेद४ युगल२ है, प्रभु श्रीवीर जिनंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥१०॥ आतम निधि९ का१२ शशी१ वसु८ ज्ञाता१९*, विक्रम सालसुहदी ॥ श्रीशान्ति० ॥ ११ ॥ कार्त्तिक सुदि एकादशी जगमे, देव प्रबोध कहदी ॥

× दिनमणि—सूर्य । ˜ वीरसवत् २४५१, आत्म संवत् २९, विक्रम सवत् १९८१ । * ज्ञाता-ज्ञाताधर्मकथा अध्ययन १९ ।

श्रीशान्ति० ॥१२॥ शुक्रवार सिद्धयोग कहावे, रचना पूरण हुंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥ १३ ॥ लाभपूर लाहोर नगरमें, चौमासा आनंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥१४॥ कुंवर मास्तर धोराजी वासी, विनती सफल लहंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥१५॥ आतम लक्ष्मी हर्ष अनुपम, वल्लभ मन विकसंदी ॥ श्रीशान्ति० ॥ १६ ॥ भूल चूक मिच्छामि दुक्कड, सनमुख शान्ति जिनंदो ॥ श्रीशान्ति० ॥ १७ ॥

जैनाचार्य श्रीमद्‌जिनकृपाचन्द्रसूरि विरचित

॥ श्रीगिरनार तीर्थ पूजा ॥

॥ दोहा ॥

स्वस्ति श्री मंगलकरण, श्रमणपास जिनंद ।
प्रणमी पदपंकज सदा, प्रभुना धरि आनंद ॥१॥
तीरथ जगमांहि घणा, तेहमां अठे विशेष ।
शेत्रुञ्ज रेवतगिरि वरु, वर्णन करू हमेश ॥२॥

॥ दोहा सोरठा ॥

सोरठ देश सोहामणो, सहुदेशा सिरदार तेमांहिं तीरथ प्रगट, श्रीगिरिवर गिरनार ॥ ३ ॥ कल्याणक जिहां त्रण थया, दीक्षाज्ञान निर्वाण । नेमिजिणंद वखाणिये, यादव कुल नभ भाण ॥ ४ ॥ पूजा रचूं गिरिराजनी, मनमां धरि अति खंत । पूजानी विधिमेलवी, भाव अधिक उलसंत ॥ ५ ॥

॥ ढाल ॥

(तर्ज – पूर्वपुण्य सावनं करिदर्शन पावनम्)

पूर्वमनी शुचिथई शुद्ध अनुमन लई, करधरि कलश शुचिजल उदारम् हारे अइओ शुचि जलउदार ॥ १ ॥

पहिर खीरोदकं बांधि मुहकोशकं, धूपवाशित सदोत्तरीय सारं ॥ हांरे अ० स० ॥ २ ॥ गंगासिंध्वादिना खीर-सागरतणा, तीर्थजल औषधी मिश्रकीजे ॥ हां० अ० मि० ॥ ३ ॥ आठ जातीतणा। कलश भरी सुरगणा स्नात्र प्रभुनी रचे सुर गिरीन्दे ॥ हांरे० अ० सु० ॥ ४ ॥ इम भविभावकरि शुद्ध समकित धरि जिनतणी पूजा करो चित्त धारी ॥ हांरे अ० चि० ॥५॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीपरमात्मने अनंतानंत ज्ञान शक्तये गिरिनारगिरो श्रीनेमि-जिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा ॥

॥ द्वितीय केसर चंदन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

नेमिजिणंद दिणंदसम, शिवसुख तरुनोकंद ।
रेवतगिरिवर मंडणो, पूजनकरो अखंड ॥१॥
घसकेशर मृगमदवलि, बावनचन्दन संग ।
अम्बर घनसार मेलवी, करो विलेपन अंग ॥२॥

॥ रागनी भैरवी ॥

विलेपन करिये, प्रभुजीके अंग ॥ वि० ॥ जिनवरको तनु फरसन सेती, पामेजिन गुण संग ॥ वि० ॥१॥ पारस-

फरसत लोहा कंचन, तिम होवे कीटक भृङ्ग ॥ वि० ॥२॥ शिवादेवी अगज हो प्रभु, श्यामवरण द्युति चग ॥ वि० ॥ ३ ॥ चरण युगल कच्छपसम प्रभुना, कर पकज जल सग ॥ वि० ॥ ४ ॥ वदनचन्द्र अकलकित कीनो, भाल अर्ध शशि अग ॥ वि० ॥ ५ ॥ निलोत्पलसम नेत्रयुगल फुनि, कामराग थयो भंग ॥ वि० ॥ ६ ॥ केशरचन्दन मृगमद अम्बर, प्रभुपूजो मनरंग ॥ वि० ॥ ७ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीपर०…… केशरं चन्दन यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तृतीय पूजा जिनवरतणी, करे भविक उजमाल ।
फूल सुगधी लेइने, चाढे भरि भरि थाल ॥
समवशरणमां सुरकरे, पुष्पवृष्टिधरिभक्ति ।
तिमश्रावक शुभ भावथी, पूजा करे यथाशक्ति ॥

॥ रागनी वृन्दावनी सारंग ॥

प्रभु अरचा रचो मिल भविजना । नाना-विधना फूल सुगधी, लेई तुम थावो इकमना ॥ प्रभु० ॥ १ ॥

त्रिकरण योगकरी प्रभुपूजो, चितधरी शुभ भावना ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ च्यारनिक्षेपे जिनवर जाणी, मनमन्दिर में लावना ॥प्रभु०॥३॥ अनुयोगद्धार आवश्यकसूत्रे, वेदनिक्षेप सुहावना ॥ प्रभु० ॥४॥ ठवणा समवसरण तिहुं दिशिमां, प्राची भाव कहावना ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ द्रव्येजिनवर श्रेणिक पमुहा, नाम ऋषभादि सुहावना ॥ प्रभु० ॥६॥ इमविधि प्रभुकी भक्ति करीये, शमरस अमृत श्रावना ॥ प्रभु० ॥७॥ कृपा करिने साहिब मुझने, कीजे कृतार्थ पावना ॥ प्रभु० ॥ ॥ ८ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०……पुष्पं यजामहे स्वाहा ॥

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

यादव कुलनो चन्दलो, ब्रह्मचारी शिरमोड ॥
बावीसमा जिनवरतणी, पूजा करो कर जोड ॥१॥

॥ सोरठा ॥

अगर चन्दन घनसार, सेल्हारस मांहि मेलिये ।
मृगमद अम्बर सार, धूपघटा करिपूजिये ॥ २ ॥

॥ रागनी सोरठ ॥

सेवोभविने जिणंद सुखकारा, करि धूप धूम मनुहारा ।

सेवोभवि० ॥ गिरिनार गिरि मंडण दुख खंडण, भविजन कीधसुधारा। कर्म अनल दलदाह करनमिस, धूप दहो सुविचारा ॥ सेवोभवि० ॥ १ ॥ सौरी पुरमें जन्म प्रभुनो, समुद्र विजय कुल भाणा। शिवादेवी उदर शुक्ति मुक्ताफल, चित्रानक्षत्र वखाना ॥ सेवोभवि० ॥२॥ च्यवन जन्म कल्याणक प्रभुना, सौरीपुरमे जाना। गिरनार गिरि पर सहसा वनमें, दीक्षाग्रही सुख खाना ॥ सेवोभवि० ॥३॥ चौसठ इन्द्र करे उछरगे, जिन सेवा मनुहारा। कृपा चन्द्र ए प्रभुने जानो, निश्रेयस दातारा ॥ सेवोभवि०॥४॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०······धूपं यजामहे स्वाहा ॥

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पांचमी पूजा दीपनी, प्रकटे ज्ञान उद्योत।
करो भक्ति जगनाथनी, मन वांछित सुखहोत ॥१॥
शिवादेवीनो लाडलो, अतुल बली वडवीर।
श्यामसलुणो नाहलो, नेमिनाथ सुखसीर ॥२॥

॥ रागनी कल्याण ॥

अहो प्रभु पूजा रचो चित चगे ॥ अहो० ॥ रेवत गिरि पर नेमि जिनेश्वर, केवल लह्यो सुखसगे ॥ अहो प्रभु०

॥ १ ॥ च्यार निकायके सुरसुरी मिलके, त्रिगडो रचे अतिरंगे ॥ अहो प्रभु० ॥ २ ॥ समवसरणमें राजे प्रभुजी, देशना दे भवभंगे ॥ अहो० ॥३॥ साधु साधवी वैमानिक देवी, अग्निकूण उमंगे ॥ अहो० ॥४॥ ज्योतिषि भवनपति व्यन्तर सुरी, रहे नैरित जिन संगे ॥ अहो० ॥ ५ ॥ वायव विदिशे एहिज देवो, जिनवाणी सुणे रंगे ॥ अहो० ॥ ६ ॥ वैमानिक सुर मानव-स्त्रीजन, ईशान दिशिमें संगे ॥ अहो० ॥ ७ ॥ बारपर्षदा जिनवाणीसुण, मगन हुवे मन रंगे ॥ अहो० ॥ ८ ॥ गोघृत भरि मणिपात्र अनूपम, दीपक करो मन चंगे ॥ अहो० ॥ ९ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०……दीपकं यजामहे स्वाहा ॥

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अक्षत अक्षत लेईने, स्वास्तिक रचो विशाल ।
ज्ञानादिक त्रण पुञ्ज थी, पामो मंगल माल ॥१॥
राजीमतीको छोड़के, नेमि चढ़्या गिरनार ।
रथनेमि राजीमती, लीधो संयमभार ॥२॥

॥ रागनी माड ॥

नेमिजिन पुजो तो सही, प्रभु रैवतगिरि सिणगार ।

नेमि जिन० ॥ आंकणी ॥ उत्तमशालि प्रमुख बहुअशन, चाढो तो सही। अक्षयसुख कारण जगतारण, जिनवर शरता ग्रही ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ आधेय थी आधार अनोपम, जगमें सोभ लही। श्रीगिरनार नेमि फरशनते, कीर्ति-व्याप रही ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भरत नरेश्वर संघ लेई ने, शेत्रुंजे यात्रा लही। चैत्य निर्माण पण नवीन करीने, रेवत मार्ग ग्रही ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ स्वर्णगिरि पर नेमि जिणंदना, मणि कनकादि मयी। देरासर नवीन रचीने, नेमिनी पडिमा ठही ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ क्रोड देवसे ब्रह्मेन्द्र आयो, भरतनो सुजस कही। पहिलो उद्धार प्रथम चक्रिनो, एम अनेक लही ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ गिरिवर मंडण नेमि जिनेश्वर, मेटो भाव लही। सिद्धि सौध चढवा मनरंगे, सोपानपङ्क्ति कही ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीपर० अक्षतं यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सातमी पूजा साचवे, श्रावक शुचि शुभभावे।
भांत भात नैवेद्यना, थाल भरि भरि लावे ॥१॥

नेम नगीना नाथने, आगल धरो मन रंग।
अक्षय सुख वरवा भणी, पूजा करो चितचंग ॥२॥

(तर्ज—लहर सारंग - रामत रमवा में गई थी)

नेमि जिनेश्वर पूजीये, एतो रेवतगिरिनो रायो हे माय ॥नेमि०॥ समवशरणमें वेसिने, एतो वचनामृत वरसायो हे माय। भव्य हृदय भूसींचाने, एतो वोध बीज निपजायो हे माय ॥ नेमि० ॥ १ ॥ मेघध्वनि जिम गाजता, एतो संघ चतुरविध ठायो हे माय। देश विदेशमां विचरतो, शिव-मारग दरसायो हे माय ॥ नेमि० ॥ २ ॥ सेत्रुंजे गिरिवर फरशने, एतो गिरनार नाथ कहायो हे माय। अढार सहस वाचंयमी, एतो वरदत्तादि गणरायो हे माय ॥ नेमि० ॥ ३ ॥ चालीस सहस्त्र श्रमणी भली, एतो यक्षणी प्रमुख सुहायो हे माय। एक लाख गुणोत्तर सहस, एतो श्रावकनो समुदायो हे माय ॥ नेमि० ॥४॥ त्रण लक्ष अढार सहस वली, एतो सुजश श्राविका पायो हे माय। भोज्यपदारथ थी प्रभु पूजी, एतो अनाहार नाम कहायो हे माय ॥ नेमि० ॥ ५ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०……नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ॥

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

परम पुरुष परमातमा, परमानन्द प्रधान ।
परमेश्वर प्रभु पूजिये, परम विज्ञान निधान ॥१॥
अष्टमी पूजा जिन तणी, अष्टमी गतिदातार ।
फल पूजा करो भावसुं, जिम लहो सुख अपार ॥२॥

॥ रागणी काफी त्रिताल ॥

उज्जयंत गिरिगुण गावो, तुमें मणिमाणिकसे वधावो ॥ उज्जयंत० ॥ नेमि जिनेसर जगअलवेसर, मन मंदिरमां लावो । जिनवर चरणनो शरण ग्रहीने, समरणमां लयलावो ॥ मणिमा० ॥ १ ॥ तीर्थपति बावीसमा स्वामी, नेमि निरंजन ध्यावो । भविक जीव सुखकारण तारण, जिनदरशन मन भावो ॥ मणि० ॥२॥ दोय भेद दरशनना जाणो, शुद्धशुद्ध स्वभावो । शुद्ध दरशनथी निज गुण प्रकटे, आतम गुणहुलसावो ॥ मणि० ॥ ३ ॥ काल अनादि भवबनमे भटकता, कर्मरिपु गण दहवो । कृपाकरी मुज दरशन दीजे, अनुभव अमृत पावो ॥ मणि० ॥ ४ ॥ नाना जातीना फल लेईने, आगल प्रभुजीने ठावो । कृपाचंद्र फल पूजासे यह मनवांछित फल पावो ॥ मणि० ॥ ५ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०" " फल यजामहे स्वाहा ॥

॥ नवम ध्वज पूजा ॥

॥ दोहा ॥

नवमी ध्वजनी पूजना, लावो जिन दरबार।
सधवस्त्री लेई करी, करे प्रदक्षिणा सार ॥१॥
धवल मंगल गातां छतां, वाजित्र विविध प्रकार।
कैलाश गिरिना शिखरपर, आरोपो सुविचार ॥२॥

(तर्ज राग श्री—जिनगुणगाणं श्रुत अमृतं)

ध्वजपूजन करो सुख सदनं ॥ध्वज०॥ सहस योजन दंड मनोहर, सुवरणमय जनमन हरणं ॥ ध्वज० ॥१॥ किंकिणी रणकत शब्द मनोहर, दिव्यध्वनि श्रवणं ॥ ध्वज० ॥ २ ॥ एक हजारके अष्ट ऊपर वलि, सोहे पताका पंचवरणं ॥ ध्वज० ॥३॥ मनमोहन ए ध्वजनिरखीने, भविने परमानन्द करणं ॥ ध्वज० ॥४॥ इण गिरिके षट्नाम सुहंकर, नन्दभद्र गिरिसुखकरणं ॥ध्वज०॥५॥ अषाढ सुदी अष्टमी दिन कीनो, शिवरमणीको कर ग्रहणं ॥ ध्वज० ॥६॥ पांचसे षट् त्रिंशत मुनि साथे, सादिअनन्त स्थितिवरणं ॥ ध्वज० ॥ ७ ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री पर०……ध्वजं यजामहे स्वाहा ॥

॥ दशम अष्ट मंगल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दशमी मंगल पूजना, अष्ट मंगल लिखसार।
रजतना तदुल लेईने, अखंड उज्वल मनुहार ॥१॥
पुष्पवृष्टि करें सुरगणा, पंचवर्णी सुविशाल।
योजन भूमडल प्रमित, पूजो जगत दयाल ॥२॥

(तर्ज—पास जिनदा प्रभु मेरे मन वसिया)

चालो भविकजन यात्रा करिये, यात्रा करिशिव संपदा वरिये ॥ चालो० ॥ जीर्णदुर्गना चैत्य जुहारी, तलहट्टिये जड़ रात्रि रहिये ॥ चालो० ॥ १ ॥ श्रेणीसोपान चढी शुभ भावे, नेमिजिनदको ध्यान जो धरिये ॥ चालो० ॥ २ ॥ प्रथम टूंकमें बिम्ब प्रभुना, अद्भुत आदि प्रलय मन धरिये ॥ चालो० ॥ ३ ॥ मेरुवसी पमुहा ज्निमन्दिर, निरख निरख भवि मनमां ठरिये ॥ चालो० ॥ ४ ॥ यहां अनेक जिनचैत्य नमीने, बीजी टूंक जिनचरणकुं करिये ॥ चालो० ॥ ५ ॥ रथनेमिजीको दरस सरसकरी, तृतीय शिखर शासन सुरि सरिये ॥ चालो० ॥ ६ ॥ चौथी नेमि-धीर जिनेसर, पंचमी टूक नमी दुख हरिये ॥ चालो० ॥७॥ सहसावन जिनचरण नमीने, चैत्यप्रवाडको इनपरि करिये ॥

चालो० ॥ ८ ॥ गजपद कुंडनो नीर लेईने, स्नात्रमहोत्सव करि सुख वरिये ॥चालो०॥६॥ मंगल पूजनारिष्ट निवारक, कृपाचन्द्र शिवपद अनुसरिये ॥ चालो० ॥ १० ॥

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीपर०.......अष्टमंगलं यजामहे स्वाहा ॥

॥ कलश ॥

॥ रागनी धन्याश्री ॥

प्रभुजीको सुयश अम्बरघन गाजे। रैवतगिरिवरको प्रभु मंडण, नेमिजिनन्द विराजे। तीर्थपतिना गुणगावंतां, रसना सफल कहाजे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ श्रीखरतरगण नायक लायक, जिन चारित्र सुरिराजे। गिरनारगिरिनी स्तवना-कीनी, श्रीसंघभक्तिने काजे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ पंचतीर्थनी रचना रंगे, कीनी भविक हितकाजे। दरशन देखत अनुभव प्रकटे, जिमसाक्षात गिरि ठाजे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ भगवइ अंगे लालबागमें, सांभल्यो संघ सुकाजे। मुंबई बंदर रहिचोमासो, संपूरण हित काजे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥ सम्वत उगनोसे उपर बहोत्तर, पोष धवल भृगु छाजे। दशमीदिन गिरिना गुण गाया, भावभले सुसमाजे ॥ प्रभु० ॥ ५ ॥ श्रीजिनकीर्त्तिरत्न शाखाधर, युक्ति अमृतगुरुराजे। कृपा-चन्द्र जिनस्तवना कीनो, निजगुण निर्मल काजे ॥ प्रभु० ॥ ६ ॥ इति श्रीगिरनार तीर्थ पूजा।

जैनाचार्य श्री मज्जिन हरिसागर सूरीश्वर शिष्य
श्री कवीन्द्र सागरोपाध्याय विरचित

॥ श्री पार्श्वनाथ पंचकल्याणक पूजा ॥

॥ मंगल पीठिका दोहा ॥

ॐ अर्हं ज्योतिर्मयी पुरुषादानी पास। दर्शन वन्दन पूजना, करी प्रकट सुखराश ॥ १ ॥ शिव सुख फल वृद्धि करें, श्रीफलवृद्धि पास। गुरु तीर्थ के शरण मे, पाउ परम-प्रकाश ॥ २ ॥ प्रभु गुण साधन रूप हैं, निज गुण साध्य विशेष। साधक साधन योगतें, साधें साध्य हमेश ॥३॥ पर सगी यह आतमा, पाया असुख अपार। परमातम सगी हुआ, सुख सागर अधिकार ॥ ४ ॥ प्रतिमा के परकाश में, प्रभुपूजा सुविधान। सम्यग्दर्शन हो सही, परमातम गुण थान ॥ ५ ॥

॥ प्रथम च्यवन कल्याणकपूजा ॥

॥ दोहा ॥

सम्यग्दर्शन आदि दे, प्रभु के दश अवतार।
राग द्वेष ससार फल, वीतराग शिव सार ॥१॥

(तर्ज—पंछी बावरिया)

प्रभु जीवन अवधारो, विवेकी नर नारी। राग द्वेष तज डारो, विवेकी नरनारी ॥टेर॥ कमठ कुटिल रत विषय विकारे, भाई मरुभूति को मारे। तजो विषय विष भारी, विवेकी नरनारी ॥प्र०॥१॥ राजा अरविन्द भाव विचारें, साधु हो निजकाज सुधारें। साधु बनो अधिकारी, विवेकी नरनारी ॥ प्र० ॥ २ ॥ मरुभूति मर होता हाथी, अरविन्द साधु संत संगाथी। समकित पाया पाओ, विवेकी नरनारी ॥ प्र० ॥ ३ ॥ कुर्कुट सांप कमठ हो डसता, मरुभूति गज को परवशता। महामोह को देखो, विवेकी नरनारी ॥ प्र० ॥ ४ ॥ हाथी शुभध्याने सुर लोके, पहुँचा रहता भाव अशोके। बनो सदा शुभ ध्यानी, विवेकी नरनारी ॥ प्र० ॥ ५ ॥ कमठ सांप दावानल में जल, गया नरक में पाप करम बल। तजो पाप दुखकारी, विवेकी नरनारी ॥ प्र० ॥६॥ मरुभूति चौथे भव राजा, किरण वेग हो साधु सुकाजा। करो सुकाज उदारा, विवेकी नरनारी ॥प्र०॥७॥ कमठ नरक निकला अहि होता, किरणवेग को डश खुश होता। करम राज बलिहारी, विवेकी नारीनारी ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

करम बड़े बलवान है, जो हैं पुद्गल रूप।
कर्म योग हारे अरे, बडे बडे नर भूप॥

(तर्ज—बावडा धीमो पड्जारे)

करम बल जीते जिन ज्ञानी, विजयी श्रीजिनदेव चरण कज पूजो भवि प्राणी ॥ टेर ॥ बारहवें सुरलोक गये वे किरणवेग योगी। कमठ सरप मर हुआ नरक पंचम में दुख भोगी ॥ क० ॥ १ ॥ छट्ठे मरुभूति हुए नृप वज्र-नाभनामा। क्षेमकर जिन सदुपदेश हों साधु सुगुणधामा ॥ क० ॥२॥ कमठ हुआ मर भील बाण से साधु प्राण हरे। वज्रनाभ मध्यम ग्रैवेयक सुर सुख भोग करे ॥ क० ॥३॥ मरा भील वह गया सातमी नरके दुख भोगे। पुण्य पाप कृत करम उदय सुख दुख इह परलोगे ॥ क० ॥ ४ ॥ अष्टम भव में स्वप्न चतुर्दश सूचित हों चक्री। स्वर्णबाहु शुभनाम प्रकृति जिनकी थी अवक्री ॥ क० ॥ ५ ॥ बीस स्थानक महा, तपस्या कर आतम शोधी। तीर्थंकर पद नाम कर्म शुभ बांधा अविरोधी ॥ क० ॥६॥ नरक निकल वह कमठ सिंह हो चक्री को मारे। मर कर भी हो गये अमर, प्राणत सुख अधिकारे ॥ क० ॥ ७ ॥ कमठ नारकी

हुआ अधम, यह पुण्य-पाप खेला। करो पुण्य को तजो पाप को दो दिन का मेला ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

चढ़ते पड़ना जगतमें, होता है आसान।
पड़ चढते जो आतमा, होते हैं भगवान ॥१॥

(तर्ज—कांटो लाग्यो रे करमन को मोसे०)

करम के कांटों को दें तोड़, दौड़कर पूजा जो करते। मिटे मरण भय हुए अभय जिन पूजा जो करते ॥ टेर ॥ लगे करम का कांटा तब तो, बड़े बड़े पड़ते। कांटे के आंटे से निकले, जन ऊँचे चढ़ते ॥क०॥१॥ दशम देवलोके मरुभूति, जीव देव रचते। शाश्वत जिन प्रतिमा पूजा कर, पापों से बचते ॥ क० ॥ २ ॥ अव्रत था जीवन में फिर भी, व्रत लिप्सा धरते। महाव्रती साधु-सन्तों की, सेवा ये करते ॥ क० ॥ ३ ॥ अपने उज्जवल भावी में, अति पुष्ट भाव भरते। भोग रहे थे भोग योग पर, मन में आदरते ॥ क० ॥ ४ ॥ कीचड़ में हो कमल बढे जल, से पर अलग रहे। महा भोग को करे भाव, निर्लेप सदैव वहे ॥ क० ॥ ५ ॥ इन्द्र नाम दुश्च्यवन च्यवन का, भारी दुख भरते। छह महीनों पहिले से ही

सुर जीते भी मरते ॥ क० ॥ ६ ॥ पर तीर्थंकर जीव च्यवन का दुख नहीं धरते। मरने को मंगल गिनते पद अजर अमर वरते ॥ क० ॥ ७ ॥ च्यवन मरण-निर्वाण मरण कल्याणक अनुसरते। हरि कवीन्द्र प्रभु च्यवन कल्याणे जय जय जय करते ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ शार्दूल विक्रीडितम् ॥

सम्यक्त्वाप्ति भवाद्भवे नवमके यो देवलोका च्च्युतः, प्राप्तो यो दशम भवं प्रभुवरः कल्याण-कल्पद्रुमः भव्यानां फल वृद्धि कारकवरो वाराणसीश गृहे, सद्रव्यैः प्रयजामहे तमनिशं श्रीपार्श्वपरमेष्ठिनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं परमात्मने अनन्तानन्तज्ञानशक्तये जन्म जरा-मृत्यु-निवारणाय श्रीपार्श्वनाथ परमेष्ठिने जलादि अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ द्वितीय जन्म कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

धन नगरी वाराणसी, धन अश्वसेन नरेश।
धन वामा रानी सती, पाये प्रभु परमेश ॥१॥

(तर्ज—कर रे कर रे कर रे कररे—राग काफी)

भर रे भर रे भर रे आनन्द आतम में नित भर रे।

हरि कवीन्द्र ऐसे, करो भवि पूजा वैसे। प्रभु पूज कर भवि, पाओ भवि पारा रे ॥ पा० ८ ॥

॥ दोहा ॥

पोष वदी दशमी पुनित, जनमे श्री भगवान।
सुख प्रकाश फैला तभी, हुआ जगत कल्यान ॥१॥

(तर्ज - चन्दा प्रभु जी से ध्यान रे०)

आज आनन्द अपार रे, प्रभु जन्म महोत्सव। जन्म महोत्सव, हरे दुख भव दव ॥ आ० ॥ टेर ॥ गर्भवती सती वामामाता, पूर्ण दोहद थी, थी सुख साता। पूर्ण समय जयकार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥१॥ छप्पन दिग कुमरी मिल आवे, सुती करम सुख साज सजावे। उत्सव विविध प्रकार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥२॥ चौसठ इन्द्र अवधि ज्ञाने, प्रभु जन्मोत्सव सुरगिरि ठाने। ले जावें जगदाधार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥आ०॥३॥ तीर्थोदक जल कलश भरावें, केसर चन्दन फूल मिलावे। औषधि नैक प्रकार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥ ४ ॥ सुरपति सुरगिरि से प्रभु लाते, माताजी को शीश नँवाते। होत उदय दिनकार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥ ५ ॥ अश्वसेन राजा कर पाते, दश दिन उत्सव ठाठ रचाते। घर

घर मंगलाचार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥ ६ ॥
नाग दिशा था निशि अधियारी, गर्भ महातम से अधिकारी। नामी पार्श्व कुमार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥आ० ।७॥ हरि कवीन्द्र जपो प्रभु पारस, भर जावे जीवन में समरस। हो आतम उद्धार रे, प्रभु जन्म महोत्सव ॥ आ० ॥ ८ ॥

॥ शार्दूल—विक्रीडितम् ॥

गर्भस्थ विनयावनम्र वपुषा, शक्रोऽनमद्यंमुदा, यज्जन्मावसरे सुखं त्रिभुवने पुर्ण-प्रकाशो ऽभवत्। यज्जन्मोत्सव मात्म तारण कृते ऽकुर्वन्सुरा मन्दरे, अर्हं पार्श्वजिनं यजामह इह द्रव्यैः शुभैः सर्वदा।

ॐ ह्रीं श्रीं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म-जरा मृत्यु निवारणाय श्री पार्श्वनाथायार्हते जलादि अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीय दीक्षा कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

शारद सित पख दूज के, चन्द्र रूप भगवान।
जन मन के उत्साह सह, बढ़ते पुण्य-प्रधान ॥ १ ॥

(तर्ज—ऋषभ प्रभु भवजल पार उतार)

दरस मन हरष भयो भारी पाये पास कुमार दरस मन हरष भयो भारी ॥टेर॥ जन जन के मुख निकसत वानी, प्रभु हैं प्राणाधार। चन्द चकोर मोर बादल ज्यों, त्रिभुवन तारणहार ॥ द० ॥ १ ॥ मति श्रुत अवधि ज्ञानी स्वामी, जन्म समय जयकार। अंगुष्ठामृत पान पुष्ट, कमनीय कला अवतार ॥ द० ॥ २ ॥ बाल कुमार किशोरावस्था, पार करें भगवान। जीवन साथी प्रभावती नृप, कन्या हुई प्रधान ॥ द० ॥ ३ ॥ एक अनादि प्रभु रूप के, जो नहीं थे अवतार। विकसित मानवता से जिनमें थी प्रभुता साकार ॥ द० ॥४॥ करुणा कोमलता भावों में, रही वीरता संग। नव कर नीलवरण तन सुन्दर, श्याम सलोने अंग ॥द०॥५॥ जनम जनम संस्कार सजाते, जीवन में नवरंग। संस्कारी थे प्रभु जीवन में, अजब निराले ढंग ॥ द० ॥ ६ ॥ अश्वसेन वामा रानीसुत, पारस पारस रूप। सतसंगी जन लोहा होता, सुवरन सहज सरूप ॥ द० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

हुआ विरोधी कमठ शठ, वह भी ब्राह्मण पूत।
जनम दरिद्री जगत ठग, नाम मात्र अवधूत ॥ १ ॥

(तर्ज—अज्ञानी जीते मरते हैं निन कारण वेराग)

अज्ञानी ऐसा करते हैं, ज्ञानी की गत ओर ॥ टेर ॥ चार दिशामें आग लगी हो, उपर धूप कड़ी । बीच बैठ जो तपे वही, पंचाग्नि तपस्या बड़ी ॥ अ० ॥ १ ॥ कमठ हठी शठ ब्राह्मण होता घर दारिद्र्य भरा । जगपूजा निज उदर निमित्त साधु वेश धरा ॥ अ० ॥ २ ॥ लोक बोक सब दर्शन खातिर दोडा दौड़ करी । प्रभु पारस माँ साथ पधारे, दिलमें दया भरी ॥ अ० ॥ ३ ॥ नाग देव योगी ! लक्कड़ मे तेरे देख जले । हिंसा युत यह यांग तपस्या, कैसे कहो फले ? ॥ अ० ॥ ४ ॥ योगी कहता तुम क्या जानो, घोडे पडे घुमाओ । योग अगम है इसमें अपना क्यों तुम समय गुमाओ ॥ अ० ॥ ५ ॥ नाग युगल अधजला प्रभु लक्कड से तुरत निकालें । परमेष्ठी वर मन्त्र सुना, योगी ! पाखण्ड हटा ले ॥ अ० ॥ ६ ॥ धरणेन्द्र पद्मावती होते, प्रभु पारस पद्सगी । विषधर विष को अमृतकरता, प्रभु करणी थी चंगी ॥ अ० ॥७॥ भटा फोड़ हुआ लख अपना, भगा कमठ अभिमानी । असुर मेघ माली भर होता, मन में दुश्मन जानी ॥ अ० ॥ ८ ॥

॥ दोहा ॥

पारस ऋतु वसन्त में, चित्रित नेमि वरात।
देखें भावित हो गये, वैरागी विख्यात ॥१॥

(राग भैरवी तर्ज—तूं मेरा आधार प्रभुजी०)

संयम से होगा वेड़ा पार ॥ सं० ॥ टेर ॥ लोकान्तिक सुर विनती करते, जय जय जगदाधार। संयम ले स्वामी उपदेशो, भव्यातम उद्धार ॥ सं० ॥ १ ॥ सुरपति नरपति महा महोत्सव, आश्रम पद उद्यान। चार महाव्रत धारें स्वामी, देय संवत्सर दान ॥ सं० ॥ २ ॥ पौष वदी ग्यारस दिन धन धन, गंगा काशी देश। मात पिता धन वे जन धन धन, जिन पाये परमेश ॥ सं० ॥३॥ तेला तपधारी प्रभुजी तव, पाये चौथा ज्ञान। नर शत तीन हुए सह दीक्षित, देव दुष्य परिधान ॥ सं० ॥ ४ ॥ प्रभु दीक्षा कल्याणक उत्सव, सुरवर ठाठ अपार। नंदीश्वर जा मंगल पूजा, पाठ सुभाव विचार ॥ सं० ॥ ५ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान सहित हो, जो संयम स्वीकार। अव्रत आश्रव टलते टलता, चार गति संसार ॥ सं० ॥ ६ ॥ कर्म निर्जरा सहज निपजती, होता केवलज्ञान। अपुनर्भव भावी जीवन फिर, ज्योती रूप महान ॥ सं० ॥ ७ ॥

सुख-सागर भगवान प्रभु, परमातम पारसनाथ। हरि कवीन्द्र संयम पथ साथी, झालें मेरा हाथ ॥ सं० ॥ ८ ॥

॥ शार्दूल विक्रीडितम् ॥

त्यक्त्वा राज्य रमां प्रियां सुपरमां देवासुरैर्वन्दितः, सम्बुद्धः स्वयमेव यः सह शतैः पुम्भिस्त्रिभि र्दीक्षितः। सम्यग्दर्शन शुद्धये सुविधिना सद्भाव सम्पादितैः, सद्द्रव्यैः प्रयजामहे प्रतिदिनं श्रीपार्श्वनाथं जिनम्।

ॐ ह्रीं श्रीं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय श्री पार्श्वजिननाथाय जलादि अष्ट द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ चतुर्थ केवलज्ञान कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ग्राम नगर पुर विचरते, श्री प्रभु पारसनाथ।
आतम गुण आराधना, करते संयम साथ ॥१॥

(गजल तर्ज— विना प्रभु पास के देखे०)

निजातम ध्यान की महिमा, कहो क्या दूसरा जानें ? । सुधा पी ओर ने तो रस, कहो क्या दूसरा जानें ? ॥ टेर ॥ परम योगी प्रभु पारस, विचरते योग मस्ती में। प्रभु की योग मस्ती को, कहो क्या दूसरा जाने ॥

नि० ॥ १ ॥ न अपना या पराया था, जगत उनके लिये सारा। आत्मवत् भावना उनकी, कहो क्या दूसरा जाने ॥ नि० ॥ २ ॥ तजी निज देह की चिन्ता, रहे रत आतम चिन्तन में। प्रभु के आतम चिन्तन को, कहो क्या दूसरा जाने ॥ नि० ॥ ३ ॥ समिति गुप्ति अनुत्तर थी, अपूरव साधना उनकी। प्रभु की साधना विधि को, कहो क्या दूसरा जाने ॥ नि० ॥ ४ ॥ तपस्या पारणा प्रभु ने, किया धन सेठ के घरमें। सुरों ने की महा महिमा, कहो क्या दूसरा जाने ॥ नि० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

प्रकृति धातु उपसर्ग से, पलटे अपना रूप।
प्रभु प्रकृति पलटी नहीं, महिमा यही अनूप ॥१॥

(तर्ज—जगत में नवपद जयकारी० लावणी)

विचरते पारस व्रतधारी, सदा सुख दुख में अविकारी ॥ टेर ॥ देहकी ममता थी त्यागी, सुरतियाँ आतम में लागी। मोहकी महिमा थी भागी, ज्योतियाँ जीवन में जागी। कुण्ड सरोवर तीर पर, स्वामी धरते ध्यान। वनगज निज कर पूज कर, पाया अमर विमान। कली कुण्ड तीरथ अवतारी, विचरते पारस व्रतधारी ॥ १ ॥ कादम्बरी

अटवी प्रभु आये, द्वेष मन असुर कमठ छाये। डराने प्रभु को मन भाये, सिंह और साप रूप लाये। प्रभु सागर गभीर थे, थे मेरु समधीर। डरे नहीं डर वह गया, था फूटे तकदीर॥ कमठ शठ क्रोध अधिक धारी, विचरते पारस व्रतधारी॥ २॥ घनाघन उमड उमड आये, बिजलियाँ कडक २ जाये। मुसल धारा जल बरसाये, जगत सब जल-मय हो जाये। प्रभु ध्यान में लीन थे, वह उपसर्ग मलीन। समता तामस की लगी, होडा होड प्रवीन। तीन दिन यों बीते भारी, विचरते पारस व्रत धारी॥ ३॥ नाक तक जल चढता आया, ध्यान प्रभु मनमें था छाया। नागपति आसन कपाया, अवधि से प्रभु को लख पाया। धरणेन्द्र पदमावती, आये भक्ति अपार। निजकंधे प्रभुको लिये, सेवा भाव विचार। मानते जीवन जयकारी, विचरते पारस व्रतधारी॥ ४॥ कमठ की माया जल जानी, नागपति आग हुए वानी। बोलते सुनरे अभिमानी, धूलक्यों करता जींदगानी। अजा कृपाणी न्याय से, क्यों मिटता है कीट। प्रभु सताये जाय ना, तू जायेगा पीट। लगा ले अरे करम कारी, विचरते पारस व्रत धारी॥ ५॥ डरा वह आया नत होता, करम अपने से हत होता। हृदय से

आंखों से रोता, विरोधी मन मल को धोता। चरण शरण प्रभु का लिया, मन का मिटा विरोध। भव भव का दुःख खोगया, पाया आतम बोध। अन्त वह होगा शिवचारी, विचरते पारस व्रत धारी ॥ ६ ॥ शत्रु या मित्र भले होना, सामने जन उत्तम होना। लोह भी हो जाये सोना, नीच संग खोना ही खोना। धरणेन्द्र पद्मावती, करते प्रभु गुण गान। गये स्वयं निज धाम को, अहिछत्र वह धाम। हुआ तीरथ धन बलिहारी, विचरते पारस व्रत धारी ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

त्यासी दिन छद्मस्थ में, रहते श्री भगवान।
चैत वदी मिति चौथ को, पाये केवल ज्ञान।

(तर्ज—नाचत सुर इन्द चन्द०)

धारंत प्रभु आतम ध्यान, ज्ञान हितकारी ॥ टेर ॥

अनुक्रम गुणठान चढ़े, घाति करम काट कढ़े। आतम पद पाठ पढे, बेला तप धारी ॥ धा० ॥ १ ॥ धातकी सुवृक्ष तले, विशाखा सुचन्द्र बले। लोकालोक सर्वकले, केवल ज्ञान धारी ॥ धा० ॥२॥ प्रातिहार्य प्रकट आठ, समवशरण पुण्य ठाठ। दुःख गये दूर नाठ, शुप्रभावकारी ॥ धा० ॥३॥

सागर सुखों के नाथ, देते अशरण को साथ। पकड हाथ पार करे, भव समुद्र भारी ॥ धा० ॥ ४ ॥ हरिकवीन्द्र धन्य धन्य, जीवन वह पुण्य जन्य। आतमा अनन्य तीर्थ, थापें प्रभु चारी ॥ धा० ॥ ५ ॥

(शार्दूलविक्रीडितम्)

आत्म ध्यान-तपो-बलेन भगवानावारकं कर्म यो दूरी कृत्य निजात्मना सुपरितः सर्वज्ञभावं श्रितः। लोका-लोक-विलोकन-प्रकथन-प्रौढप्रतिष्ठा गुणः सद्रव्यैः प्रयजामहे सविधि त सर्वज्ञपार्श्व प्रभुम्।

ॐ ह्रीं श्री अर्हं परमात्माने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये श्री पार्श्वनाथ सर्वज्ञाय जलादि अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम निर्वाण कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

समवशरण में बैठ कर, स्वामी दें उपदेश।
आत्म धर्म आराधते, मिटता मूल कलेश ॥१॥

(तर्ज—माला कटे रे जाला जीवका)

भव्यातम तिरते प्रभु के तीरथ में आतम ध्यान से ॥ टेर ॥ अश्वसेन नृप वामा राणी, प्रभावती गुणखाणी। प्रभु उपदेश महाव्रत धारी, हुए साधु गुण ठाणी रे ॥

भ० ॥ १ ॥ शुभ आदिक दश गणधर होते, प्रभु प्रवचन परचारी। द्वादशांग गणिपिटक प्रणेता, दर्शन दर्शनकारी रे ॥ भ० ॥२॥ स्याद्वाद सर्वोदय कारण, प्रभुवाणी अधिकारी। आतम भावी जन होते हैं, परमातम पद धारी रे ॥ भ० ॥ ३ ॥ सर्व विरतिधर देश विरतिधर, अनगारी सागारी। दुविध धरम धारक हो होते, भवपारी नरनारी रे ॥ भ० ॥ ४ ॥ कनक कमल पद कमल धारते, ग्राम नगर पुर स्वामी। आलोकित करते प्रभु विचरे, त्रिभुवन अन्तर्यामी रे ॥ भ० ॥ ५ ॥ तीस वरस घर वास रहे प्रभु त्यासी दिन छद्मस्था। सात दिवस नवमास गुनतर, वर्ष केवलावस्था रे ॥ भ० ॥ ६ ॥ शत-वर्षी पूर्णायु जीवन, जीना जिनने जाना। जीयो जीने दो औरों को, प्रभु आदर्श महाना रे ॥ भ० ॥ ७ ॥

॥ दोहा ॥

श्री समेत गिरि ऊपरे, प्रभु अन्तिम चउमास।
ठाया शिवपाया वहीं, धन तीरथ वह खास ॥१॥

(तर्ज—पास जिनंदा प्रभु मेरे मन वसिया)

तीर्थंकर प्रभु पार्श्व सांवरिया, नाथ विराजें समेत शिखरिया। तीन तीस साधु प्रभु साथी, एक मास अनशनवर

धरिया ॥ ती० ॥ १ ॥ चन्द्र विशाखा योगी होते, श्रावण सुद आठम शिव वरिया ॥ ती० ॥ २ ॥ प्रभु निर्वाण हुआ सुर आये, खेद हरष दोनों दिल भरिया ॥ ती० ॥ ३ ॥ कल्याणक उत्सव सुर रचते, जय जय जय प्रभु तारण तरिया ॥ ती० ॥ ४ ॥ शिवगामी स्वामी नहीं आवें, भव में भव सागर निसतरिया ॥ ती० ॥ ५ ॥ एकान्तिक आत्यन्तिक सुख में, ज्योति सरूप अनन्त गुण दरिया ॥ ती० ॥ ६ ॥ हरि कवीन्द्र प्रभु कारण कर्ता, धन जो अपना आतम उधरिया ॥ ती० ॥ ७ ॥

॥ शार्दूल विक्रीडितम् ॥

कृत्वा कर्मचय क्षयं स्वयमथो गत्वा शिवं सर्वथा, ससार पुनरेति नो जिनपतिः सिद्धश्च बुद्धश्च यः । तं ज्योतिर्मय मात्म-तारणकृते निक्षेपितान्तर्मनः सद्रव्यैः प्रयजामहे प्रतिदिन श्री पार्श्वपारंगतम् ।

ॐ ह्रीं श्रीं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म-जरा-मृत्यु-निवारणाय श्री पार्श्वपारंगताय जलादि अष्टद्रव्य यजामहे स्वाहा ।

(तर्ज—लघुता मेरे मन मानी०)

भवि ! रमो प्रभु जीवन में, जीवन आनन्द भवन में रे ॥ भ० ॥ टेर० ॥ पहिले भव श्रीनयसारा, नय विनय सार गुण धारा। मार्गानुसारि उदारा रे, ग्राम चिन्तक जन हितकारा ॥ भ० ॥ १ ॥ वर काष्ट हेतु वन जावे, खाउं मैं खिलाकर भावे। जो मिलें अतिथि अविकारा रे, तो मानूं धन अवतारा ॥ भ० ॥ २ ॥ पथ भूले साधु पधारे, सन्मुख नयसार सिधारे। विन बादल वृष्टि समानारे, धन सन्त मिले सुखदाना ॥ भ० ॥ ३ ॥ शिष्टाचारी पद वन्दे, दे भात पानी चिर नन्दे। हो सत्संगी सुखकारी रे, सम्यग्दर्शन अधिकारी ॥ भ० ॥ ४ ॥ कृत अतनु कर्म तनु करणं, कर यथा प्रवृत्ति करणं। निज भाव अपूरव लावे रे, जड़ चेतन भेद उपावे ॥ भ० ॥ ५ ॥ मुनि द्रव्य मार्ग तब पाये, नयसार भाव पथ आये। जब पुण्य कमल है खिलता रे, सुरभित आतम रस मिलता ॥ भ० ॥ ६ ॥ भव गिनती समकित करता, गति शुक्ल पक्ष अनुसरता। समकित सुखसागर सीरारे, सेवो भगवान सुधीरा ॥ भ० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र धन नरनारा, भव्यातम समकित धारी। पूजें प्रभु समकित हेतु रे, शिवपथ भव जल निधि सेतु ॥ भ० ॥ ८ ॥

॥ शार्दूल विक्रीडितम् ॥

यो ऽकल्याण पदं कथञ्चिदपि नो हन्मिन्नाशिमिन्नर-नित्, मोहा प्रौढ़ स्ढाल्य वीर्यं यत्नवान् पूर्वो ऽन्धकारं यथा । त कल्याण निधि स्वय परके कल्याण कल्पद्रुम, मद्धयै जंगनां प्रभुं जिनपतिं श्रीवर्द्धमानं यजे ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्री महावीर स्वामिने जलादि अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय श्री तीर्थंकर पद सूचन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

नय प्रमाण मगन सदा, जिन शासन जयवन्त ।
त्रिहुं काले तिहुं लोक में, पूजो जिन भगवन्त ॥२॥

(तर्ज—महावीर भगवान शरण गुण होता आगे है)

त्रिभुवन नायकार वीर प्रभु पूजा प्यारी है । पापतिमिर भार हरन अगम उजयालनकारी है ॥ टेर ॥

॥ ढाल ॥

गरे प्रथम गुण मोह में, दूजे भव नरसार । गागरा जिन प्रतिमा थकी, दूजे भव अवतार । पुन्य फल भोग विशाल है ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ तीजे भव धारी जन,

पुत्र मरिचि गुण धाम। ऋषभ प्रभु उपदेशतें, ले दीक्षा अभिराम। करमगति विकट विकारी है ॥ त्रिभुवन० ॥२॥ मरिचि हन्त! दीक्षा तजें, धरें त्रिदण्डी वेश। समवशरण बाहिर रहे, दे मुमुक्षु उपदेश। कई भव्यातम तारी हैं ॥ त्रिभुवन० ॥ ३ ॥ यहाँ तीर्थ पति जीव क्या, है ? कोई हे नाथ। भरत प्रश्न प्रभु से करें, सविनय जोड़े हाथ। प्रभु भाषें अविकारी हैं ॥ त्रिभुवन० ॥ ४ ॥ वासुदेव चक्री तथा, अन्तिम तीरथनाथ। होगा मरिचि भावि में, पदवी पुण्य सनाथ। भरत वन्दें अधिकारी हैं ॥ त्रिभुवन० ॥५॥ दादा तीर्थंकर हुए, चक्री है मम तात। तीर्थंकर चक्री अधिक, वासुदेव हूं जात। वाह मेरी बलिहारी है ॥ त्रिभुवन० ॥ ६ ॥ सुखसागर संसार में, जो होंगे भगवान। कर्म बलीने कर दिया, उनपर प्रतिविधान। करम बल कुटिल अघारी है ॥ त्रिभुवन० ॥ ७ ॥ कर्म काट कर जो हुए, करके आत्म विकास। हरि कवीन्द्र पूजो वही, शासन नायक खास। पूज्य पूजा उपकारी है ॥ त्रिभुवन० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ यो ऽकल्याण पदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्री महावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीय कर्म महिमा सूचन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रबल बला है कर्म की, ज्ञानी रहें अलीन।
ज्ञानी की पूजा करो, करें कर्म-मल छीन ॥१॥

(तर्ज—छोटे से बलमा मोरे आंगने मे गुल्ली खेलें)

वीर प्रभु भगवान पूजा आनन्दकारी। कर्म अभाव प्रधान, शिवपद दें अविकारी ॥ टेर ॥ कर्म फसे बलवान, निर्बल हैं नरनारी। मरिचि महा गुणवान, थे पर कर्म विकारी ॥ वी० ॥ १ ॥ चारित्र मोह प्रभाव, दीक्षा त्यागी पहिले। बाद असाता योग, मिथ्यामति विसतारी ॥ वी० ॥ २ ॥ साधु न पूछें सार, निस्पृह ये अणगारी। शिष्य बनाउं मैं मुख्य, आज्ञा सेवाकारी ॥ वी० ॥ ३ ॥ आया कपिल कुमार, साधु धर्म बताया। भेजा प्रभुजी के पास, नहीं पा सका अनारी ॥ वी० ॥ ४ ॥ कपिल को शिष्य विशेष, स्वार्थ हित कर डाला। उत्सूत्र भाषण भोग, भीषण बहु संसारी ॥ वी० ॥ ५ ॥ करम भरम भय भेद, खेद भावीवश होते। मरिचि गये ब्रह्म लोक, परिव्राजक गतिधारी ॥ वी० ॥ ६ ॥ कर्म महा विकराल, जड हैं जगमें किन्तु। चेतन के सहयोग, देते दुःख अपारी ॥

वी० ॥ ७ ॥ सुखसागर भगवान, जिनहरि पूज्य प्रभु की। पूजा कवीन्द्र करो भाव, अकर्मक पद दातारी ॥ वी० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ यो ऽकल्याण पदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्री महावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ चतुर्थ श्री वासुदेव पद प्राप्ति पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पुण्य पाप दो रूप हैं, कर्म शुभाशुभ भाव।
पुण्य रूप पूजा करो, उत्तरोत्तर गुणदाव ॥ १॥

(तर्ज—करम गति टारी नाहिं टरे)

प्रभु की पूजा पुण्य भरे, पाप सन्ताप हरे ॥प्र०॥ टेर॥ उस उस कर्म उदय से मरिचि, पाकर विविध विधान। छह परिव्राजक छह सुर भव कर, भोगे पुण्य प्रधान ॥ प्र० ॥ १ ॥ सतरहवें भव राजगृही में, विश्वभूति शुभ नाम। कपट देख झट साधु होते, ज्ञान तपो गुण धाम । प्र० ॥ २ ॥ देख विरोधी हँसी मुनीश्वर, हन्त ! निदान करें। तप फल हो आगामी भव में, मारूं तुझे अरे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ अष्टादश भव महाशुक्र में अद्भुत लील करे। सुतापति पोतन पुर नृप घर, सात स्वप्न अवतरे ॥ प्र०॥४॥

वासुदेव पहिला त्रिपृष्ट वह, अचल बन्धु बलदेव। पूर्व विरोधी सिंह हनन कर, सफल निदान करेव ॥ प्र० ॥५॥
प्रति केशव अश्वग्रीव विजय से, जय वरमाल वरे। शय्या-पालक गीत विनोदी, सीसा कान भरे ॥ प्र० ॥ ६ ॥
समरथ को नहीं दोष-रोष फल, किन्तु विकट खरे। सुख सागर भगवान प्रभु पद में, सब अन्त करे ॥ प्र० ॥ ७ ॥
हरि करीन्द्र जन मन्य प्रभु से, प्रभुता सहज वरे। दीपक से दीपक प्रकटे ज्यों, अन्धकार टरे ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ यो ऽकल्याणपदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्री महावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम चक्रवर्ती पद प्राप्ति पूजा ॥

॥ दोहा ॥

उच नीच व्यवहार से, कर्म रूप व्यवहार।
निश्चय से परमातम पद, पूजो विगत विकार ॥१॥

(राग माड़ तर्ज—भीनासर स्वामी अन्तरजामी तारो पारस नाथ?)

निज धर्म सुधारो नित निरधारो, प्रभु पूजा उपकार ॥ नि० ॥ टेर ॥ कर्मों का संसार है यह, सुख दुःख कर्म विकार। अन्तमति गति त्रिपृष्ट सप्तम, नरक में दुःख

अथागरे ॥ नि० ॥ १ ॥ इक्कीसम भव सिंह हुए वह, हिंसक जीव विशेष। बाइसम भव चौथी नरके, पाये दुःख कलेश रे ॥ नि० ॥ २ ॥ लघु भव बीच किये कई आखिर, पा नर जन्म उदार। सुकृत कर्म उपार्जन कीना, भोग महाफल सार रे ॥ नि० ॥ ३ ॥ अवर विदेहे मूका नगरी, पुण्य विराजित देश। राय धनंजय धारिणी राणी, सुत प्रिय मित्र विशेष रे ॥ नि० ॥ ४ ॥ चौद महास्वपनों से सूचित, चौदह रत्न-निधान। चक्री प्रियमित्र पावन गुणमय, परमाश्चर्य प्रधान रे ॥ नि० ॥ ५ ॥ चक्रवर्ती पद भी है चञ्चल, जान तजें भव भोग। संयम साधन सावधानता, धारें आतम योग रे ॥ नि० ॥ ६ ॥ अन्तमें अनशन आतमयोगी, तेइसम भव जान। चौइसम सप्तम सुर लोके, सुर सुख भोग महान रे ॥ नि० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र सुकीर्तित वन्दित, शासनपति महावीर। ध्यावो सेवो भविजन ! भावे, मानो धन तकदीर रे ॥ नि० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ यो ऽकल्याण पदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्री महावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ षष्ठम तीर्थंकर पदाराधन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तीर्थंकर पद साधना, तीर्थङ्कर पद हेत।
तीर्थङ्कर पूजा करो, सहज सिद्धि संकेत॥

(तर्ज—प्रभु धर्म नाथ मोहे प्यारा जगजीवन०)

भवि! पूजो परमाधारा, तीरथ पद तारणहारा।
पाओ भव सिन्धु किनारा, तीरथपद तारण हारा ॥ टेर ॥
सरिता जल जैसे बहता, देवायु थिर नहीं रहता। च्यव
पच्चीसम भव सारा, पाये नर जन्म उदारा ॥ भ० ॥ १ ॥
छत्राग्रा नगरी भारी, जीतशत्रु नृपति अधिकारी। भद्रा
कूखे अवतारा, श्रीनन्दन नाम कुमारा ॥ भ० ॥ २ ॥ बल
तेज रूप गुणवाना, राज्यादिक सुख अधिकाना। पोट्टिल
सूरि गणधारा, वन्दे आनन्द अपारा ॥ भ० ॥ ३ ॥ गुरु
बोध सुधारस पीना, बहिरातम भाव विहीना। अंतर
आतम अधिकारा, लें धन संयम सुखकारा ॥ भ० ॥ ४ ॥
अरिहन्तादिक उपयोगे, सुविहित साधन विधियोगे।
बीस स्थानक सुखकारा, आराधे भाव अपारा ॥ भ० ॥५॥
कर्मों से जग जमाया, जिन नाम कर्म शुभ पाया। लाख
वर्ष निरन्तर धारा, तप मास खमण बलिहारा ॥ भ० ॥६॥

वन्दों नन्दन मुनि राया, अंतिम अनशन शुभ ठाया।
प्राणत सुरलोक सिधारा, पुण्योदय अपरंपारा ॥ भ० ॥७॥
हरि कवीन्द्र शासन स्वामी, होंगे जिननायक नामी।
प्रभु महावीर चितधारा, भवि बोलो जय जय कारा
॥ भ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यं ॥ यो ऽकल्याणपदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीमहावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम च्यवन कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

च्यवन दुःख जिनको न था, वे भावी भगवान।
च्यवे दशम सुरलोक से, पूजो हो कल्यान॥

(तर्ज—माला काटे रे जाला जीवका०)

दुख को नहीं जाने आतम भावे थिर हो जो आतमा ॥ टेर ॥ प्राणत नामक देव लोक से, आयु स्थिति कर पूरी। च्यवन कल्याणक होते प्रभु ने, मेटी भव शिव दूरी रे ॥ दु० ॥ १ ॥ जंबूद्वीपे दक्षिण भरते, माहणकुण्ड सुनयरे। प्रभु अवतरे हस्तोत्तर में, देवानन्दा उयरे रे ॥ दु० ॥ २ ॥

नीच गोत्र कर्मोदय था पर, जीवन पुण्य प्रधाना। चौद सुपन लखती वह माता, जय जय च्यवन कल्याना रे ॥ दु० ॥ ३ ॥ लखे सुधर्माधिप इन्द्र यह, घटना अवधि-ज्ञाने। शक्रस्तव से करे वन्दना, निज जीवन धन् जाने रे ॥ दु० ॥ ४ ॥ इन्द्रादेशे हरिणगमेषी, देव दिव्यगति आवे। हस्तोत्तर में गर्भहरण कर, कल्याणक प्रकटावे रे ॥दु० ॥५॥ नीचगोत्र कर्म क्षय होते, जग-कल्याण निकेतु। ब्राह्मण से क्षत्रिय कुल आये, महावीरता हेतु रे। दु० ॥ ६ ॥ क्षत्रिय कुण्ड नगर नृप सिद्धा,-रथ पटरानी त्रिशला। चौद सुपन लखती प्रभु पावे, महासती मति विमला रे ॥ दु० ॥ ७ ॥ कल्पसूत्र में भद्रबाहु प्रभु, जीवन घटना बोधे। हरि-कवीन्द्र आराधक जन, निज जीवन गुण परिशोधे रे ॥ दु० ॥ ८ ॥

॥ काव्य ॥ यो ऽकल्याणपदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीमहावीर स्वामिने जलादि अष्ट द्रव्य यजामहे स्वाहा।

॥ अष्टम जन्म कल्याणक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रज्ञा प्रजापति विबुधमुख, दिव्य स्वप्न फल जान।
भने मुदितमन जनमते, भाग्यवान भगवान ॥१॥

विधि योग करे, कर्म खातमा हो जी ॥ ध० ॥ ३ ॥ शूलपाणि चण्डकोशिया हो जी, कांइ संगमसुर गोवाल, कान खीला भरे हो जी । सुर नर तिर्यंच का सहे हो जी, कांइ प्रभु उपसर्ग महान, महातप आदरे हो जी ॥ ध० ॥ ४॥ महा अभिग्रह धारते हो जी, कोई चन्दना पुण्य प्रभाव, प्रभु पारणो करे हो जी । साधिक बारह वर्ष में हो जी, प्रभु छद्मस्थ रहे अप्रमाद, नींद ने वोसिरे हो जी ॥ ध० ॥ ५ ॥ वैशाख सुद दशमी दिने हो जी, कोई हस्तोत्तर शुभ योग, घाती कर्म मिट गये हो जी । केवल ज्ञान सुदर्शने हो जी, प्रभु देखें लोकालोक, अर्हं पद पागये हो जी ॥६॥ स्याद्वाद प्रवचन सुधा हो जी, पी समवशरण में जीव, अमरपथ पागये हो जी । गौतम गणधर आदि में हो जी, श्रीसंघ चतुर्विध थाप, तीरथपति होगये हो जी ॥ ध० ॥ ७ ॥ देश सरव व्रत साधना हो जी, कोई साधक साध्य विचार, करें भवि आतमा हो जी । हरि कवीन्द्र करें वन्दना हो जी, जो जन जिन दर्शन आराध, बने परमातमा हो जी ॥ ध० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ यो ऽकल्याणपदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीमहावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ दशम निर्वाणपद प्राप्ति पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुख दुख कर्ता आतमा, ओर निमित्त अनेक।
वीर प्रभु उपदेश यह, दर्शन जैन विवेक ॥१॥

(तर्ज—झण्डा ऊँचा रहे हमारा)

शासन पति की जय हो जय हो। वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ टेर ॥ आतम को समझ सो ज्ञानी, वीर प्रभु की पावन वानी। जो जाने वह ही निर्भय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ १ ॥ क्षत्रिय कुण्डमें जनमें स्वामी, थे त्रिभुवन जन के हितकामी। उनका शासन सदा हृदय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ २ ॥ अपकारी के थे उपकारी, भक्त अभक्तों के हितकारी। जिनसे जीवन सदा अभय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ ३ ॥ स्त्री शूद्रों को मार्ग बताया, साम्यभाव सत रूप जगाया। दुखियो पर जो रहे सदय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥४॥ श्रेणिक को आतम समझाया, अव्रत रहते भी अपनाया। जिन दर्शन से परम उदय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ ५ ॥ वर्ष बहुत्तर आयुष पाये, काती अमावस सिद्ध कहाये। गौतम स्वामी मोह

विजय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥६॥ मोक्ष भूमि पावापुर धन धन, जिससे ज्योति पाते जन जन । प्रवचन उनका प्रमाण नय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥७॥ सुखसागर भगवान हमारे, ज्योतिर्मय जग के उजियारे । हरि कवीन्द्र विशेष विनय हो, वीर प्रभु की जय हो जय हो ॥ ८ ॥

॥ काव्यं ॥ यो ऽकल्याणपदं०

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं श्रीमहावीर स्वामिने जलादि अष्ट-द्रव्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

॥ दोहा ॥

होता है निर्वाण जब, घड़ी न बढ़ती एक ।
वीर प्रभु फरमान से, इन्द्र किया विवेक ॥१॥

(तर्ज—अवधु सो योगी गुरु मेरा —आशावारी)

प्रभुजी आप शरण हम आये ॥ टेर ॥ प्रभु निर्वाण हुआ सुनते ही, गुरु गौतम दुख पाये । विलापात करते यों बोलें, छोड़ हमें क्यों सिधाये ॥ प्र० ॥ १ ॥ जाना था तो दूर न करना था, हमको हे स्वामी । पूरी हो न सके ऐसी यह, पड़ी हमारे खामी ॥ प्र० ॥ २ ॥ गौतम

गौतम कौन कहेगा, कौन रहेगा साथी। कोन हरेगा भेद भरम सब, हम हैं हाय अनाथी ॥ प्र० ॥ ३ ॥ वीर वीर करते यों गौतम, निज आतम लय लाये। मैं हूँ मेरा ओर न कोई, केवल ज्ञान उपाये ॥ प्र० ॥ ४ ॥ सुखसागर भगवान परमपथ, गामी अन्तरयामी। महावीर प्रभु गौतम स्वामी, सविनय सदा नमामि ॥ प्र० ॥ ५ ॥ दो हजार बारह सवत में बीकानेर दीवाली। महावीर पूजा यह गाते, हुई आतम खुसियाली ॥ प्र० ॥ ६ ॥ श्रीजिन हरिगुरु दिव्य दयामय, बोध बुद्धि दातारी। वर्तमान आनन्द गुणाधिप, अनुशासन अधिकारी ॥ प्र० ॥ ७ ॥ कवीन्द्रसागर पाठक प्रभु गुणा, कीर्तन जय जयकारी सम्यग्दर्शन ज्ञान विकासी, हो नित मगलकारी ॥ प्र०॥८॥

—०—

जैनाचार्य श्रीमज्जिन हरिसागर सूरीश्वर
शिष्य श्री कवीन्द्रसागरोपाध्याय विरचित

॥ रत्न त्रय पूजा ॥

॥ मंगल पीठिका ॥

॥ दोहा ॥

सुख सागर भगवान जिन, हरिपूज्येश्वर आप। आतम परमातम भजो, मिटे मोह सन्ताप ॥ १ ॥ दुख को हम चाहें नहीं, नित चाहें सुख सार। पर दुख ही दुख पा रहे, कारण कौन विचार ॥ २ ॥ क्या सुख होता ही नहीं ?, क्या दुख जीव सुभाव ?। क्या कोई दुख देत है ? क्यों यह बने बनाव ? ॥ ३ ॥ औषध से दुख ना मिटे, मिटे न धन जन योग। आतम धर्माराधते, हो दुख मूल वियोग ॥ ४ ॥ अपनी अपनी आतमा, का उपयोग विचार। जो पावें पावें सही, वे सुख अपरम्पार ॥ ५ ॥ मृगमद मृग ढूंढ़त फिरे, पर ना पावे लेश। भटक भटक वह मर मिटे, केवल पावे क्लेश ॥ ६ ॥ मैं मैं मैं करता फिरे, पर ना जाने भेद। खटिक घरे बकरा यथा,

मर मर पावे खेद ॥ ७ ॥ पुण्य योग पाया यहां, दर्शन जैन प्रधान। यहां सहज सुख सिद्धि का, पाया विशद विधान ॥ ८ ॥ सम्यग्दर्शन शुद्ध हो, ज्ञान चरण निस्तार। जनम मरण भव दुख का, रहे न लेश विकार ॥ ६ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान मय, चरण रत्न ये तीन। मोक्ष मार्ग साधक गुणी, साधें भाव अदीन ॥ १० ॥ परम गुणी जिनराज हैं, स्मारक निजगुण रूप। दर्शन वन्दन पूजना, करो भविक गुण भूप ॥ ११ ॥

(तर्ज—राग धनासिरी—तेज तरणि मुख राजे)

भाव रतन दातार, पूजो रे भवि वीतराग पद सार ॥ टेर ॥ राग आग जलता जन जीवन, पाता दुख अपार ॥ पूजो० ॥ वीतराग पद सेव सुधारस, अनहद आनन्दकार ॥ पूजो० ॥ १ ॥ राग-द्वेष की गांठ खुलेगी, ज्योतिर्मय जयकार ॥ पूजो० ॥ जीवन होगा पावन जगमें, अजरामर अविकार ॥ पूजो० ॥ २ ॥ आप पूज्य प्रभु पूजा न चाहें, पर पूजक आधार ॥ पूजो० ॥ द्रव्य भावविध पूजो भविजन, गुरु आगम अनुसार ॥ पूजो० ॥ ३ ॥ जल चन्दन कुसुमादिक द्रव्ये, आठ अनेक प्रकार ॥ पूजो० ॥ सम्यग्दर्शन गुण वर प्रगटे, ज्ञान चारित्र श्रीकार ॥ पूजो० ॥ ४ ॥

पुण्य योग प्रभु दर्शन पायो, आतम गुण अधिकार ॥ पूजो० ॥ हरि कवीन्द्र करो गुण कीर्तन, हो जावो भव पार ॥ पूजो० ॥ ५ ॥

॥ सम्यग् दर्शन पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तत्त्वारथ श्रद्धान है, सम्यग्दर्शन भाव।
वह प्रकटो मेरे लिये, प्रभु पद पुण्य प्रभाव ॥१॥
होती चित्त प्रसन्नता, प्रभु पद पूजा योग।
पाउं गुण गाउं यहां, मिटे महा भव रोग ॥२॥

(तर्ज—अवधू सो जोगी गुरु मेरा आशावरी)

प्रभु से करम भरम मिट जाय ॥ टेर ॥ काल अनादि उलटि गति मति, सुलटी सहज उपाय। चाह नहीं धन धाम धरा की, सेवा प्रभु की सुहाय ॥ प्र० ॥ १ ॥ सुरमणि सुरतरु अधिक प्रभु हैं, वांछित पद वरदाय। दूर दारिद्रय हुआ हुई मेरे, सेवा की यह आय ॥ प्र० ॥ २ ॥ सम्यक मिश्र मिथ्या तीनों, मोहनी मूल विलाय। सम्यग्दर्शन पाया मिटते, दर्शन मोह अपाय ॥ प्र० ॥ ३ ॥ आतम रूप अनादि अपना, भूल रहा भरमाय। आज

किया निर्मल निश्चल वह, प्रभु पद सेव अमाय ॥ प्र०॥४॥ मिटे अनन्तानु बन्धी ये, कलुषित चार कषाय। हरिकवीन्द्र प्रभुपद कृपया, जीवन ज्योति जगाय ॥ प्र० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

शंका आतम रूप की, मिट ते मन से आज।
परमातम पद पा लिया, पाया सुखद स्वराज ॥१॥
कांक्षा जडता जग की, आज हुई निर्मूल।
आतम गुण रमणीयता, प्रकटी शिव अनुकूल ॥२॥

(तर्ज —सुअप्पा आप विचारो रे०)

प्रभु से पायो दरशन दान, मिट गयो मोह अज्ञान ॥ प्रभु० ॥टेर॥ मानुं धन दिन धन घड़ी मेरी, धन जीवन परमान। मिटी विचिकित्सा अब सब ही, हो गये सफल विधान ॥ प्र० ॥ १ ॥ आरोपित सुन्दरता जडकी, असत अशिव पहिचान। सत्य तथा शिव सुन्दर गायो, आतम रूप महान ॥ प्र० ॥ २ ॥ भाव अनातम दूर हुआ अब, पाया आतम ज्ञान। कर्ता कर्म करण कारक सब, हो गये आतम थान ॥ प्र० ॥३॥ क्षायिक भावे क्षायिक समकित, ग्रन्थी भेद निदान। प्रभु की प्रभुता निज जीवन में, त्रिभुवन तिलक समान ॥प्र०॥४॥ शम सवेगी हो निर्वेदी,

अनुकम्पा परधान। हरि कवीन्द्र आस्तिक आतम गुण, अमृत कीनो पान ॥ प्र० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

निश्चय से व्यवहार से, एक अनेक सरूप।
निजगुण समकित रत्न को, पाते हैं गुण भूप ॥१॥
दीपक से दीपक यथा, लट भँवरी के न्याय।
आतम हो परमातमा, समकित शुद्ध उपाय ॥२॥

(तर्ज—अम्बिका विरुद बखाने हो०)

जिन शासन का सार यही है, जिन शासन का सार। समकित रत्न उदार यही है, जिन शासन का सार ॥ जिन दर्शन तें दर्शन प्रकटे, जिन निक्षेपा चार। चारों सत्य बतावें स्वामी, ठाणांग ठाण विचार ॥ यही० ॥१॥ आचा-रांगे दुय सुयखंधे, निरयुक्ति निरधार। तीरथ दर्शन वन्दन पूजन, दर्शन भाव आधार ॥ यही० ॥ २ ॥ दर्शन मूरति श्री जिन मन्दिर, जिन प्रतिमा अविकार। पंच कल्याणक भाव प्रकटते, हो दर्शन अधिकार ॥ यही० ॥३॥ आनन्दा-दिक परम उपासक, भाव प्रतिज्ञा धार। जीवन पावन सुविहित विधि से, हो समकित साकार ॥ यही० ॥ ४ ॥

सुखसागर भगवान के दर्शन, करते आद्रकुमार। हरि
कवीन्द्र श्रेणिक अम्बड सम, हों अर्हं अवतार ॥ यही० ॥५॥

॥ दोहा ॥

अर्हं सिद्ध स्वरूप ये, आतम विकसित भाव।
होते हैं भव्यात्म में, दर्शन पुण्य प्रभाव ॥१॥
राग द्वेष अरि नाशतें, वन्दन पूजन योग।
होते अर्हं आतमा, स्वयं सिद्ध उपयोग ॥२॥

(तर्ज—हा केसरियों कामण गारो)

हां आतमा अरिहंत होता, सम्यग दर्शन भावमें परिणत जन होता रे। आतमा अरिहंत होता ॥ टेर ॥ नमो अरिहंताण पद रटते, भव भावी सव भाव विघटते। कटते करम कलेश लेश दुख का नहीं होता रे ॥ आ० ॥ १ ॥
अरिहंत पद के आराधन से, मान अरि के सहज निधन से। धन जीवन हो जाय आय शिव सुखका होता रे ॥आ०॥२॥
अरिहंत अत सिद्ध हो जाते, अपुनर्भव शिव पदवी पाते। जहाँ नहीं यमराज, राज अपना ही होता रे ॥ आ०॥३॥
सम्यगदर्शन गुण अविकारी, प्रभु पद आराधक अधिकारी। सुखसागर भगवान ज्ञान गुण उन को होता रे ॥आ०॥४॥

हरि कवीन्द्र आतम दर्शन हो, परमातम सम्यग् दर्शन हो।
चंदन पूजन योग भाव उपयोगी होता रे ॥ आ० ॥ ५ ॥

॥ हरिगीत छन्दः ॥

तत्त्वार्थ के श्रद्धान से, हो भव्य सम्यग्दर्शनं,
आधार उसका एक है, निज आतम रूप सुदर्शनम्।
दर्शन न आँखों का यहाँ है, हृदय दर्शन दर्शनं,
जिनदेव दर्शन से मुझे हो, दिव्य सम्यग्दर्शनम् ॥

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त सम्यग्दर्शन शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय सम्यग्दर्शन प्राप्तये अष्टद्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ सम्यग् ज्ञान पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सब संसारी जीव में, होता है संज्ञान।
पर जो जाने आपका, उनका सम्यग्ज्ञान ॥१॥
आप रूप है आतमा, पर कर्मों के योग।
भूल सदा गति चार में, भोग रहा दुख भोग ॥२॥
बकरी टोले में रहा, सिंह बाल निजरूप।
लखते सिंह पराक्रमी, हो जाता वन भूप ॥३॥
वैसे ही यह आतमा, परमातम पद योग।
आतम ज्ञानी हो करे, भव दुख भाव वियोग ॥४॥

(तर्ज—चित हरख धरी अनुभव रगे बीस परम पद सेविये)

नित ज्ञानी की, सेवा दे सुख मेवा आतम ज्ञान का ॥ टेर ॥ परमातम पूरण ज्ञान कला, पद पूजा से जीवन सफला । मिट जाय अनादि करम बला, नित ज्ञानी की० ॥ १ ॥ प्रद्वेष नहीं अपलाप नहीं, मात्सर्य नहीं अन्तराय नहीं । आसातन अरु उपघात नहीं, नित ज्ञानी की० ॥ २ ॥ आश्रव मिटते संवर होता, ज्ञानावरणी क्षय भी होता । ज्ञानोदय जीवन में होता, नित ज्ञानी की० ॥३॥ है ज्ञेय रूप संसार सभी, उसमें यह अपना रूप कभी । दीखे हो सम्यग्ज्ञान तभी, नित ज्ञानी की० ॥ ४ ॥ सुख सागर पद भगवान मिले, हरि कवीन्द्र कीर्तित ज्ञान खिले । फिर मोह महादृढ दुर्ग हिले, नित ज्ञानी की० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानी के सतसग से, होता आतम ज्ञान ।
जडविज्ञानी जीव का, मिटता है अभिमान ॥१॥
पट कुड्यादिक आवरण, से ज्यों सूर्य प्रकाश ।
तरतम भावे होत है, ज्ञान प्रकाश विकास ॥२॥

(तर्ज—प्रभु धर्मनाथ मोहे प्यारा जग जीवन०)

पूजो ज्ञानी जिन जयकारी, दें ज्ञान परम उपकारी

॥ टेर ॥ जन आराधक अधिकारी, तज भेद अभेद विहारी। क्रमशः मति श्रुत अनुसारी, पूजो ज्ञानी जिन जयकारी ॥ दें ॥ १ ॥ आतम परमातम होता, जब पूर्ण ज्ञान गुण होता। मीमांसक मति गति हारी, पूजो ज्ञानी जिन जय कारी ॥ दें० ॥ २ ॥ यह अगम अगोचर भावी, गुण ज्ञान है पूर्ण प्रभावी। पाते जन जो अविकारी, पूजो ज्ञानी जिन जयकारी ॥ दें० ॥ ३ ॥ नय निक्षेपा विस्तारें, अनुयोग विशेष विचारे। हो यह प्रमाण पद धारी, पूजो ज्ञानी जिन जयकारी ॥ दें० ॥ ४ ॥ मति श्रुत अवधि मनज्ञानी, केवल सर्वज्ञ विधानी। हरि कवीन्द्र ज्ञानी बलिहारी, पूजो ज्ञानी जिन जयकारी ॥ दें० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान स्वपर अवभासकर, होता है सुप्रमाण।
आराधन से आतमा, हो अनन्त गुण खाण ॥
एक देश व्याख्यान से, होता नय विज्ञान।
सर्व देश व्याख्यान से, हो प्रमाण गुण ज्ञान ॥

(तर्ज—कव्वाली—तेरा तो हो चुका हूँ)

नय से प्रमाण से हो, जन आत्म ज्ञान धारी। आतम गुणाभिरामी, ज्ञानी सदा नमामि ॥ टेर ॥ जो जानते हैं

जगको, वह धूल जानकारी। जो जानते स्वपर को, ज्ञानी सदा नमामि ॥ आ० ॥ १ ॥ पचास्तिकाय में से, जीवास्तिकाय महिमा। होती है ज्ञान द्वारा, ज्ञानी सदा नमामि ॥ आ० ॥ २ ॥ जड रूप द्रव्य सारे, हैं जीव एक चेतन। गुण ज्ञान ज्योति पूरन, ज्ञानी सदा नमामि ॥ आ० ॥ ३ ॥ आनन्द धाम आतम, तम तोम से रहित हो। ज्ञान प्रकाश होते, ज्ञानी सदा नमामि ॥ आ० ॥४॥ गाते हरि कवीन्द्र, गुण ज्ञान आतमा का। परमात्म भाव पूरण, ज्ञानी सदा नमामि ॥ आ० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञान रतन अनमोल का, जतन करो मतिमान।
बिन तोले बोलो नहीं, वाणी ज्ञान प्रधान ॥१॥
ज्ञान भरी वाणी सुधा, वर्षावें भगवान।
पीते भविजन भाव से, अजर अमर गुणठान ॥२॥

(तर्ज—कोरो काजलियो)

यह पाया पुण्य प्रधान शासन जैन का, नित सेवो चतुर सुजान शासन जैन का ॥ टेर ॥ ज्ञान रतन अनमोल है, भो है चिन्तामणि रूप ॥ शा० ॥ १ ॥ आराधक साधक सभी, हो जाते त्रिभुवन भूप ॥ शा० ॥ २ ॥ अज्ञानी

समझें नहीं, समझेंगे समझनहार ॥ शा० ॥ ३ ॥ षड् दर्शन में देख लो, है त्रिभुवन तारणहार ॥ शा० ॥ ४ ॥ जीव अनन्ते प्रभु अनन्ते, का नित करे विधान ॥शा०॥५॥ आतमगत करतापणे, का देता बोध महान ॥ शा० ॥ ६ ॥ कर्याकार्य विचारणा, का जिससे होत विवेक ॥ शा० ७ ॥ स्याद्वाद सर्वोदयी, यह शाश्वत शिव-पथ एक ॥शा० ॥८॥ सम्यग्दर्शन-ज्ञान से, जो हो आतम सम्बन्ध ॥ शा० ॥६॥ हरि कवीन्द्र तो हो गई, वह सोने बीच सुगन्ध ॥ शा० ॥ ८ ॥

॥ हरिगीत छन्द ॥

संसार को जाना न जाना आतमा को धूल है, वह जानकारी जान लो बस मूल में ही भूल है। निज आतमा को जानना परमात्म पद का मूल है, वह दिव्य सम्यग्ज्ञान हो भव शूल भी सब फूल हैं।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त सम्यग्ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय अष्ट द्रव्यं यजामहे स्वाहा।

॥ सम्यग् चारित्र पद पूजा ॥

॥ दोहा ॥

आतम दर्शन प्रकट हो, आतम का ज्ञान ।
चरण आतमा के प्रति, मोक्ष मार्ग विज्ञान ॥ १ ॥
ये तीनों ही सत्य हैं, ये तीनों शिव रूप ।
तीनों सुन्दर भाव हैं, ओर सभी भवकूप ॥ २ ॥
पर द्रव्यों की रमणता, जहाँ न होवे लेश ।
केवल आतम रमणता, रहे न होवे क्लेश ॥ ३ ॥
हिंसा हो न असत्य हो, हो न अदत्तादान ।
मैथुन ममता हो नहीं, व्रत ये पाच महान ॥ ४ ॥
सुव्रतधारी आतमा, स्वयं बुद्ध अवतार ।
परमातम होवें सही, पूजो विधि विस्तार ॥ ५ ॥

(तर्ज कलींगडा—क्यों रुलता संसार तीर्थ है तेरे तरने को)

अशरण शरण सरूप चरण, पा भव वन भटको ना ॥टेर॥

सम्यग्दर्शन ज्ञान सुलोचन, देख करो आतम आलोचन,
चलो चाल जजाल जाल मे जीवन पटको ना ॥ अ० ॥१॥
सुगुरु सुदेव सुधर्माराधो, आतम से परमातम साधो । हो
परमातम आप पाप, दुर्गति में लटको ना ॥ अ० ॥ २ ॥
देश सर्व चारित्र दुविध है, सामायिक आदि पच विध हैं ।
आराधक के लिये रहे फिर, करम को खटको ना ॥अ०॥३॥

बनो अहिंसक आतम हेतु, भव सागर तारक यह सेतु।
वैर भाव हो शान्त अभय भव, भय में अटको ना ॥अ०॥४॥
हरि कवीन्द्र बोलें अतिहरसे, उत्तरोत्तर गुणठाणा फरसे,
दिव्य चरण पा भरो विषय विष, अन्तर घटको ना ॥अ०॥५॥

॥ दोहा ॥

आठ रूप है आतमा, चारित्रातम खास।
आठ कर्म चय रिक्त हो, हो चारित्र प्रकाश ॥१॥
आचारज पाठक मुनि, धर चारित्राचार।
पंचाचार विचार से, परमेष्ठी अधिकार ॥२॥

(तर्ज—धन धन ऋषभ देव भगवान युगला धर्मनिवारण वाले)

सुखी होते हैं वे नर नार, आत्म संयम धन पाने वाले। नहीं जन मन रंजन का काम, निशदिन रहते जो निष्काम। नहीं निंदा स्तुति से आराम, आतमा में नित रमने वाले ॥ सु० ॥ १ ॥ हृदय में पहिले लेते तोल, बोलते सच्चा मीठा बोल। नहीं रहती है उनमें पोल, सहज सक्रिय नवजीवन वाले ॥ सु० ॥ २ ॥ धरते हैं परमातम ध्यान, ज्ञान-विज्ञान आतम परधान। जिन्हें जीवन में न है अभिमान, त्याग वैराग बढानेवाले ॥ सु० ॥ ३ ॥ तजते विषयों को विष मान, सजते सतसंगी सुविधान।

परम चारित्र धर्म एलान, जगत को सदा सुनाने वाले ॥ सु० ॥ ४ ॥ लेते नहीं अदत्तादान, दिया लेते पाते अनिदान। उनका हरि कवीन्द्र गुण गान करें, धन संयम जीवन वाले ॥ सु० ॥ ५ ॥

॥ दोहा ॥

भोग रोग सम जानते, करते योगाभ्यास।
निन्दा विकथा त्याग कर, भव से रहे उदास ॥१॥
सागर सम गभीर जो, मेरू सम जो धीर।
महावीर संसार के, पहुँचे अन्तिम तीर ॥२॥

(तर्ज—बीनासर स्वामी अंतरजामी तारो पारसनाथ)

पूजो व्रतधारी हो अधिकारी त्रिभुवन तारणहार। रहते ब्रह्मचारी नित अविकारी जगमें जय जयकार ॥ टेर ॥ नवविध ब्रह्म सुगुप्ते गुप्ता, शील रतन रखवाल। कलुपित काम कुसंग न करता, हरता जग जंजाल रे ॥ पू० ॥ १ ॥ दिन में रात में एक अनेक में, सोते जागते आप। पाप रहित जीवन हो जिनका, वे सच्चे माँ बाप रे ॥ पू० ॥२॥ द्रव्य क्षेत्र और काल भाव से, नित रहते सावधान। जड़ चल जगकी जूंठन जानें, पुद्गल द्रव्य विधान रे ॥पू०॥३॥ शब्द रूप रस गन्ध विषय में, रहते आप अलीन। आप अपाप रहें

सुविहित खरतर विधि आचरणा, सुखसागर भगवान का शरणा। कर तूं प्रकट प्रचार रे मनवा ॥ तीन० ॥ ३ ॥ जिन हरिसागर सद्गुरु कृपया, आनन्दसागर सूरि सदया। बीकानेर मझार रे मनवा ॥ तीन० ॥ ४ ॥ कवीन्द्र पाठक तीन रतन की, पूज रची निज आतम जतन की। घर घर मंगलाचार रे मनवा ॥ तीन० ॥ ५ ॥ दोहजार बारह संवत में, विजया दशमी पावन दिन में। जीवन जय जयकार रे मनवा ॥ तीन० ॥ ६ ॥ अजित जिनेश्वर अन्तर्यामी, चरण कमल को नित्य नमामि। सम्पूर्ण सुखकार रे मनवा ॥ तीन० ॥ ७ ॥

—०—

श्रीजिन हरिसागर सूरीश्वर शिष्यरत्न कविवर
श्री कवीन्द्रसागरोपाध्याय विरचित

॥ चौसठ प्रकारी पूजा ॥

॥ पूजा विधि ॥

शुभ मुहूर्त मे जल यात्रा चढा कर तीर्थोदक लाना चाहिये। अष्ट कर्म निवारण हेतु रंगीन चावलों से मण्डल बनाना चाहिये। आठ पाँखुडी सफेद चावलों से भरनी चाहिये। कमल की रेखायें पाँच वर्णी चावलों से बनानी चाहिये। रक्त गुलाल से श्री सिद्ध भगवान के आठ गुणों को प्रत्येक पाँखुडी मे क्रमशः आलेखित करने चाहिये। मन्त्र पद ऐसे लिखने चाहिये—

१ ॐ ह्रीं अनन्त ज्ञान गुणिभ्यो नमः।
२ ॐ ह्रीं अनन्त दर्शन गुणिभ्यो नमः।
३ ॐ ह्रीं अनन्त सुख गुणिभ्यो नमः।
४ ॐ ह्रीं अनन्त चारित्र गुणिभ्यो नमः।
५ ॐ ह्रीं अक्षय स्थिति गुणिभ्यो नमः।
६ ॐ ह्रीं अमूर्त गुणिभ्यो नमः।
७ ॐ ह्रीं अगुरूलघु गुणिभ्यो नमः।
८ ॐ ह्रीं अनन्त वीर्य गुणिभ्यो नमः।

मध्य गोल कर्णिका पीत वर्ण के चावलों से भरनी चाहिये। वहाँ सोने चाँदी का आठ शाखाओं वाला एक सौ अट्ठावन पत्तों वाला पेड़ बनवा कर चढ़ावें। इस कर्म वृक्ष के काटने के लिये एक सोना चाँदी का बना कुल्हाड़ी कर्म वृक्ष की जड़ों में रखना चाहिये।

समवशरण में त्रिगड़े में भगवान श्री महावीर स्वामी की प्रतिमा स्थापन करें। अखण्ड दीपक ज्योति जगावें। धूप करें। भगवान के अभिषेक के लिए उत्कृष्ट चौसठ कुमार कुमारिकायें, मध्यम आठ कुमार कुमारिकायें और जघन्य एक कुमार कुमारी स्नानादि से शुद्ध पवित्र वस्त्र पहने हुए होने चाहिये। आठ दिन तक वहीं प्रत्येक कर्म निवारण के लिए अष्ट प्रकारी पूजा पढ़ाई जानी चाहिए। प्रतिदिन नये नये नैवेद्य नये नये फल फूलों का उपयोग करना चाहिए।

आठ दिन तक प्रभु भक्ति, गुरु भक्ति, साधर्मी भक्ति करनी चाहिए। रात्री जागरण, प्रभु गुण कीर्तन, सिद्ध पद का ध्यान, यथाशक्ति तपश्चर्या करते हुए करना चाहिए। यथाशक्ति याचकों को दान देना चाहिए। इससे भव भवान्तरों में बँधे आठ कर्मों का प्रचूर मात्रा में क्षय होता हैं। नवमें दिन उस कर्म वृक्ष को महोत्सव पूर्वक जिन मन्दिर में चढ़ा देना चाहिए।

—o—

पहले दिन ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा पढावें

॥ ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा ॥

॥ मंगल पीठिका ॥

॥ दोहा ॥

ॐ अर्हं परमातमा, श्रीफलवृद्धि पास ।
जिन हरि पूज्य सदा नमू, तारक तीरथ खास ॥१॥
मिथ्यात्वादिक हेतु से, आतम से जो काम ।
किया जाय बन्धन वही, कर्मरूप भव धाम ॥२॥
सन्ततिरूप अनादि है, सादि कर्म विशेष ।
कर्मरूप ससार है, रहता यही कलेश ॥३॥
भाव अकर्मक हो गये, वीतराग परमेश ।
वीतराग आराधना, हरती कर्म कलेश ॥४॥
आराधन के भेद भी, गुरुगम सुने अनेक ।
तप कर प्रभु पद पूज़ियें, द्रव्य भाव सविवेक ॥५॥
कर्म तिमिर हर है यहाँ, तपकर ज्योति विशेष ।
कर्म निवारण तप करो, पूजो प्रभु हमेश ॥६॥

आठ आठ दिन कोजिये, यथाशक्ति तप सार ।
सरल अशठ भावे भविक, प्रकटे गुण अविकार ॥७॥
कर्म वृक्ष शाखा जहाँ, घाति अघाती आठ ।
उत्तर प्रकृति पत्र हैं, कटते होवे ठाठ ॥८॥
सुवरन सुन्दर कीजिये, तप कुठार वर भाव ।
ज्ञान सहित प्रभु पूजिये, प्रकटे पुण्य प्रभाव ॥९॥
पूजा कर्म विशेष से, कटता कर्म कलेश ।
कांटे से कांटा यथा, पूजा करो हमेश ॥१०॥
जल चन्दन कुसुमादिये, अष्ट द्रव्य विधियोग ।
प्रभु पूजा से होत हैं, भव भय भाव वियोग ॥११॥

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जल रस अमृत भाव से, पूजा करो हमेश ।
रस अमृत प्रकटे मिटे, जीवन ताप कलेश ॥१॥
जीवन में जड़ता भरी, उसे बहा दो दूर ।
जल पूजा प्रभु की करो, पाओ सुख भरपूर ॥२॥

(तर्ज आशावरी—अवधू सो जोगी गुरु मेरा)

अर्हं पद अविकारी पूजो, शासन पति सुखकारी ।
महावीर उपकारी पूजो, परमातम पद धारी ॥ ० ॥ टेर ॥

नन्दन भव में बीस पदों के, आराधक अधिकारी। प्राणत स्वर्गे च्यवन कल्याणक, प्रभु का मंगलकारी ॥ पू० ॥ १ ॥ देवानन्दा गर्भ विराजें, व्यासी दिन अवतारी। हरिणगमेषी इन्द्रादेशे, निजकर्तव्य विचारी ॥ पू० ॥ २ ॥ गर्भ हरण कर त्रिशला कूखे, लावे धन बलिहारी। ऊँच गोत्र कल्याणक भूमि, त्रिभुवन तारणहारी ॥ पू० ॥३॥ चैत सुदी तेरस दिन उत्तम, जिन जनमे जयकारी। जिन महोत्सव सुरपति करते, समकित दर्शनधारी ॥ पू० ॥ ४ ॥ राज रमणी सुख भोग त्याग कर, तीस वरस में भारी। संयम ले तप कर्म खपाये, केवल कमला धारी ॥ पू० ॥ ५ ॥ शासन वर्ताया शिव पाया, जो हो गये भवपारी, आतम भावे प्रभु को पावें, धन धन वे नरनारी ॥ पू० ॥ ६ ॥ हम संसारी भव में भटकें, प्रभु है शिव संचारी। कैसे दर्शन पावें ? गुरु गम, आगम के अनुसारी ॥ पू० ॥ ७ ॥ प्रभु अनन्त ज्ञान के स्वामी, बोध बीज दातारी हरि कवीन्द्र भक्ति जल सींचो, हो अनन्त विस्तारी ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥

लोकैषणार्ति तृष्णोदयवारणाय, सद्बोधिबीज

जनितांकुर वर्द्धनाय। स्वान्तर्मलापनयनाय यजामहे श्री, वीरं विशेष गुण भाव जलेन भक्तया।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त सम्यग्ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीरजिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ज्ञानावरणी कर्म से, रुकता आतम ज्ञान।
आंखों पर पाटा लगे, कैसे होवे भान ॥१॥
होता है अज्ञान में, भव भावी सन्ताप।
प्रभु पद चन्दन योगतें, मिटे मिले सुख धाप ॥२॥

(तर्ज—माला काटे रे जाला जीवका)

गुण ज्ञान हमारा कर्मों ने रोका काटो कर्म को। शासन पति प्रभु की पूजा कर पाओ आतम धर्म को ॥ टेर ॥ ज्ञान अनन्ता है आतम में, जड़ कर्मों ने घेरा। अज्ञानी यातें देता है, चौरासी लख फेरा रे ॥ गुण० ॥१॥ भाव अभाव नहीं होता है, और अभाव न भावा। यातें आतम का नहीं मिटता, चेतन मूल सुभावा रे ॥ गुण०

॥ २ ॥ अक्षर ज्ञान अनन्त भाग में, कर्म अनावृत रहता। इस कारण आतम गुण चेतन, नित्य निरन्तर वहता रे ॥ गुण० ॥ ३ ॥ आतम चेतन कर्म ये जड़ हैं, सन्तति संग अनादि। जड़ संगी चेतन भव भटके, होती है बरबादी रे ॥ गुण० ॥ ४ ॥ कस्तूरी नाभि रहती है, मृग ढूंढे कहीं ओरा। त्यों अज्ञानी आतम ढूंढ़े, निज सुख को पर ठोरा रे ॥ गुण० ॥५॥ देव गुरु सतसगी आतम, अपना रूप पिछाने। सुखसागर भगवान बने वह, नित चढ़ते गुणठाने रे ॥ गुण० ॥ ६ ॥ करम करम का काट करेंगे, कर्म आराधक ठानो। पूज्य पुरुप पद बन्दन पूजन, द्रव्य भाव से ठानो रे ॥ गुण० ॥ ७ ॥ पूज्य न चाहें परकृत पूजा, पूजारी गुणकारी। हरि कवीन्द्र प्रभु चन्दन पूजा, पाप ताप संहारी रे ॥ गुण० ॥ ८ ॥

॥ काव्य ॥ पापोपतापशमनाय महद्गुणाय, दुर्बोध भावि भव रोग निवारणाय। आत्म प्रमोद करणाय यजामहे श्री, वीरं विशेष गुण चन्दन सद्रसेन।

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

काल अनादि कर्म वश, मुरझाया जो ज्ञान ।
ज्योतिर्मय प्रभु दरशतें, फूले फूल समान ॥१॥
विकसित आतम ज्ञान से, परमातम परधान ।
पद पाओ पूजो यथा, फूलों से भगवान ॥२॥

(तर्ज—प्रभु धर्मनाथ मोहे प्यारा)

जिन दर्शन पावन पावे, मन कुसुमकली खिल जावे । मति ज्ञान सुगन्ध बढ़ावे, जो प्रभु पद कुसुम चढ़ावे ॥टेर॥ आतम जड़ रस में जब लों, मति ज्ञान आवरण तब लों । मति अज्ञानी दुख पावे, जिन दर्शन ज्ञान उपावे ॥ जि० ॥ १ ॥ समरण संज्ञा पुद्गल की, चिन्ता रहती गर कल की । पर घर तज निज घर आवे, परमातम पद प्रकटावे ॥ जि० ॥२॥ व्यंजन अर्थावग्रह से, प्रभु दर्शन गुण संग्रह से । ईहा अपाय इक धारा, आतम गुण ज्ञान संभारा ॥ जि० ॥ ३ ॥ क्षय उपशम मिश्रित भावे, तरतमता ज्ञाने आवे । अट्ठाइस भेद विचारे, मति ज्ञानी गुण विस्तारे ॥ जि०॥४॥ विनयादिक चार प्रकारी, मति आतमपद अधिकारी । हो जिन पद पूजा ठावे, पद पूज्य निजी प्रकटावे ॥ जि० ॥ ५ ॥

जिन प्रतिमा जिन सम देखें, मति ज्ञान उन्हीं का लेखे। कुतर्क करी बात बनावें, मिथ्या मन मैल सनावें ॥जि०॥६॥ कारण से कारज होता, कारण से जगता सोता। कारण पद प्रभु अनधारो, कर दर्शन काज सुधारो ॥ जि० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र आतम भावें, गुण गावें गुण को पावें। प्रभु पूज कुसुम वर दावे, जीवन विकास हो जावे ॥ जि० ॥८॥

॥ काव्य ॥

चश्वत्सुपञ्चवर वर्ण विराजिभिर्वै, सद्गन्धिभिश्च विशदैः सुविकास शीलैः। स्वान्तर्विकास-विधये हि यजामहे श्री, वीरं विशेष गुण पुष्प वरैः समन्तात् ॥

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मति पूर्वक श्रुत ज्ञान हो, श्रुत के भेद अनेक।
गुरु गम श्रुत संयोगतें, प्रकटे परम विवेक ॥१॥
परम विवेकी आतमा, उर्ध्वगमन हित सार।
धूप पूज प्रभुकी करें, द्रव्य भाव सुविचार ॥२॥

जगाया ॥ पू० ॥ १ ॥ द्रव्ये क्षेत्रे काले भावे, अवधि ज्ञान बताया। दीपक सम तरतमता योगी, क्षायोपशमिक सुझाया ॥ पू० ॥ २ ॥ अनुगामी वर्द्धमान प्रतिपाती, सेतर छह भेद गाया। रूपी द्रव्य को जाने अवधि, ज्ञानावरण विलाया ॥ पू० ॥ ३ ॥ सुरनारक भव प्रत्यय अवधि, सुर प्रभु पूजा रचाया। सम्यग्दर्शन निर्मल होते, उतरोत्तर शिव पाया ॥ पू० ॥४॥ लब्धि-प्रत्यय नर तिर्यंचे, भेद असंख्या दिखाया। सम्यगदर्शन अवधिज्ञानी, मिथ्या विभंग कहाया ॥ पू० ॥ ५ ॥ अवधि द्रव्य अनन्ता देखे, लोक असंख्य लहाया। काल असंख्या भाव अनंता, रूपीविषय विधाया ॥ पू० ॥ ६ ॥ परमावधि होता शिव गामी, निश्चय यह मन भाया। सुख-सागर भगवान की सेवा, मेवा दे सुख-दाया ॥ पू० ॥७॥ हरि कवीन्द्र सुपातर मनसें, प्रभु पद स्नेह भराया। तन्मय वृत्ति दीपक ज्योति परमातम लख पाया ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यं ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिवमार्ग सुदर्शनाया, नन्तात्म कर्म तमसां परिभेदनाय। दिव्य प्रकाश करणाय यजामहे श्री, वीरं विशेष गुण दीपक दीपनेन।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये

जन्म जरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा ।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

क्षत विक्षत आतम हुआ, द्रव्य भाव मन योग ।
प्रभु अक्षत पूजा करो, हो अक्षत उपयोग ॥१॥
द्रव्य भाव मन योग को, प्रभु पद अक्षत धार ।
मन पर्यायी ज्ञान का, नर पावे अधिकार ॥२॥

(तर्ज—कोयल टहुक रही मधुवन में०)

तन मन अक्षत प्रभु पूजन कर, जन जीवन अक्षत गुण धर रे ॥ टेर ॥ तन आश्रित मन की गति चंचल, करता यह प्रतिपल चर भर रे । परमातम पद ध्यानालम्बन, सहज समाधि स्थिरता वर रे ॥ त० ॥ १ ॥ निज मन पर्यायों पर संयम, धर मनपर्यवज्ञानी हो नर रे । नर क्षेत्रे सन सन्नी चिंतित, जानें रूपी द्रव्य प्रकर रे ॥ त० ॥ २ ॥ साधारण ऋजुमती जाने, विपुलमती अति निर्मलतर रे । छट्ठे से बारह गुण थानक तक, इसकी रहती है खबर रे ॥ त० ॥ ३ ॥ मन पर्यव ज्ञानावरणी को, काटे जग जो साधु प्रवर रे । दीक्षा लेते ही मन पर्यव, ज्ञानी होते तीर्थंकर रे ॥ त० ॥ ४ ॥ तीर्थंकर की

पूजा करते, भव सागर होता सुतर रे। अकपट भावे आतम अर्पण, पूजन होता शिवसुख कर रे ॥ त० ॥ ५ ॥ पूजक जन जग पूज्य बने हैं, प्रभु पूजा सत्य शिव सुन्दर रे। जन्म मरण मिटता है उसका, कर्ता नर हो जाय अमर रे ॥ त० ॥ ६ । ज्ञानी की सेवा ज्ञान बढावे, ज्ञान बिना नर होता खर रे। ज्ञानावरणीय कर्म विपाके, दूर दूर रहता निज घर रे ॥ त० ॥ ७ ॥ च्यवन कल्याणक जन्म कल्याणक, दीक्षा कल्याणक उत्सव पर रे। हरि कवीन्द्र अक्षत विधि दर्शन, वन्दन पूजन आनन्द कर रे ॥ त० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाक्षतैः सुपरिणामगुणैः प्रशस्तं, सत्स्वस्तिकंलघु चतुर्गति वारकं च। आत्माक्षतोत्तमगुणाय यजामहे श्री, वीरं वराक्षत गुणैक विशेष भावम्।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्म जरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जड़ चल जग जूंठन सभी, पुद्गल रूप अनेक।
भोगे सुखकी भूख ना, मिटा हुआ अतिरेक ॥

प्रभु गुण अमृत जो मिले, भूख दुःख हो दूर।
प्रभु पद में नैवेद्य धर, चाहूं वही हजूर।

(तर्ज—तुम चिद्घन चन्द आनन्द लाल तोरे दर्शन०)

प्रभु गुण अमृत धाम, श्याम तोरे शासन में सुख भारी ॥ श्या० ॥ टेर ॥ पुद्गल सोचा पुद्गल रोचा, पुद्गल से हो विकारी ॥ श्याम० ॥ आतम मूल भूल अपनी से, भव भटका हो भिखारी ॥ श्याम० ॥ १ ॥ उलटा कारण उलटा कारज, होता जगत सारी ॥ श्याम० ॥ ज्ञानावरण बढा अज्ञानी, आतम दुख अपारी ॥ श्याम० ॥ २ ॥ घोर घटा घन की जब छाये, छिप जाता तिमिरारि ॥ स्याम० ॥ वायु वेग बढ़े घन हटते, प्रकटे ज्योतिधारी ॥ श्याम० ॥ ३ ॥ आतम सर्व प्रदेश अबाधित, ज्ञान भरा अविकारी ॥ श्याम० ॥ कर्मों का परदा हटने से, ज्योति सरूप उदारी ॥ श्याम० ॥४॥ केवल ज्ञान कला प्रकटेगी, क्षायिक भाव प्रकारी ॥ श्याम० ॥ पुद्गल संगी तर्क विचारे, मीमांसक मति हारी ॥ श्याम० ॥ ५ ॥ जन होता भगवान अनंते, भगवान हैं जयकारी ॥ श्याम० ॥ आतम सत्ता अपनी अपनी, दर्शन जैन विचारी ॥ श्याम०

॥ ६ ॥ धर नैवेद्य प्रभुपद पूजी, मांगें हो अधिकारी ॥ श्याम० ॥ परमातम ज्ञानामृत भोजन, की कर दो दातारी ॥ श्याम० ॥ ७ ॥ द्रव्य कारण है भाव का होता, यातें द्रव्योपचारी ॥ श्याम० ॥ आतमपद अर्थी प्रभु पूजें, हरि कवीन्द्र जयकारी ॥ श्याम० ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ प्राज्याज्य निर्मित सुधामधुर प्रचारै, नैवेद्यवस्तु विविधै विधिनोपढौक्य । नित्यं बुभुक्षित पद क्षतये यजामहे श्री, वीरं निजात्म परमामृत दायकं तम् ॥ ६ ॥

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्मजरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीरजिनेंद्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

शिव सुख फलदाता प्रभु, पूजो फल धर भेंट ।
कर्ममूल कारण कटे, पाओ सुख भर पेट ॥ १ ॥
फल प्रभुजी चाहें नहीं, प्रभु नाम यह त्याग ।
त्यागी वैरागी बने, वीतराग महाभाग ॥ २ ॥

(तर्ज—हा सगीजी ने पेडा भावे)

आतमा शिवफल पावे, प्रभु पद में फल धार ॥ आ० ॥ टेर ॥ करम संतति काल अनादि, वश चेतन खोई आजादी। प्रभु पूजा शुभ कर्म कर्ममल दूर हटावे रे ॥ आ० ॥ १ ॥ प्रभु पूजा में पाप बतावे, ज्ञानावरणी पाप उपावे। सत्ता बंध उदय ध्रुव तीनों ही हो जावे रे ॥ आ० ॥ २ ॥ जीव विपाकी जडता धारे, अपरावर्तमान विचारे। आदिम नव गुण थानक तक नित बँधती जावे रे ॥ आ० ॥ ३ ॥ ज्ञानावरण प्रकृति यह माती, देश सरव रूपे हो घाती। निज आतम गुण ज्ञान भाव को अरे मिटावे रे ॥ आ० ॥ ४ ॥ आठ सात छह साथे बंधे, ज्ञानावरणी सब अनुसंधे। होते भूयस्कार भवो भव गोता खावे रे ॥ आ० ॥५॥ कोडा कोडी सागर तीसा, ज्ञानावरणी बंध विशेषा। तजो विराधक भाव अरे सद्गुरु समझावें रे ॥ आ० ॥ ६ ॥ परमातम पूजा चित धारे, ज्ञानावरणी दूर निवारे। आराधक आतम परमातम खुद हो जावे रे ॥ आ० ॥ ७ ॥ सुख सागर भगवान हमारे, जीवन फल के हैं दाता रे। हरि कवीन्द्र घर दिव्य भाव जयनाद उचारे रे ॥ आ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भावपूर्णैं, दिव्यैः फलैर्गुणमयै बलशालिभिश्च। भक्त्या समर्प्य विधिना प्रयजामहे श्री, वीरं सदाशिवफलाप्तिकृते समन्तात्।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने अनन्तानन्त ज्ञान शक्तये जन्मजरा मृत्यु निवारणाय ज्ञानावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा।

॥ कलश ॥

आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें।

—०—

दूसरे दिन दर्शनावरणीय कर्म निवारण पूजा पढावें

॥ दर्शनावरणीय कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ मे मगल पीठिका के दोहे पहले दिन का पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें। प्रति पूजा में काव्य भी पहली पूजा के समान बोलने होंगे, मन्त्रों में कर्म नाम बदलना होगा।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—०—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

वस्तु तत्त्व सामान्य का, जहाँ होता है बोध।
दर्शन कहते हैं उसे, करे आत्म गुण शोध॥ १ ॥

प्रभु दर्शन निर्मल जले, निज मन मैल मिटाय।
प्रभुपद जल पूजा करो, दर्शन गुण प्रकटाय ॥ २ ॥

(तर्ज गजल—कुशल गुरु देव के दर्शन मेरा दिल होत है परसन)

मिले परमात्म पद दर्शन, घड़ी धन भाग वह जानो। अगर हो आत्मगुण दर्शन, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ टेर ॥ लगा है आवरण-पहरा, उसी गुण दिव्य दर्शन पर। हटाया जाय उसको तो, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ १ ॥ प्रभु दर्शन प्रभु वन्दन, प्रभु पूजन के करने से। प्रकटता भाव गुण दर्शन, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ २ ॥ तपोधन ज्ञानधन जीवन, सुजन विधि वर-विधानों से। यहाँ पाते वहाँ पाते, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ ३ ॥ अचक्षु चक्षु दर्शन से, सदा जड़ भाव में रमते। बढ़ा भव भय हटे वह तो, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ ४ ॥ अचक्षु चक्षु दर्शन में, करो संयम बनो योगी। प्रकट हो सत्य शिव सुन्दर, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ ५ ॥ करें नर आत्म दर्शन वे, यहाँ भगवान होते हैं। करो पद वन्दना उनकी, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ ६ ॥ जगत सत चेतना चेतन, अचेतन तज भजो चेतन। सहज में हो सुदर्शन भी, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि०॥ ७ ॥ हमेशा हरिकवीन्द्रों ने, प्रभु दर्शन

के गुण गाये। रसोदय आत्म सुख पाये, घड़ी धन भाग वह जानो ॥ मि० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकैषणति तृष्णोदयवारणाय०

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने...दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्रायजलं यजामहे स्वाहा।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

आतम दर्शन आवरण, क्षय उपशम हो भाव।
जो प्रभुपद दर्शन करें, प्रकटे पुण्य प्रभाव ॥ १ ॥
प्रभु दर्शन चन्दन रसे, अर्चित चर्चित रूप।
पाप ताप मिट जाय हो, जीवन शान्त सरूप ॥२ ॥

(तर्ज—सदा भजो ब्रह्मचारी मैं वारिजाउं)

प्रभु दर्शन सुखकारा मैं वारिजाउं पाउं धन अवतारा ॥ टेर ॥ बावना चन्दन शीतल स्वामी, पाप ताप दुख हारा मैं वारिजाउं पाप०। चन्दन पूजा विधि आराधन, जिन आगम अनुसारा मैं वारिजाउं जिन० ॥ प्र० ॥ १ ॥ प्रभु द्वेषी अपलापी घाती, वैरनिघन आधारा मैं वारिजाउं वैर०। आसातन कर्ता को आश्रव, होता है दुख भारा मैं वारिजाउं होता० ॥ प्र० ॥ २ ॥ आश्रव बन्ध हेतु होने

से, कर्म बना प्रतिहारा मैं वारिजाउं कर्म०। दर्शन रोक लगाता हरदम, जीवन होता खारा मैं वारिजाउं जीवन० ॥ प्र० ॥ ३ ॥ सत्ता बन्ध उदय होते हो, दर्शन का न सहारा मैं वारिजाउं दर्शन०। जड़ अभिमुख पाता जन जीवन, चारगति संसारा मैं वारिजाउं चार० ॥ प्र० ॥४॥ चक्षु अचक्षु अवधि केवल, दर्शनचार प्रकारा मैं वारिजाउं दर्शन०। आवरणे नहीं हो पाता है, दर्शन दिव्य विचारा मैं वारिजाउं दर्शन० ॥ प्र० ॥ ५ ॥ बहिरातम रहता है आतम, भूलभुलैयाकारा मैं वारिजाउं भूल भुलैया०। अंतर आतम फिर परमातम, पद न मिले अधिकारा मैं वारिजाउं पद० ॥ प्र० ॥६॥ पुण्योदय से दुर्गति हटते, सुर नर भव अवतारा मैं वारिजाउं सुर०। सद्गुरुगम प्रभु दर्शन पायो, चार निक्षेप प्रकारा मैं वारिजाउं चार० ॥ प्र०॥७॥ स्याद्वाद सुन्दर प्रभु दर्शन, त्रिभुवन तारणहारा मैं वारिजाउं त्रिभुवन०। पाया हरि कवीन्द्र गुण कीर्तन, गाया जय जयकारा मैं वारिजाउं गाया० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपतापशमनाय महद्गुणाय०

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने···दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जीवन कुसुम विशेष को, प्रभु चरणे दो चाढ़ ।
आतम में परमात्म पद, दर्शन गुण हो गाढ़ ॥१॥
कुसुम विकासी आतमा, कली कली खिल जाय ।
प्रभु दर्शन के योगतें, गुण सौरभ भर जाय ॥२॥

(तर्ज—चन्द्र प्रभु जिन चन्द्र नमो हितकारी रे०)

प्रभुपद कुसुम चढाओ, पुण्य बढ़ाओ रे नर चतुर सुजान । जीवन कुसुम कली विकसित हो जावे रे, सुजान ॥ टेर ॥ आँखों से प्रभु दर्शन चक्षु दर्शन रे, नर चतुर सुजान । प्रभुपद फरस हरस मन भरना भावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ १ ॥ प्रभु गुण रस निज रसना योगे गाओ रे, नर चतुर सुजान । गुण सुगन्ध जो पावे, बहु सुख पावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ २ ॥ प्रभु गुण कीर्तन श्रवण मनन लय लावे रे, नर चतुर सुजान । अचक्षु दर्शन यों पुण्य कमावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ ३ ॥ अवधि दर्शन सुरनर पशु भी पावे रे, नर चतुर सुजान । प्रभु दर्शन पा पावन पदवी भावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥४॥ यों विकास होते जन केवल पाता रे, नर चतुर सुजान । भाग्यवान भगवान वही

बन जावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ ५ ॥ दर्शन रोधक प्रकृति दूर हटावे रे, नर चतुर सुजान । मंजुल महिमा गुण सौरभ उपजावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ ६ ॥ ध्रुव बन्धी ध्रुव उदयी ध्रुव सत्ता की रे नर चतुर सुजान । देश सरव घाती का घात करावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र प्रभु चरणे कुसुम चढ़ावे रे, नर चतुर सुजान । कुसुम विकासी आतम भाव बढ़ावे रे, सुजान ॥ प्र० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ चंचत्सुपंचवरवर्णविराजिभिर्वै०

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने‥‥दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

काल अनादि नींद का, आतम को है रोग ।
प्रभुपद धूप विधान हो, जागृत जीवन योग ॥१॥
धूप ऊर्ध्वगति को करे, ऊर्ध्वगमन अधिकार ।
प्रभु पद में वर धूप कर, चलो चारगति पार ॥२॥

(तर्ज—पूजो पार्श्वनाथ भगवान शरण सुख कारणा रे)

पूजो प्रभुपद धूप सुगन्ध, ऊर्ध्व गति कारणा रे । प्रकटे निजगुण भाव निरोग, परम सुख कारणा रे ॥ टेर ॥ आतम

काल अनादि सोता, सोनेवाला निज धन खोता। निर्धन रोता फिरता होता, भव दुख भारणा रे॥ पू०। १॥ निद्रा निद्रानिद्रारूप, प्रचलाप्रचला प्रचला चूप। स्त्याना नर्द्धिका रूप अनूप, करे गुण हारणा रे॥ पू० ॥२॥ दर्शन आवरणे यह योग, पांचो निद्रा का भव रोग। मेटो धारो आतम योग, रोग परिहारणारे ॥पू० ॥३॥ छट्ठे गुण ठाणे तक पांच, निद्रा करती गुण की खांच। उत्तम अप्रमाद गुण आंच, धूप गुण धारणा रे॥ पू० ॥ ४ ॥ बारहवें गुण ठाणे आप, निद्रा द्विक मिट जाता पाप। लगी तब वीतरागता छाप, करो सुविचारणा रे॥ पू० ॥ ५ ॥ करम जड़ पुद्गल होता बंध, आतमा का रहता सम्बन्ध। क्रिया करते हो आतम अंध, न दर्शन सारणा रे॥ पू० ॥ ६ ॥ पाया क्षय उपशममय भाव, प्रकटा आतम पुण्य प्रभाव। करके करम मूल में घाव, भवोदधि तारणा रे॥ पू० ॥७॥ पूजो सुख सागर भगवान, करते हरि कवीन्द्र गुणगान। भाव दशांगी धूप विधान, पूज विस्तारणा रे॥ पू० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ स्फूर्जत्गन्ध विधिनोर्ध्वगत्ति प्रयाणे०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने ''दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

गुण दीपक प्रभु की सदा, दीपक ज्योति विधान ।
पूजा कर तमतोम को, मेटो चतुर सुजान ॥१॥
प्रभु दर्शन ज्योति बिना, पथ नहीं पाया एक ।
दीपक पूजा आत्म-पथ, पाओ परम विवेक ॥२॥

(तर्ज—तुमको लाखों प्रणाम)

जगदीपक जिनराज प्रभु को लाखों प्रणाम । करूं सुदीपक धार प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ टेर ॥ करम दर्शनावरण उदय से, अन्धेरा छट गया हृदय से । खिन्न हुआ भव भय से, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ जग० ॥ १ ॥ नव प्रकृति भव में भटकावे, बिन दर्शन पद पद अटकावे । अब प्रभु पद आधार, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ जग० ॥ २ ॥ बाहर दीपक अन्तर दीपक, ज्योत जगी मिथ्यातम जीपक । प्रभु दर्शन बलिहार, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ जग० ॥३॥ युगपत दो उपयोग न होते, क्रमभावी जीवन में होते । प्रभु का ज्ञान प्रमाण, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥जग० ॥४॥ तर्क दलीलों से नित उपर, रहता है आतम गुण सुन्दर । अगम अगोचर रूप, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ जग० ॥५॥

दिव्य ज्ञान दर्शनमय होता, उपयोगी जीवन दुःख खोता।
अधिक अधिक अधिकार, प्रभु को लाखों प्रणाम ॥ जग०
॥ ६ ॥ सर्व द्रव्य प्रदेश अनन्ते, उनसे गुण पर्याय अनन्ते।
ज्ञान अनन्तानन्त, प्रभुको लाखों प्रणाम ॥ जग० ॥ ७ ॥
सब द्रव्यों में आतम मुखिया, ज्ञान दरस गुण होता
सुखिया। हरि कवीन्द्र नत भाव, प्रभु को लाखों प्रणाम
॥ जग० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिवमार्ग सुदर्शनाया०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने···दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय दीपक यजामहे स्वाहा।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अक्षत गुण स्वस्तिक रचो, चार गति हो चूर।
प्रभु सन्मुख स्वस्तिक करो, भरो स्वस्ति गुणपूर ॥१॥
अक्षत उज्ज्वल सरलतम, भावों से भगवान।
पूजो प्रणमो भविक जन, पावो पद कल्याण ॥२॥

(तर्ज—पछी बावरिया०)

प्रभु पूजो अविकारी, तिरो भव दुख दरिया। प्रभु शासन सुखकारी, वसो नर शिव पुरिया ॥ टेर ॥ चक्षु अचक्षु

अवधिदरसन, धारी प्रभु पूजें चित परसन। केवल दरसन वरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥ १ ॥ भक्तिमार्ग में नींद निवारो, जागृत जीवन व्रत चित धारो। कर प्रभु पूजन चरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥ २ ॥ पंचम अंगे सती जयन्ती, सुपन जागरण प्रश्न करंती। कर आतम जागरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥३॥ जीव अजीवाश्रित आश्रव से, होता सम्बन्धित सब भव से। करो करम संवरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र०॥३॥ प्रकृति स्थिति रस वन्ध प्रदेशा, होते होता आत्म कलेशा। वन्ध रूप निरजरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥ ५ ॥ कारण वश क्रियायें होती, वन्धन परिणति उनसे होती। सावधान निसतरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥६॥ दर्शन रोक हटे प्रकटे वह, प्रभु दर्शन आतम दर्शन सह। होते अजर अमरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र प्रभु दर्शन पाया, परमातम अक्षत गुण गाया। अक्षत गुण अधिकरिया, वसो नर शिव पुरिया ॥ प्र० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाऽक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने...दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु आगे नैवेद्य धर, मांगू यह वरदान।
भव मे भूख रहे नही, भाव भरो भगवान ॥१॥
मन मोदक मेरे प्रभु, अमृत रूप अनूप।
नैवेद्य पूजा भाव मे, चाहूँ शाश्वत रूप ॥२॥

(तर्ज—गिरवरिये रो वासी प्यारो लागे मोरा राजिंदा)

अमरापुर रो वासी प्यारो लागे म्हारा राजिंदा। भव वन वास म्हने अन खारो लागे म्हारा राजिंदा ॥टेर॥ अहारक गुण ठाण सयोगी, समुद्घात मे राजिंदा। तीन समय तक सर्व आहारे, रहित अन्त मे राजिंदा ॥ अ० ॥ १ ॥ भव्य नैवेद्य धरो प्रभु दरशन, ध्यान लगाओ राजिंदा। ध्याता ध्याने ध्येय एकता, ज्योत जगाओ राजिंदा ॥ अ० ॥२॥ पर्याप्ता सज्ञी पचेन्द्रिय, सब उपयोगी राजिंदा। छाद्मस्थिक अन्तरमुहूरत मित, दर्शन भोगी राजिंदा ॥ अ० ॥ ३ ॥ केवल ज्ञान सुदर्शन होता, एक समय मिति राजिंदा। वह पाउं फल पा जाउं तब, सादि अनन्त थिति राजिंदा ॥ अ० ॥ ४ ॥ पर्याप्ता चउरिन्द्रि असन्नि, पचेन्द्रिय में राजिन्दा। चक्षु अचक्षु दर्शन दोनों होय उभय में राजिंदा

॥ अ० ॥ ५ ॥ एकेन्द्रिय से तेईन्द्रिय तक, दर्शन होता राजिंदा । एक अचक्षु प्रभु दर्शन बिन, खाते गोता राजिंदा ॥ अ० ॥ ६ ॥ प्रभु दर्शन पाया धन अपना, जीवन जानो राजिंदा । प्रभु दर्शन से पावन अपना, दर्शन ठानो राजिंदा ॥ अ० ॥ ७ ॥ प्रभु दर्शन पूजन में भावे नैवेद्य चाढ़ो राजिंदा । हरि कवीन्द्र हो विजयी दर्शन, निज गुण गाढ़ो राजिंदा ॥ अ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ प्राज्याज्य निर्मित सुधा मधुर प्रचारै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने……दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

फल पूजा फल त्याग कर, करो सदा मनरंग ।
शिव सुख फल पाओ तभी, सादि अनन्त अभंग ॥१॥
फल से फल होता यहां, देखो वर विज्ञान ।
प्रभुपद भाव अमोध फल, पूजो विनय विधान ॥२॥

(तर्ज माढ़—मरुधर म्हारो देश म्हांने प्यारो लागेजी)

म्हारे जीवन को आधार, प्रभुपद प्यारो लागेजी ।
जो है त्रिभुवन तारणहार, प्रभुपद प्यारो लागेजी ॥टेर॥

वस्तुगत सामान्य रहे, रहे भाव विशेषविशेष। दर्शन ज्ञान है बोध उन्हीका, करता दूर कलेश रे॥ पद प्यारो० ॥१॥ भेद अभेदे वर्णित होता, स्यादवाद विचार। पूर्वापर सब भावापेक्षित, दर्शन पदनिर्धार रे॥ पद प्यारो० ॥ २ ॥ आज्ञा अपाय विपाक विचयस, स्थान विचय धर्म ध्यान। जो कर पाते प्रभु पूजन में, पा जाते कल्यान रे॥ पद० ॥३॥ चौथे से सप्तम गुण थानक, तक होता धर्म ध्यान। प्रभुपद दर्शन वन्दन पूजन, में होता विज्ञान रे॥पद०॥४॥ धर्मध्यान से शुक्ल सुलेश्या, होता शुक्ल सुध्यान। ध्यान पवन घन घोर घटा हो, दूर करम व्यवधान रे॥ पद० ॥५॥ शुक्ल ध्यान भी चार प्रकारी, पहिले के दो प्रकार। पूरवधर श्रुत केवली धारें, हो केवल पद धार रे॥ पद० ॥६॥ ज्ञान को रोके दर्शन रोके, वह आवरण विकार, कर्म कहावें कर्म से काटो, तो हो बेडा पार रे॥ पद० ॥ ७ ॥ सुखसागर भगवान प्रभुपद, निज पद में अवतार। हरि कवीन्द्र सफल विधिपूजो, पाओ शिवफल साररे ॥पद०॥८॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूषपेशलरसोत्तम भाव पूर्णैः०

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने दर्शनावरणीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा।

(कलश अन्तराय कर्म निवारण पूजा से बोलें।)

तीसरे दिन वेदनीय कर्म निवारण पूजा पढ़ावें

॥ वेदनीय कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ में मंगल पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें, और अन्त में कलश आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें। प्रति पूजा में काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान बोलने होंगे। मंत्र में कर्म नाम बदल कर बोलें।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—०—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सुख दुख इस संसार में, होता कर्म विकार।
समभावी हो मेट दो, पाओ पद अविकार ॥१॥
अविकारी भगवान हैं, भक्ति भाव जल धार।
पूजो पूजा से बनो, पूज्येश्वर अवतार ॥२॥

(तर्ज—तेरा इंतजार है नवलों में आकर थमना)

होगा पार पार तू, प्रभु की सेवा कर भरके होगा पार पार तूं ॥ टेर ॥ सुरनर गति में सुखिया हो, नारक तिरिमें दुखिया हो । भूला ए गमार तूं ॥प्रभु की०॥ १ ॥ मधु लिप्त खड्ग की धारा, साता व असाताकारा । चाई मार मार तूं ॥ प्रभु की० ॥ २ ॥ सुख दांत ब्याज के जैसा, दुख आग जलन के जैसा । अनुभव सार सार तूं । ॥ प्रभु की० ॥३ ॥ सुखमें न फूलते जाना, दुखमें न कमी घबड़ाना । समाधि धार धार तू ॥ प्रभु की० ॥ ४ ॥ सम भाव बीज विकसेगा, मुरझाया मन विहसेगा । जोड तार वार तूं ॥ प्रभु की० ॥ ५ ॥ तीरथ जल कलशा भरके, प्रभु की पद पूजा करके । मन मल हार हार तूं ॥प्रभु की० ॥ ६ ॥ है द्रव्य भाव का हेतु, भवसागर तारक सेतु । मन में धार धार तूं ॥ प्रभु की० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जय जय गाते, प्रभु पूजा ठाठ रचाते । मोचले वार वार तूं ॥ प्रभु० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकैषणातितृष्णोदय वारणाय०

मन्त्र—ॐ परमात्मने वेदनीय समूलोच्छेदाय जलं यजामहे

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जन मानस दुख दहकता, पाप ताप भरपूर ।
प्रभु चन्दन पूजा विधि, सहज समाधि सनूर ॥१॥
दुःख असाता वेदनी, वश मन मूर्च्छा रोग ।
प्रभु चन्दन पूजा रसे, शान्त बढे शिव भोग ॥२॥

(तर्ज—थारी गई रे अनादि नींद० राग माढ)

प्रभु चन्दन पूजा योग, रोग मिट जाना है सही ।
निज शान्त समाधि विचार सार, सुख आना है सही ॥टेर॥
प्राणभिसार प्रभु वैद्य मिले हैं, आराधो यही । सुविहित विधि पथ्य विधान सदा शिव, साधो तो सही ॥ प्र० ॥१॥
अब निदान निश्चित जीवन में, आया है यही । पर को दुख देकर लेश आतम सुख, पाया है नहीं ॥ प्र० ॥ २ ॥
मूल भूल यह मिटी जीव को, जाना ही नहीं । दुख ही है दुख का मूल करम, छिटकाना है सही ॥ प्र० ॥ ३ ॥
पुद्गल संगी सुख में फूले, फिरना है नहीं । सम भावी होकर सार तत्व भव, तिरना है सही ॥ प्र० ॥ ४ ॥
अनुकम्पा और अभयदान की, महिमा है यही । हो आतम शक्ति अनन्त कहीं भय, होता ही नहीं ॥ प्र० ॥ ५ ॥

आचारांगे पर हिंसा को, अपनी ही कही। हिंसक को होता दुःख विपाके, देखो गह गही ॥ प्र० ॥ ६ ॥ भाव अहिंसक प्रभु पूजा में, होता है सही। आतम परमातम रूप समझ में, आता है यही ॥ प्र० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र नित नित आराधो, पूजा पुण्य मही। कर द्रव्य भाव से पूज्य बनोगे, मिथ्या है नहीं ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपताप शमनाय महद्गुणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने…वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दन यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

फूलों से पूजा करो, फूले जीवन वेल।
गुण सौरभ की हो यहां, भारी रेल पेल ॥१॥
प्रभु चरणों में फूलसा, जीवन अर्पण आप।
कर दें भर दें पुण्यसे, हो न पाप सन्ताप ॥२॥

(तर्ज—जाओ जाओ अय मेरे साधु रहो गुरु के संग)

पूजो पूजो प्रभु फूल विकासे, होता आत्म विकास। पुण्य प्रकाशे अविनाशी पद की, प्रकटेगी सुख राश ॥टेर॥ शिर में मन में सुख होता है, वेदनी कर्म अघात। पुण्य

योगतें साता बंधे, बन्धे पाप असात ॥ पू० ॥ १ ॥ छट्ठे गुण ठाने तक होता, सात असाता बन्ध। उपर में तेरह तक होता, केवल साता बन्ध ॥ पू० ॥ २ ॥ तेरहवें गुण ठाणे तक हो, उदय असाता सात। साता प्रकृति उदय आयोगी, गुण ठाणे विख्यात ॥ पू० ॥ ३ ॥ उदीरणा दोनों की होती, तक छट्ठा गुण ठाण। साडी तेरह तक दो सत्ता, साता अंत सुजाण ॥ पू० ॥ ४ ॥ तेरहवें गुण ठान परीषह, ग्यारह रूप असात। पर साता कर वेदें प्रभुजी, यह शासन की बात ॥ पू० ॥ ५ ॥ दुख को सुख में बदल सके यह, श्रीजिन शासन सार। गोवर को गुड़ कर देने की, शक्ति विशद विचार ॥ पू० ॥ ६ ॥ बनी बिगाड़ें बात अज्ञानी, उनका उलटा ढंग। बिगड़ी बात बनावें ज्ञानी, करो सदा सतसंग ॥ पूजो० ॥ ७ ॥ दुख में परम सहायक होता, जिन दर्शन दृग रंग। हरि कवीन्द्र पाकर के उसको, जीतो जीवन जंग ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्च वर वर्ण विराजिसिवैं०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीरजिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

खेवें धूप दशाङ्गको, हरे हृदय दुर्गन्ध।
वायु मण्डल शुद्धिसे, भगे पाप प्रतिबन्ध ॥१॥
पूजा धूप विशेषको, करते पुण्य प्रसंग।
प्रभु महिमा से आतमा, परिचित हो दृढ़रंग ॥२॥

(तर्ज—जाग जाग तू प्रभात काल भयो भ्रातरे)

करम करम से कटे, मिटे सभी विकार रे। धूप धूम धार धार, प्रभु सेव सार रे॥ धू० ॥टेर॥ प्रभु सेव आतमा, निमित्त चित्त धार रे। कर्त्ता कर्म कारकों में, आतमा उतार रे॥ धू० ॥ १ ॥ प्रवाह से अनादि काल, आतमा मे कर्म जाल। फैल रहा दुःख महा, दे रहा कराल रे ॥ धू० ॥ २ ॥ कर विवेक नेक चेत, चेत आतमा अचेत।। खेत गधे खा रहे, तू सोच हो सचेत रे॥ धू० ॥ ३ ॥ वेदनीय है आघात, किन्तु घास कर्म तात। अधिक अधिक होय जात, पेच नहीं आत रे॥ धू० ॥४॥ वीस कोडा कोडि बन्ध, सागर उत्कृष्ट धन्ध। अन्ध भाव हो रहा है, वेदनी सम्बन्ध रे॥ धू० ॥ ५ ॥ प्रभु चरण शरण पाय, आचरण शुद्ध ठाय। हो अमाय पुण्य

काय, ध्यान लय लाय रे ॥ ध्रू० ॥ ६ ॥ पुण्य सूत कात कात, बन्ध हो सदैव सात। प्रभु पूज दिवस रात, और कर न बात रे ॥ ध्रू० ॥ ७ ॥ देव लोक में अशोक, शाश्वत जिन थोक थोक। हरि कवीन्द्र लोक करें, कीर्ति थोक थोक रे ॥ ध्रू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ स्फूर्जत्सुगन्ध विधिनोर्ध्वगति प्रयाणैः०

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने······वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जगदीपक परकाश में, पुण्य पाप का भेद।
कर पाओ पाओ तभी, भेद रहे ना खेद ॥१॥
प्रभु सन्मुख दीपक धरो, भरो हृदय में जोत।
अंधेरा मिट जायगा, होगा जग उद्योत ॥२॥

(तर्ज—झण्डा ऊँचा रहे हमारा)

पूजो श्री जिन जय जयकारा, दीपक भाव भरो अविकारा ॥ टेर ॥ जग दीपक की ज्योति विचारा, भव सागर का मिला किनारा। झटपट होगा अब निसतारा

॥ पूजो० ॥ १ ॥ दुख को सुख माना संसारे, उसमें उलझे हो दुखियारे। चौरासी लख चक्कर मारा ॥ पूजो० ॥ २ ॥ सुख में फूले भूले स्वामी, होकर केवल काम हरामी। जीवन में छाया अन्धियारा ॥ पूजो० ॥३॥ उपशम श्रेणि साता वधे, गिरना होता करम संबंधे। देव हुए जहँ भोग अपारा ॥ पूजो० ॥ ४ ॥ सरवारथ सिद्धे हो देवा, आतम परमातम समरेवा। अनुपम उनका है अधिकारा ॥ पूजो० ॥ ५ ॥ प्रभु गुण समरण कीर्तन करते, द्रव्य भाव अरचन आचरते। अंत रूप उनका संसारा ॥ पूजो० ॥ ६ ॥ भव दुख को दुख जो नहीं माने, आतम परमातम पद ध्याने। उनका बजता विजय नगारा ॥ पूजो० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र श्री प्रभु पद साधा, आतम सुख अय अन्याबाधा। अजर अमर पद हुआ हमारा ॥ पूजो० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिवमार्ग सुदर्शनाया० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने ' वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय दीपक यजामहे स्वाहा।

अनादि भूल, लगा दुख भारी हो सांवरिया। दया करो हे गुणदरिया। दुख को मेटो सांवरिया ॥ टेर ॥ भर नैवेद्य को थाल धरूँ प्रभु आगे हो सांवरिया। त्याग भाव मय अनाहारता जागे हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ १ ॥ त्याग भावना त्यागी जीवन देता हो सांवरिया, वीतराग पद पूरण त्यागी होता हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥२॥ भूल गये रंग राग भूल गये छकड़ी हो सांवरिया। पुद्गल संगे पुद्गल परिणति पकड़ी हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ३ ॥ प्राणी अनुकम्पाहित पुद्गल त्यागूं हो सांवरिया। साधु सेवा लागूं अमृत मांगूं हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ४ ॥ सेवा मेवा देती सेवा करते हो सांवरिया। साता प्रकृति बंध उदय अनुसरते हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ५ ॥ साता प्रकृति पुण्य बन्ध से मिलते हो सांवरिया। दुर्लभ चारों अंग अंग में खिलते हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ६ ॥ मानवता पा श्रुतमें श्रद्धाधारी हो सांवरिया। संयम धर विचरूं आतम अधिकारी हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जन अगम अगोचर होता हो सांवरिया। परमातम पद पाउं करम मल खोता हो सांवरिया ॥ दया० पेट० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ आज्याज्य निर्मित सुधामधुर प्रचारै० ।
मन्त्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने ˙˙ वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

करो अमरफल के लिये, फल पूजा विस्तार ।
मिटे असाता फल मिले, साता शिव अनुसार ॥१॥
फल चाहो फल को धरो, प्रभु पूजा में खास ।
क्रिया कार्य साधक कही, ज्ञान क्रिया शिववास ॥२॥

(तर्ज—माला काटे रे जाला जीव का)

पूजन कर पाओ, साता सुख पाओ मेरी आतमा ॥ टेर ॥ कर्म वेदनी सात असाता, प्रकृति उभय अघाती । बन्ध उदय अध्रुव जो होती, सता ध्रुव कहलाती रे ॥ पू० ॥ १ ॥ कोडा कोडी सागर तीसा, स्थिति उत्कृष्टी होती । क्षय करके जीवन अपने मे, प्रकटा दो गुण ज्योति रे ॥ पू० ॥ २ ॥ पुण्य रूप से साता होती, सुर नर मे अधिकाई । पाप असाता तिरि नारक में, होती है दुखदाई रे ॥ पू० ॥ ३ ॥ सुरगति में शास्वत जिन पूजो, जिन

कल्याणक योगे । उत्तम नर भव प्रभु पूजन कर, पूरण प्रभुता भोगे रे ॥ पू० ॥ ४ ॥ प्रभु पूजा द्वेषी पापोदय, नरक महादुख पावे । परमाधामी क्षेत्र विपाके, रो रो समय वितावे रे ॥ पू० ॥ ५ ॥ भूख तृषा और पराधीनता, वध बन्धन तिर्यंचे । प्रकृति असाता बँध जाती है, जीवन पाप प्रपंचे रे ॥ पू० ॥ ६ ॥ सात असाता क्षय कर होते अर्हं आप अयोगी । सिद्ध रूप होते हैं स्वामी, शिव सुख फल के भोगी रे ॥ पू० ॥ ७ ॥ सुख सागर भगवान परम गुरु, हरि पूज्येश्वर स्वामी । कवीन्द्र आतम शिव फल दाता, पूजो अन्तर्यामी रे ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूषपेशल रसोत्तम भाव पूर्णैः० ।

मंत्र—ॐ ह्रीं अर्हं परमात्मने···वेदनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

[आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें ।]

—०—

चौथे दिन मोहनीय कर्म निवारण पूजा पढ़ावे

॥ मोहनीय कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ में मङ्गल-पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देख कर बोलें और अन्त में कलश आठवे दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोले। प्रति पूजा में काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान ही बोलने होंगे। मन्त्र में कर्म नाम बदल कर बोले।]

मंगल पीठिका के दोहे

पूर्ववत्

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मोह महाबलवान है, जीते सो जिन देव।
जिन पूजा से जय विजय, होती है स्वयमेव ॥१॥
जल पूजा विधियोग से, अन्तर्मल मिट जाय।
मोह महा तृष्णा हटे, बोध बीज विकसाय ॥२॥

(तर्ज—झण्डा ऊँचा रहे हमारा०)

जो जल से जिन पूज करेंगे। पाप ताप मल दूर हरेंगे ॥ टेर ॥ मोह परम दल बल अतिभारी, जीते

जिनवर जग जयकारी। जिनपूजा जय विजय वरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ १ ॥ मोह करम मादक मदिरा सा, पुद्गल भोग विषय विष प्यासा। कर अभिलाषा दुःख भरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ २ ॥ दर्शन और चरण में होता, मोह अरे! आतम गुण खोता। आतम अर्थी दूर टरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ३ ॥ श्रद्धा ठीक हुई जिसके पर, मनमें रहती शंका घर कर। समकित मोह न भव्य धरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ४ ॥ साँच झूंठ में भेद न जाने, मिश्र मोह खल गुड़ सम ठाने। ज्ञानी उसमें नहीं पड़ेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ५ ॥ चेतन केवल जड़ अभिमुख हो, मिथ्या मोह न आतम सुख हो। सुजन सदा जड़ संग डरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ६ ॥ दर्शन मोहे तीन प्रकारा, सद्गुरुगम कर विशद विचारा। आतम अपनी गति पकरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जन दर्शन मोहे, नारक तिरि दुर्गति अवरोहे। समकित धर शिवगति विचरेंगे, जो जल से जिन पूज करेंगे ॥ पा० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकैषणाति तृष्णोदयवारणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने···मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय जल यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मोहनाग विष आग से, सन्तापित सब लोक ।
प्रभुपद चन्दन सरस रस, होवें भाव अशोक ॥१॥
भेदाभेद विचार से, चन्दन होना आप ।
प्रभुपद के सतसंग में, मिटे पाप संताप ॥२॥

(तर्ज—उठ जाग मुसाफिर भोर भया, अब रैन कहाँ जो तू'०)

चन्दन पूजा के भाव भरो, खुद चन्दन रूप अनूप धरो । फिर मोहनाग विषसे न डरो, सुख सहज समाधि आप वरो ॥ टेर ॥ सित्तर कोडाकोडी सागर, उत्कृष्ट मोह थिति बन्ध कहा । हो सावधान उस को तोडो, भव भाव उदासी हो विचरो ॥ चं० ॥ १ ॥ इस मोह करम दुखदायी की, हैं आठ वीस प्रकृति जानो । मोहनीय तीन सोलह कषाय, नव नो कषाय सब दूर करो ॥ चं० ॥ २ ॥ दर्शन चारित्र गुणों का घात, करे यह घाती मोह करम । जो तोड़ सकें जन धन्य धन्य, आदर बहुमान सदैव करो

॥ चं० ॥ ३ ॥ क्रोधादि अनन्तानुबन्धी, ये यावज्जीवन होते हैं। मिथ्यात्व इन्ही में होता है, उस को अब चकना चूर करो ॥ चं० ॥ ४ ॥ पर्वत रेखा सा क्रोध मान, खम्भा पत्थर का सा होता। घन वंश मूलसी माया लोभ, कीरमची रंग का नाश करो ॥ चं० ॥ ५ ॥ जड़ चल जग जूंठन पुद्गल की, ममता से आतम बहिरातम। जड़ चेतन भाव विवेक सार, अन्तर आतम पद आप धरो, ॥ चं० ॥ ६ ॥ तीर्थंकर कल्याणक विहार, भूमि तीरथ तारण हारे। तीर्थंकर प्रतिमा के पावन, दर्शन से दर्शन प्राप्त करो ॥ चं० ॥ ७ ॥ नित हरि कवीन्द्र प्रभु दर्शन से, प्रभुता जीवन में प्रकटाओ। आतम गुण घाती मोह करम को, दूर दूर कर विघटाओ ॥ चं० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपतापशमनाय महद् गुणाय०

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने·······मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पञ्च वरण के फूल से, प्रभु पञ्चम गतिमूल।
पूजो दर्शन योगतें, मिटे अनादि भूल ॥ १ ॥

अप्रत्याख्यानी तजो, चार कषाय विशेष।
धारो प्रत्याख्यान को, सेवो देव जिनेश ॥२॥

(तर्ज—जिन गुण गावत सुर सुन्दरी०)

प्रभु दर्शन दुख दूर करे, दर्शन सुख भर पूर भरे ॥ प्र० ॥ टेर ॥ फूल से पूजा श्री जिनवर की, फूल विकास विकास करे। चार कषाय अप्रत्याख्यानी, पुरुषारथ से दूर टरे ॥ प्र० ॥ १ ॥ पृथिवी रेखा क्रोध कहा है, अस्थी सम है मान अरे। माया मेंढ सींग के जैसी, लोभ सुकर्दम रंग भरे ॥ प्र० ॥ २ ॥ तिर्यंच गति मति कारण हैं ये, चतुर न इनको चित्त धरे। जीव विपाकी घाती मारे, जीव विवेकी भेद करें ॥ प्र० ॥ ३ ॥ बंध उदय चौथे नवमें गुण, थानक सत्ता अन्त करे। वह धन दिन अवसर वह होगा, अकषायी हो हम विचरे ॥ प्र० ॥ ४ ॥ ये कषाय अप्रत्याख्यानी, बारमास में नियत टरें। प्रति क्रमण संवत्सर यावें, जीवन पावन भाव भरे ॥ प्र० ॥ ५ ॥ अप्रत्याख्यानी गुण ठाणे, अविरत सम्यग्दृष्टि धरे। सुरनर पति सविशेष रूप से, प्रभु पूजा कर पाप हरे ॥ प्र० ॥ ६ ॥ अप्रत्याख्यानी प्रकृति ये, सर्वघाति प्रति यातें डरे। प्रभु पूजा कर प्रेम से सविनय, अकषायी घर दान वरे ॥ प्र०

॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र कुसुम वर आवे, आतम पूर्ण विकास करे। उत्तरोत्तर गुण थानक फरसे, आतम पहुँचे आप घरे ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्च वर वर्ण विराजिभिर्वै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने""मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु सन्मुख धर धूप को, भावो एह विचार ।
करम धुआं उड़ते हुआ, गुण सुगन्ध विस्तार ॥१॥
प्रभु गुण पावन धूप से, धूपित आत्म प्रदेश ।
भाव निरासयता लहे, यहसद्गुरु उपदेश ॥२॥

(तर्ज—झट जाओ चंदन हार लाओ घुंघट नहीं खोलुंगी)

धूप पूजा करो भवि भावे, करम धुआँ उड जावे । मोह कर्म कराल कीटाणु, स्वयं सब मिट जावे ॥ टेर ॥ पूजा कर वर भाव से, करो पाप पच्चक्खान । प्रत्याख्यानी चौकड़ी, मेटो चतुर सुजान रे ॥ करम० ॥१॥ प्रत्याख्यान कषाय से, सर्व विरति हो घात । ध्रुव बन्धी अध्रुवोदयी, फरमावे गुरु ज्ञात रे ॥ करम० ॥ २ ॥ धूली रेखा क्रोध

है, मान काठ अनुरूप। माया है गोमुत्रिका, संजन लोभ सरूप रे ॥ करम० ॥ ३ ॥ चार मास ये रह सकें, अणुव्रत में अतिचार। नर भव कारण पाय के, ज्ञानी करतें प्रहार रे ॥ करम० ॥ ४ ॥ ध्रुव सत्ता का ये रहें, नव गुण ठाणे नाथ। क्षपक श्रेणिगत आतमा, पाता पुण्य प्रकाश रे ॥ करम० ॥ ५ ॥ साधु धर्म दशांग का, श्रावक धरते भाव। धूप दशांग सदा करें, आतम धूपन दाव रे ॥करम० ॥ ६ ॥ धूप धुआँ ऊँचा चढ़े, चढ़े पुजारी आप। चरण शरण जिनराज की, लगी हृदय हो छाप रे। ॥ करम० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जय जय करें, हो अमरापुर वास। धूप पूज प्रतिदिन करो, पाओ आतम विकास रे ॥ करम० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ स्फूर्जत्सुगन्धविधिनोर्ध्वगति प्रयाणे० ।

मन्त्र —ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ''''मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु हैं भाव प्रकाशमय, तन्मय दीपक धार।
द्रव्य भाव पूजा करो, मिटे हृदय तम वार ॥१॥

दीपक जैसे संज्वलित, संज्वलनात्म कषाय।
अविवेकी जन जल मरे, ज्ञानी जन शिव जाय ॥२॥

(तर्ज—पंछी बावरिया)

दर्शन दीपक द्वारा, पाये प्रभु सांवरिया। मिथ्या तम मिट जाये, पाये प्रभु सांवरिया ॥ टेर ॥ दीपक संज्वलनात्म कषाये, आतम परमातम लय लाये। भव सागर संतरिया ॥ पाये० ॥ १ ॥ बंध उदय सत्ता रहती है, अनिवृत्ति परिणति वहती है। क्षपक श्रेणि संचरिया ॥ पाये० ॥ २ ॥ जल रेखा सम क्रोध मान है, नेत्र लता माया वितान है। अवले ही अनुसरिया ॥ पाये० ॥ ३ ॥ हल्दी रंग सा लोभ खपाया, दशवें गुण ठाणे संपराया। क्षायिक भाव विचरिया ॥ पाये० ॥ ४ ॥ पन्द्रह दिन तक रहता आगे, वैमानिक गति होती सागे। यथाख्यात आवरिया ॥ पाये० ॥ ५ ॥ चार चार की ये चौकड़ियाँ, गुण विकास में हैं हथकड़ियाँ। काटें आतम गुण दरिया ॥ पाये० ॥ ६ ॥ प्रभु आगम दीपक की ज्योति, जो जीवन में सन्मुख होती। शिवपुर पंथ विहरिया ॥ पाये० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र दीपक पूजा से,

ज्ञान चरण गुण दिव्य उजासे। परमातम अनुसरिया॥ पाये० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिवमार्ग सुदर्शनाय०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ''मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अक्षत गुण धारी प्रभु, अक्षत आगे धार।
पूजा अक्षत भाव से, करो सुघर नर नार ॥१॥
अक्षत भरता पेट को, मिटती भूख अपार।
गुण अक्षत आतम भरे, मेटे भव गति चार ॥२॥

(तर्ज—माला काटे रे जाला जीव का तन मन से फेरो)

अक्षय पद पावो, अक्षत प्रभु पूजो भविजन भाव से ॥ टेर ॥ कषाय सहचारी होते नत, नो कषाय जीवन में। दूर करो प्रभु पूजन करते, पूज्य बनो त्रिभुवन मे रे ॥ अक्षय० ॥ १ ॥ रोगमूल खाँसी होती है, झगडे की जड हाँसी। करने वालों को लग जाती, मोह करम की फांसी रे ॥ अक्षय० ॥ २ ॥ जड़ अनुराग रति अरति वह, अप्रीति

होती है। रति अरति करते आतम की, मिटी महा ज्योति है रे ॥ अक्षय० ॥ ३ ॥ अप्रिय घटना घट जाने से, या अप्रिय चिन्तन से। शोक प्रकटता उसे मिटाओ, परमातम पूजन से रे ॥ अक्षय० ॥ ४ ॥ भय मत पैदा करो अन्य को, मत निजमें भय खाओ। आतम भावे निर्भयता धर, अजर अमर पद पाओ रे ॥ अक्षय० ॥ ५ ॥ घृणा निवारो तत्त्व विचारो, हो द्रव्यानुयोगी। आतम उपयोगी हो जाओ, परमातम पद भोगी रे ॥ अक्षय० ॥ ६ ॥ बन्ध उदय उदीरण सत्ता, कर्म विपाक विचारो। हास्यादिक कुछ नहीं दीखें पर, महा भयंकर वारो रे ॥ अक्षय० ॥ ७ ॥ भय कुत्सा ध्रुव बन्धी अध्रुव, बन्धी हास्यादिक हैं। हरि कवीन्द्र प्रभु ध्यान लीन हो, त्यागें धन्य अधिक हैं रे ॥ अक्षय० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाऽक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने……मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा ।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भाव अवेदी श्री प्रभु, पूजो धर नैवेद्य।
द्रव्यालम्बन भाव से, मिटे वेद का खेद ॥ १ ॥
आप अवेदी आतमा, कर्म जनित हैं वेद।
भावो ऐसी भावना, वेद रहे ना खेद ॥२॥

(तर्ज—काटो लागो रे देवरिया मोसे संग चल्यो ना जाय)

काम यो कैसे जीत्यो जाय, काम यो कैसे जीत्यो जाय। प्रभु पद को धर ध्यान, काम यो ऐसे जीतयो जाय ॥ टेर ॥ रसना लम्पट जन जीवन में, जहां तहां भटकाय। नैवेद्य त्याग लाग प्रभु पूजा, लम्पटता मिट जाय ॥ का० ॥१॥ सडन पड़न विध्वंसन भावी, पुद्गल बना शरीर। नव दश द्वारों से मल झरता, हम हैं वही अधीर ॥ का० ॥२॥ नहा धोकर कर टाप टीप, सुन्दरता दिखलाते। रोम रोम से झरता है मल, पर हम इठलाते ॥ का० ॥ ३ ॥ नर को नारी नारी को नर, प्यार परस्पर करते। पुद्गल से मिल जुल कर के हम, जीते भी हैं मरते ॥ का० ॥ ४ ॥ दिन अन्धा कोइ अन्धा राते, काम अन्ध दिन रात। नर नारी नपुंसक वेदी, खेद दुःख नित पात ॥ का० ॥ ५ ॥ नवमे

तीरथ तारण हार। तीरथ पति के तीर्थ में, मेटो मोह विकार ॥ कवीन्द्र करते जय जय कार, तीरथ से नित तिरनाजी नित तिरना ॥ यो० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भावपूर्णैः० ।

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने…मोहनीय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

[आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें।]

—०—

पाँचवे दिन आयुष्य कर्म निवारण पूजा पढ़ावें

॥ आयुष्य कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ में मंगल पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें, और अन्त में कलश आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें। प्रति पूजा मे काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान बोलने होंगे। मंत्र मे कर्म नाम बदल कर बोलें।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—०—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जीवन कारागार सा, आयु करम सम्बन्ध।
होता चार प्रकार से, चारगति प्रतिबन्ध ॥१॥
पुरुषारथ प्रभु की दया, प्रभु पूजा अधिकार।
निज प्रभुता प्रकटे मिटे, भव भय कारागार ॥२॥

(तर्ज—अवधू सो योगी गुरु मेरा)

प्रभु पूजा अधिकारे आतम निज प्रभुता प्रकटावे ॥ टेर ॥ कर्म महामल प्रति पल लगता, जल पूजा वह जावे। निर्मलता पाई प्रभुताई, शाश्वत निज सुख पावे ॥ आतम० ॥ १ ॥ जड़ चेतन दोनों की होती, स्थिति आयुष्य कहावे। आयु कर्म अघाती होता, चारगति पहुँ-चावे ॥ आतम० ॥ २ ॥ समय समय में कारण योगे, सात करम बँधते हैं। ओघे काल अबाधा उदये, सुख दुख फल सँधते हैं ॥ आतम० ॥३॥ जीवन के तीजे हिस्से जब, आयु कर्म उपावे। उसी समय में आठ करम का, बन्ध गुरु समझावें ॥ आतम० ॥ ४ ॥ आगामी भव आयुष्य बंधता, प्रति भव बस इकवारा। प्रायः पर्वतिथि में यातें, धर्म करो सुखकारा ॥ आतम० ॥ ५ ॥ भव भव में यों आयुष्य प्रकृति, हथकड़ियाँ पड़ती हैं। काटो इन को शिवपुर जाते, जो आड़ी अड़ती हैं ॥ आतम० ॥ ६ ॥ प्रति भव आयुष्य कर्म भोगते, काल अनन्त गमाया। प्रभु आगम जीवन अधिगम से, करम मरम समझाया ॥ आतम० ॥ ७ ॥ सुखसागर भगवान प्रभु पद, द्रव्य भाव

जल धारा। पूजन जन कीरतियाँ गावें, हरि कवीन्द्र जयकारा ॥ आतम० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकैषणाति तृष्णोदय वारणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय जल यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भवगति आयुष योग ते, हो जाती है कैद ।
प्रभु पूजो प्रभु आप हैं, इसी रोग के वैद ॥१॥
आधि व्याधि उपाधि के, त्रिविध ताप सन्ताप ।
प्रभु पूजा से हों नहीं, प्रभु पूजो अब आप ॥२॥

(तर्ज—म्हारो कागसियो पणिहार्यां ले गई रे०)

पूजो चन्दन से, भव फन्द सभी कट जाय ॥ पूजो० ॥ टेर ॥ प्रभु चन्दन अनुरूप हैं, प्रभु तीन भुवन सिर भूप ॥ पूजो० ॥ आतम गुण उपयोग से, प्रभु दूर करें भव कूप ॥ पूजो० ॥ १ ॥ अध्रुव बन्ध उदय सत्ता में, आयु कर्म सरुप ॥ पूजो० ॥ कैद रूप काटो इसे, पद पावो आप अनूप ॥ पूजो० ॥ २ ॥ जीना मरना ये सभी हैं, आयुष के अधिकार ॥ पूजो० ॥ चाहो ज्यों होता नहीं,

होता कर्मानुसार ॥ पूजो० ॥ ३ ॥ बाह्य निमित्तों से कटे, आयुष अपवर्तन नाम ॥ पूजो० ॥ इतर अनपवर्तन कहा, जो पाता पूर्ण विराम ॥ पूजो० ॥ ४ ॥ देव मनुज तिर्यंच में, आयु प्रकृति शुभ योग ॥ पूजो० ॥ नरक अशुभ आयुष्य का, हो अपने आप वियोग ॥ पूजो० ॥५॥ श्वांस न आयु हैं यहाँ, ये हेतु हेतुमद भाव ॥ पूजो० ॥ प्रभु पूजा में श्वांस की, गति होती सहज सुभाव ॥ पूजो० ॥६॥ निश्चय नय घट बढ़ नहीं होती, घट बढ है नय व्यवहार ॥ पूजो० ॥ निश्चय वर व्यवहार उभयपद, जिन दर्शन चित धार ॥ पूजो०॥ ७ ॥ जिन दर्शन पाये बिना, यह आयुष्य यों ही जाय। हरि कवीन्द्र प्रभु दर्शने, हो आयु सफल सुखदाय ॥ पूजो० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपताप शमनाय महद् गुणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ··· आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अर्हं पद अधिकार में, पूजातिशय विचार।
हृदय कमल अर्पण करो, तज दो विषय विकार ॥१॥

प्रभु पद कमल प्रभाव से, कमल प्रभा कमनीय।
जीवन पूर्ण विकास मय, होता जन नमनीय ॥२॥

(तर्ज—प्रभु गल सोहे मोतीयन की माला० श्याम कल्यान)

विकास को पाओगे करो प्रभु पूजा। विकास को पाओगे ॥टेर॥ पूज्य की पूजा पूज्य बनावे, गिरते हुओं को तुरत उठावे। गुणी संग कर गुण आप उपाओगे ॥ करो० ॥१॥ हिंसा करो मत, मत झूठ बोलो, चोरी करो मत, विषय न तोलो। रौद्र ध्यान नरकायु निपाओगे ॥ करो० ॥ २ ॥ अपने परायों से द्रोह करो ना, अपने परायों की घात करो ना। द्रोह घात नरकायु बढाओगे ॥ करो० ॥ ३ ॥ साधु गुणी की निन्दा न करना, निन्दक जनका संग परिहरना। निन्दा कुसंगे दुर्गति जाओगे ॥ करो० ॥ ४ ॥ काम क्रोध मद मोह विकारा, दूर निवारो बनो अविकारा। सविकारी दुख-भार कमाओगे ॥ करो० ॥ ५ ॥ मिथ्यात्वे बंधता नरकायु, भांग पिये ज्यों बढता वायु। दुखदायी मिथ्यात्व गमाओगे ॥ करो० ॥ ६ ॥ सात गुण स्थानक तक सत्ता, नरकायु को आगे धत्ता। देते हुए निज शक्ति लगाओगे ॥ करो० ॥ ७ ॥ नारक भी सम्यक्त्वी होते,

पूरव भव कृत पाप को धोते। हरि कवीन्द्र नरभव सुख पाओगे ॥ करो० ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्चवरवर्ण विराजिभिर्वै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने···आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

धूप धरो उंचा चढ़ो, पाओ सुगुण सुगन्ध ।
रोग शोक व्यापे नहीं, मिटे पाप-दुर्गन्ध ॥१॥
प्रभु पूजा की भावना, आतम भाव प्रकाश ।
परमातमता प्रकट हो, जीवन ज्योति विकास ॥२॥

(तर्ज—लटपट छाइ नागर वेल करेलवा०)

भविक जन ! प्रभु आसातन टार। भविक जन प्रभु पूजन चितधार। भविक जन प्रभु आसातन टार ॥ टेर ॥ अर्हपद आसातना कांइ दुर्गति पद दातार। नरक और तिर्यंचका कांइ आयुष बन्धन कार ॥ भ० ॥ १ ॥ एक तीन सत दश कहे कांइ सतरा और बाईस। तेतीस सागर आयु क्रम कांइ नरके विश्वावीस ॥ भ० ॥ २ ॥ हँस हँस होते पापसे कांइ बंधते कर्म कठोर। रोते छुटकारा नहीं

काइ उदय समय दुख दौर ॥ भ० ॥ ३ ॥ दशविध होती वेदना कांइ सुलते दुःख अपार । भोग समय हो क्या गति काइ जाने जगदाधार ॥ भ० ॥ ४ ॥ असुर निकायी देवता कांइ पनरह परमाधाम । दुख देते जो भोगते कांइ वचन अगोचर ठाम ॥ भ० ॥ ५ ॥ तिर्यंचायु को कहा काइ पुण्य रूप भगवान । पर बँधता है पाप से कांइ होता दुःख की खान ॥ भ० ॥ ६ ॥ प्रथम भूमि नीगोद की कांइ, जीव अनन्तानन्त । व्यवहाराव्यवहारसे कांइ माखें श्री भगवत ॥ भ० ॥ ७ ॥ एक शरीरे एकठा कांइ भोगें दुःख अनन्त । हरि कवीन्द्र ज्ञानी करें कांइ उन दुःखों का अन्त ॥ भ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ स्फुर्जत्सुगन्ध निधिनोर्ध्वगति प्रयाणे० ।

मन्त्र —ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ""आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा ।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु दीपक पूजा करो, प्रकटे दीपक ज्ञान ।
भाव अन्धेरा ना रहे, जानो सकल जहान ॥१॥

नरक निगोदी दुःख का, ज्ञानी करते अंत।
ज्ञानी की पूजा करो, हो सुख सिद्धि अनन्त ॥२॥

(तर्ज—करलो करलो रे थे भविजन प्राणी शिवसुख वरलो रे)

पूजन करलो रे ओ भविजन भावे हित सुख वरलोरे ॥ पूजन० ॥ टेर ॥ पूजा पाप निवारे प्रभु की, पूजा हित सुखकारी रे। आगम दीपक देख अहिंसा, पूजा प्यारी रे ॥ पू० ॥ १ ॥ प्रभु मुद्रा अप लाप करे और, पूजा पाप बतावे रे। नरक निगोद भयंकर भव में, बहु दुख पावे रे ॥ पू० ॥ २ ॥ एकेन्द्रिय बेइन्द्रिय जानो, तेइन्द्रिय भी प्राणी रे। चौरेन्द्रिय पंचेन्द्रिय तिर्यंच, हैं दुख खाणी रे ॥ पू० ॥ ३ ॥ प्राण और पर्याप्ति-शक्ति, अरे अविकसित होती रे। तिर्यंचो में आत्म चेतना, रहती सोती रे ॥ पू० ॥ ४ ॥ तिर्यञ्चायु बन्ध जिना गम, सास्वादन तक मानारे। उदय देशविरति सत्ता क्षय, साते ठाना रे ॥ पू० ॥ ५ ॥ स्वस्थ पुरुष इक श्वासोच्छ्वासे, साडी सतरा होते रे। क्षुल्लक भव यों भाव निगोदे, दुख मय होते रे ॥ पू० ॥ ६ ॥ तीन पल्योपम उत्कृष्टी स्थिति, पञ्चेन्द्रिय की भारी रे। प्रभु पूजा से पाप गति यह, दूर निवारी रे ॥ पू० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र प्रभु पद पूजन से, नरक तिरि

भव टालो रे। प्रभुपद दर्शन वन्दन पूजन, शुभगति पालो रे ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्णसिद्धि शिवमार्ग सुदर्शनाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ... आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा ।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

सक्षत गुण अक्षत करण, पूजो अक्षत धार ।
अक्षत गुण होंगे प्रकट, सक्षत हो संसार ॥१॥
भाव द्रव्य से होत हैं, बिना द्रव्य नो भाव ।
होते हैं बाजार में, द्रव्य देखकर भाव ॥२॥

(तर्ज—समुद्र के लाला हो गुण वाला, नेम नगीना तुम ही तो हो)

अक्षत द्रव्य धरो प्रभु पूजो, द्रव्य बिना कोइ भाव नहीं है। श्रीजिन शासन वासित आगम, द्रव्य भाव की जोड़ सही है ॥ टेर ॥ गूढ हृदय निर्दय जन कोई, प्रभु पूजा विधि पाप कही है। शल्य सहित तिर्यञ्च का आयुष, बन्ध गति सविशेष गही है ॥ अक्षत० ॥ १ ॥ नारक तिरि आयु स्थिति बन्धक, आश्रव टालो जो पाना नहीं है। किरिया से कर्म ओ कर्म से बन्धन, बन्धन से होता दुख ही है ॥ अक्षत०

॥ २ ॥ अल्प कषायी सदा सुखदायी, पर उपकारी प्रवृत्ति रही है। गुण ग्राहक वरदान रूचि शुचि, मानवता के हेतु यही हैं ॥ अक्षत० ॥ ३ ॥ मानव में नव जीवन पावन, प्रभु गुण समता सहज रही है। कर्मों से आवृत होने से, आज जगी दिव्य ज्योति नहीं है ॥ अक्षत० ॥ ४ ॥ चार गुणस्थानक नर आयुष, बन्ध स्थान की बात कही है। सत्ता उदये चौदह होते, केवल ज्ञान की भूमि यही है ॥ अक्षत० ॥ ५ ॥ प्रभु दर्शन से दर्शन पाकर, पूर्व जो आयुष बन्ध नहीं है। मोक्ष न हो तो वैमानिक की, देवगति अति अद्भुत ही है ॥ अक्षत० ॥ ६ ॥ प्रतिभव में एकबार ही बँधता, ऐसा कर्म तो आयुष ही है। प्रति पल बँधते कर्म सभी इन, कर्मों को शर्म जरा भी नहीं है ॥ अक्षत० ॥ ७ ॥ आयुष कर्म की कैद कटे, अविनाशी शिवपुर राह यही है। हरि कवीन्द्र करो पुरूषारथ, प्रभु पूजा सुविचार कही है ॥ अक्षत० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाऽक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने……आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा ।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जड कर्मों के जोग से, भारी लगती भूख।
मिट मिट कर भी ना मिटी, यही यहाँ है दुःख ॥१॥
खड्डा पापी पेट का, भर जाये यह भाव।
नैवद्य धर मांगुं मधुर, दो प्रभु यही स्वभाव ॥२॥

(तर्ज—हो उमराव थारी बोली प्यारी लागे महाराज)

हो परमात्मा की पूजा प्यारी लागे साधिकार। हो नैवेद्य पूजा करते जन हो जावें निर्विकार ॥ टेर ॥ ससारी सविकार है, चार गति विस्तार। जनम मरण कर कर थकें, दीखे अंत न पार। हो परमात्मा के पद कमलों में होगा बेडा पार ॥ हो पर० ॥१। दुर्लभ नर भव पा लिया, चिन्तामणि अनमोल। प्रभु सेवा परिणत करो, सद्गुरुओं का बोल। हो आराधना मे अपनी शक्ति लगाओ बार बार ॥ हो पर० ॥ २ ॥ साधन पूरे ना मिलें, ना शिव सिद्धि होय। तो भी प्रभु पद पूजते, निश्चय सुरगति होय। हो सुर लोक मे भी शाश्वत श्री जिन पूजा अधिकार ॥ हो पर० ॥ ३ ॥ जिन कल्याणक उत्सवे, विविध भक्ति चितधार। मेरु नन्दीश्वर करें, सुर जिन पूजा सार।

हो भव्यातमा सम्यग्दर्शन के पाते संस्कार ॥ हो पर० ॥ ४ ॥ कचरा देव विमान का, हमें मिले जो आज। तो दारिद्रय रहे नहीं, सुर सम्पति अन्दाज। हो देवता प्रभु पूजें पूजा हित सुख कार ॥ हो पर० ॥ ५ ॥ कम से कम देवायुका, वर्ष सहस दश मान। ज्यादा से ज्यादा कहा, तेतीस सागर जान। हो अन्त समये भोगी सुर सब भोगें दुःख भार ॥ हो पर० ॥ ६ ॥ अविरति मिट जाये मिले, हमें मोक्ष अधिकार। नर भव हम पायें करें, निज आतम उद्धार। हो देवता सम्यग्दृष्टि यों करते सद्विचार ॥ हो पर० ॥ ७ ॥ बन्ध सुरायु सात तक, उदय चार तक योग। ग्यारह गुनठाने रहा, सत्ता का संयोग। हो हरि कवीन्दर प्रभु भक्तों की बोलें जयकार ॥ हो पर० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ प्राज्याज्य निर्मित सुधा मधुर प्रचारै०

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने......आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

प्रभु पूजा का पुण्य फल, हित सुख क्षेम विशेष।
फल पूजा प्रभु की करो, हित सुख मिले हमेश ॥१॥

साथ रहे इस लोक में, चले साथ परलोक।
प्रभु पूजा का पुण्य फल, भरदे भाव अशोक ॥२॥

(तर्ज गजल—कहीं हँसना कहीं रोना इसी का नाम दुनिया है)

चतुर्गति दुःख फल हरणी, करो फल पूज जिनवर की। मिटे भव कैद शिव करणी, करो फल पूज जिनवर की ॥ टेर ॥ नरक में दुख था भारी, न पाया नाथ का दर्शन। सुदर्शन प्राप्त करने को, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ १ ॥ गति तिर्यञ्च में केवल, भरा अविवेक था भारी। हिताहित ज्ञान पाने को, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ २ ॥ पड़ी पग पुण्य की बेडी, फँसे सुर भोग में हरदम। अगर स्वाधीनता चाहो, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ ३ ॥ मिला है देव दुर्लभ तन, यहाँ नर जन्म जीवन में। रतन चिन्तामणि जैसा, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ ४ ॥ उडाने काग को जैसे, न भोगों में खतम करना। सफलता प्राप्त करने को, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ ५ ॥ प्रभु खुद वीतरागी हैं, न पूजा को कभी चाहें। अगरचे पूज्य होना हो, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ ६ ॥ सुखों के दिव्य सागर हैं, प्रभु भगवान उपकारी। दुखों

को दूर करने को, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥७॥ अमर गणनाथ हरि पूजें, कवीन्द्र कीर्तियाँ गावें। सफल यश कीर्ति पाने को, करो फल पूज जिनवर की ॥ च० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भाव पूर्णैः० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने""आयुष्य कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

[आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें ।]

—o—

छट्ठे दिन नाम कर्म निवारण पूजा पढावें

॥ नाम कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ मे मगल पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें, और अन्त में कलश आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें। प्रति पूजा मे काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान बोलने होंगे। मत्र मे कर्म नाम बदल कर बोलें।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—o—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

तीरथ जल से जो करे, तीर्थङ्कर अभिषेक।
करम मैल कट जाय हो, आतम गुण अतिरेक ॥१॥
जल पूजा मन मल हरे, होवे लोक ललाम।
नाम काम अभिराम हो, परमातम परिणाम ॥२॥

(तर्ज—तन मन से फेरो माला, काटे रे जाला जीयका)

कर्मों के मल को हरती जल पूजा प्रभु की कीजिये। नाम करम नित रूप बनाता, यहाँ चितेरे जैसा। आतम आप अरूपी देखो, हो गया कैसा कैसा रे ॥ क० ॥ १ ॥ नरक तिरि नर सुर गति चारों, भटक भटक भरमाया। इक दो तीन चार पंचेन्द्रिय, जाती जोर जमाया रे ॥ क० ॥ २ ॥ औदारिक वैक्रिय आहारक, तैजस कार्मण जानो। आदि तीन के अंग उपांगा, अंगोपांग पिछानोरे ॥ क० ॥ ३ ॥ बन्धन संघातन शरीर के, पांच पांच परकारा। लाख और दंताली जैसे, बंध ग्रहण करतारा रे ॥ क० ॥ ४ ॥ वज्र ऋषभ नाराच ऋषभ, नाराच अर्ध नाराचा। किली छेवठा छह संघयणे, मारो मोह तमाचारे ॥ क० ॥ ५ ॥ समचउरंस निग्रोह सादि और, कूब्ज वामना हुँडा। आतम योगी पुण्य उपावे, और पाप का कुण्डा रे ॥ क० ॥ ६ ॥ वर्णगन्ध रस फरस बीस शुभ, अशुभ सभी कहलाये। आनुपूर्वी हय लगाम ज्यों, चार गति ले जाये रे ॥ क० ॥ ७ ॥ चाल शुभा शुभ गति विहायस, जीव सभी की होती। हरि कवीन्द्र धन भाग गति मति, आतम अभिमुख होती रे ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकैषणाति तृष्णोदय वारणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने...नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

मलयाचल चन्दन सरस, क्षेत्र विशेषित भाव ।
प्रभु पद पावन क्षेत्र में, प्रकटे पुण्य प्रभाव ॥१॥
चन्दन गुण सन्ताप हर, हैं प्रभु आप विशेष ।
चन्दन से पूजा करो, मिटें करम के क्लेश ॥२॥

(तर्ज—अवधू सो योगी गुरु मेरा—आशावरी)

चन्दन पूजा करियें प्रभु की चन्दन पूजा करियें । पाप ताप परिहरियें प्रभु की चन्दन पूजा करियें ॥ टेर ॥ नाम करम की पिण्ड प्रकृतियाँ, चौदह उत्तर जानो । पैंसठ होती आतम अभिमुख, कर आतम पहिचानो ॥ प्र० ॥१॥ बन्धन पाँच कहे पनरा भी, संघातन सहयोगी । वीस प्रकृतियाँ तन अन्तर्गत, समझें आतम योगी ॥ प्र० ॥ २ ॥ वर्णादिक भी मूल चार हैं, उत्तर वीस बताइ । कर्म विचार समास किया यों, सोला वीस घटाई ॥ प्र० ॥ ३ ॥ हैं प्रत्येक प्रकृतियां अट्ठा-, वीस विशेष प्रकारा ।

सड़सठ होती नाम करम की, प्रकृति समास विचारा ॥ प्र० ॥४॥ विस्तारे छत्तीस मिलाते, होती एक सो तीन। आसक्ति तज नास करम पर, विजयी होते प्रवीन ॥ प्र० ॥ ५ ॥ जीव विपाकी त्रस थावर त्रिक, सुभग दुभग चउ जानो। स्वास जाति गति तीर्थ विहायो, गति अन्तर्गति ठानो ॥प्र० ॥६॥ नाम धु्वोदयी प्रकृति बारह, तनु चउ अरु उपघाता। साधारण प्रत्येक उद्योत, आतप युत परघाता ॥ प्र० ॥ ७ ॥ नाम कर्म की ये छत्तीसों, प्रकृति पुद्गल पाका। हरि कवीन्द्र समझ समझ कर, ले लो शिवपुर नाका ॥ प्र० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपताप शमनाय महद्गुणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ··· नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

कुसुम कली खिलती रहे, प्रभु चरणों को पाय ।
त्यों पूजन जन आतमा, अन्तर्गत खिल जाय ॥१॥
कुसुम कली सुविकासमें, सौरभ सुगुण विलास ।
परमातम परसंग में, अध्यातम गुण खास ॥२॥

(तर्ज—भीनासर स्वामी अन्तर्यामी तारो पारसनाथ—माढ)

पूजो फूल विकासी, कर्मों की फांसी, काटें श्री भगवान। मिले पद अविनाशी, सहज विलासी, पूजक हो भगवान॥ टेर॥ प्रभु पूजा से पुण्योदय हो, होता है सुख सात। अन्य सबल को जो आघाते, प्रकृति हो पराघात रे॥ पू०॥ १॥ श्वासोच्छ्वास हो जीवन हेतु, आतप ताप प्रधान। सूर्य विमाने सूरज पूजे, शाश्वत श्री भगवान रे॥ पू०॥ २॥ उत्तर वैक्रिय तारा मण्डल, में होता है उद्योत। न लघु न गुरु अगुरु लघु, शरीर हो सुख श्रोत रे॥ पू०॥ ३॥ जो तीर्थङ्कर नाम कमावें, त्रिभुवन जन सुख खाण। अगोपांग व्यवस्था करता, नाम करम निर्माण रे॥ पू०॥ ४॥ अपने ही अगों से पीडित, होता है उपघात। आठों ये प्रत्येक बताये, नाम करम विख्यात रे॥ पू०॥ ५॥ त्रस बादर पर्याप्ता प्रत्येक, स्थिर शुभ सुभग सुनाम। सुस्वर आदेय यश कीरति ये, त्रस दशका अभिराम रे॥ पू०॥ ६॥ त्रस दशके से उल्टा होता, स्थावर दशक प्रमाण। नाम करम क्षय होता आखिर, चौदश में गुणठाण रे॥ पू०॥ ७॥ हरि कवीन्द्र प्रभु

परमातम, आप अकाम अनाम। अध्यातम भावे आराधो, सकुसुम पूज प्रमाण रे ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्चवर वर्ण विराजिभिर्वै० ।

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने... नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अगर तगर चन्दन सरस, कस्तूरी घनसार।
सेल्हारस वर कुन्दरू, करो धूप विस्तार ॥१॥
धूप धूम उँचा चढ़े, बढ़े सुयश वर भाव।
प्रभु पद पूजा धूपकी, ऊरध गति स्वभाव ॥२॥

(तर्ज—तुम्हें नाथ नैया तिरानी पड़ेगी)

धूप से पूजा जो कर पावे, उर्ध्व गति वह सहज उपावे ॥ टेर ॥ काल अनादि कारण योगे, श्री प्रभु दर्शन भाव वियोगे। थावर दशक पद जीव कमावे ॥ धूप० ॥ १ ॥ पृथ्वी पानी आग पवन में, और वनस्पती के जीवन में। थावर पद सद्गुरु समझावें ॥ धूप० ॥ २ ॥ सूक्ष्म नाम कर्मोदय हेतु, लोक भरा बहु दुःख निकेतु। ज्ञानी जन उपदेश सुनावे ॥ धूप० ॥ ३ ॥ निज पर्याप्ति पूरी न

करते, और बीच में जीव जो मरते। अपर्याप्त विशेष कहावे ॥ धूप० ॥ ४ ॥ जीव अनन्ते एक शरीरे, साधारण तरु जाति कही रे। नाम करम नवरूप दिखावे ॥ धूप० ॥ ५ ॥ स्थिर नहीं होते अंग उपांगा, अथिर नाम का यही अड़ंगा। पुण्य योग थिर रूप उपावे ॥ धूप० ॥ ६ ॥ पाप रूप जो होता अशुभ है, ठीक लगे ना वह दुर्भग है। दुःस्वर स्वर जिसका न सुहावे ॥ धूप० ॥ ७ ॥ वचन अमान्य अनादेय नामा, अपजश कारण हो दुख धामा। हरि कवीन्द्र न जो प्रभु ध्यावे ॥ धूप० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ स्फुर्जत्सुगन्ध विधिनोर्ध्वगति प्रयाणे० ।

मन्त्र —ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने""नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दीपक से प्रभु पूजते, दीपक गुण अभिराम।
आतम हो परमातमा, पूजो करो प्रणाम ॥१॥
जहां पात्र तपता नहीं, स्नेह न होता नाश।
वृत्ति जहां जलती नहीं, आतम दीप उजास ॥२॥

(तर्ज—उठो नी मोरे आतमरामा, जिनमुख जोवा जइयें रे)

दीपक पूजा करिये भविजन, भव वन में न भटकिये रे। मोह तिमिर मिट जाये रे भविजन, दुर्गति में न लटकिये रे ॥ टेर ॥ त्रास पडे तब गति कर सकता, यह त्रस नाम कहावे रे। विकलेंद्रिय पंचेन्द्रिय त्रस हैं, धन जो प्रभु मुख पावे रे ॥ दी० ॥ १ ॥ स्थूल रूप जीवन में पाता, बादर नाम सुयोगे रे। जीव विपाकी होकर भी जो, पुद्गल में अभियोगे रे ॥ दी० ॥ २ ॥ पर्याप्ति शक्ति छह होती, आहारादि प्रकारा रे। लब्धि करण पर्याप्ता भावे, प्रभु पूजक जयकारा रे ॥ दी० ॥ ३ ॥ पृथक शरीरे पृथक जीव हो, वह प्रत्येक सुनामा रे। जिन दर्शन निज दर्शन करता, वह जीवन अभिरामा रे ॥ दी० ॥ ४ ॥ अंग उपांगे दृढ़ता होती, जो थिर नाम उपावे रे। नाभि से सिर तक सुन्दर शुभ, धन प्रभु दर्शन पावे रे ॥ दी० ॥ ५ ॥ औरों को प्यारा होता है, सुभग महा बड़ भागी रे। जो रहता बेदाग जगत में, वीतराग पद रागी रे ॥ दी० ॥ ६ ॥ सुस्वर स्वर सब सुनना चाहें, वचन न जास उथापे रे। वह आदेय वचन प्रभु प्रवचन, धन जीवन में थापे रे ॥ दी० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जश कीरति गावे,

प्रभु चरणे लय लावे रे। त्रस दश के परमातम दीपक,
दिव्य ज्योति प्रकटावे रे ॥ दी० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिव मार्ग सुदर्शनाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ... नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा ।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

आप अरूपी आतमा, अक्षय गुण भण्डार ।
नाम करम रूपी हुआ, सक्षतपद आधार ॥ १ ॥
सक्षत पद दूरी करण, अक्षत पूज विचार ।
प्रभु अक्षत पद योगतें, अक्षत पद अधिकार ॥२॥

(तर्ज—श्री संभव जिन राजजी रे, ताहरु' अकल स्वरूप०)

अक्षत पूजा कीजिये रे, अक्षय पद अधिकार ।
जिनवर जय बोलो, बोलो बोलो बारबार ॥ जि० ॥ टेर ॥
साधारण गुण जीव का रे, जानो भाव अरूप ॥ जि० ॥
साधारण गुण रोकता रे, नाम अघाति सरूप ॥ जि० ॥१॥
पुद्गल पाकी नाम की रे, प्रकृति के संयोग ॥ जि० ॥
काम अनादि आतमा रे, वर्ण गंध रस भोग ॥ जि० ॥ २ ॥
कर्म सभी जड़ मूर्त हैं रे, पर नहीं दीखें खास ॥ जि० ॥

नाम करम में मूर्तता रे, पाती पूर्ण विकास ॥ जि० ॥ ३ ॥ नाम यह शरीर संस्थान ये रे, ये संहनन प्रकार ॥ जि० ॥ नाम करम के भेद ये रे, देखे सब संसार ॥ जि० ॥ ४ ॥ पुण्य पाप प्रगट यहीं रे, सोचो समझो नेक ॥ जि० ॥ जिन दर्शन में ही किया रे, वर्णन कर्म विवेक ॥ जि० ॥ ५ ॥ प्रकृति पुद्गल पाकिनी रे, है संख्या छत्तीस ॥ जि० ॥ नाम करम की ये सभी रे, तोड़ें त्रिभुवन ईश ॥ जि० ॥ ६ ॥ प्रकृति सत्तावीस है रे, जीव विपाकी नाम ॥ जि० ॥ पुण्य पाप दो रूप में रे, भोगो आप अकाम ॥ जि० ॥ ७ ॥ शाह कमाता नाम से रे, चोर मरे निज नाम ॥ जि० ॥ हरि कवीन्द्र प्रभु पूजते रे, नाम काम अभिराम ॥ जि० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने…नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा ।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ओज लोम प्रक्षेप से, तीन प्रकार आहार ।
करता सब संसार है, विग्रह गति अनाहार ॥१॥

विग्रह गति पाई बहुत, पर नहीं भागी भूख।
प्रभु पूजो नैवेद्य से, मांगो मेटैं दुःख ॥ २ ॥

(तर्ज—तीरथनी आसातना नवि करिये०)

वीतराग जिननाथजी जयकारी। हांरे जयकारी जी उपकारी, हांरे शिवपुर वर पन्थ विहारी, हांरे कर दो भव पार ॥ वी० ॥ टेर ॥ महर नजर करो नाथ जी हम आये, हांरे पूरव कृत कर्म सताये। हांरे अब चरण शरण लय लाये, हारे नही ओर आधार ॥ वी० ॥ १ ॥ नैवेद्य चरणों में धरें प्रभु तेरे, हांरे रहे भूख हमें नित घेरे। हांरे देती लाख चौरासी फेरे, हांरे पद दो अनाहार ॥ वी० ॥ २ ॥ वीस कोडा कोडि सागर स्थिति बोली, हांरे उत्कृष्टे भावे बोली। हांरे लघु अन्तर मुहुरत खोली, हांरे नाम कर्म विचार ॥ वी० ॥ ३ ॥ मनमें कुटिलता धारते जो प्राणी, हांरे बोलें कपट भरी जो वाणी। हांरे काय चेष्टा शठता निशानी, हांरे आश्रव संसार ॥ वी० ॥ ४ ॥ अशुभ नाम आता सही दुखकारी, हांरे विपरीत है शुभ सुखकारी। हारे हेय अशुभ विशेष प्रकारी, हांरे ससार आसार ॥ वी० ॥ ५ ॥ अशुभ नाम करमोदये नही पाया, हांरे वीतराग प्रभु जिन राया। हांरे नहीं पाया मोक्ष

उपाया, हांरे पाया दुख भार ॥ वी० ॥ ६ ॥ आज शुभोदय हो गया प्रभु भारी, हांरे पाया दर्शन जय जयकारी। हांरे भव भाया दूर निवारी, हांरे निश्चय निसतार ॥ वी० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्रों ने सदा गुण गाया, हांरे जिन शासन सुखद सवाया। हांरे योगावंचक विधि पाया, हांरे दूर कर्म विकार ॥ वी० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ आज्याज्य निर्मित सुधा मधुर प्रचारै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने······नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भव फल शिव फल जानकर, विशद विवेक विचार ।
प्रभु की फल पूजा करो, पाओ शिव फल सार ॥१॥
कर्म योग संसार फल, शिवफल धर्म विधान ।
धर्म मुख्य पद जगत में, भेटो श्री भगवान ॥२॥

(तर्ज—पास जिनेसर पूजियें रे तीन भुवन सिरताज सलूणा)

सुख दुख फल संसार में रे, कर्म उदय अनुसार सलोना। पुण्ये सुख दुख पाप से रे, पुण्य करो प्रचार

सलोना ॥ टेर ॥ पुण्य प्रथम विधि पूज्य की रे, पूजा विविध प्रकार ॥ स० ॥ करना सुख भरना सदा रे, निज आतम भण्डार ॥ स० सु० ॥ १ ॥ नाम करम ध्रुव बन्ध मे रे, वर्ण गन्ध रस स्पर्श ॥ स० ॥ तैजस कार्मण जानियें रे, प्रभु पूजा उत्कर्ष ॥ स० सु० ॥ २ ॥ अगुरु लघु निर्माण के रे, साथ रहे उपघात ॥ स० ॥ सावधान् साधें सदा रे, साधक पुण्य प्रभात ॥ स० सु० ॥ ३ ॥ अध्रुव बन्धी नाम में रे, औदारिक वेक्रिय ॥ स० ॥ आहारक उपांग भी रे, वे तीनों सक्रिय ॥ स० सु० ॥ ४ ॥ सस्थान संघयणे कही रे, छह छह भेद विचार ॥ स० ॥ पाँच जाती गति चार ये रे, दोय विहाय प्रकार ॥ स० ॥ ५ ॥ चार आनुपूर्वी तथा रे, श्री तीर्थंकर नाम ॥ स० ॥ सांसोस्वासे कीजियें रे, परमातम गुण ग्राम ॥ स० सु० ॥ ६ ॥ ध्रुव उदयी अध्रुवोदयी रे, गुरुगम बोध विशेष ॥ स० ॥ प्रकृति स्थिति रसघातसे रे, मेटो करम कलेश ॥ स० सु० ॥ ७ ॥ सुख सागर भगवान को रे, पूजो सफल विधान ॥ स० ॥ हरि कवीन्द्र सदा बनो रे, त्रिभुवन तिलक समान ॥ स० सु० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भाव पूर्णैः० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ··· नाम कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

[आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें ।]

—०—

सातवें दिन गोत्र कर्म निवारण पूजा पढ़ावें

॥ गोत्र कर्म निवारण पूजा ॥

[प्रारम्भ मे मंगल पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें, और अन्त मे कलश आठवें दिन की पूजा (अन्तराय कर्म निवारण पूजा) के अन्त मे प्रकाशित कलश बोलें। प्रति पूजा मे काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान बोलने होंगे। मंत्र में कर्म नाम बदल कर बोलें।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—०—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

रस जीवन अमृत कहै, जल को पण्डित लोक।
जल पूजा प्रभु की करो, करम कीच दे रोक ॥१॥
नीच भाव कटते रहें, जल धारा के योग।
जल पूजा जिनराज की, पावन भाव प्रयोग ॥२॥

(तर्ज—सुन सुन आवत मोहे हांसी रे, पानी में मीन पियासी)

द्रव्य भाव अधिकारी रे, करो जल पूजा मल हारी ॥ टेर ॥ नीच भाव काटे जल धारा, कीच कलंक दे टारी रे ॥ क० ॥ १ ॥ प्यास बुझाती ताप बुझाती, करे तृपति सुखकारी रे ॥ क० ॥ २ ॥ रस जीवन अमृत पद देती, प्रभु गुण समताकारी रे ॥ क० ॥ ३ ॥ नीच गोत्र कर्मोदय कटता, प्रभु पद की बलिहारी रे ॥ क० ॥ ४ ॥ उंच गोत्र गंगाजल घट ज्यों, पूज्य रूप अवतारी रे ॥ क० ॥ ५ ॥ मदिरालय मदिरा घट जैसे, नीच भाव निवारी रे ॥ क० ॥ ६ ॥ कुम्भकार समगोत्र करम है, उंच नीच घट कारी रे ॥ क० ॥ ७ ॥ उंचता धारो नीचता टारो, हरि कवीन्द्र जयकारी रे ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकेषणाति तृष्णोदय वारणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ..... गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भले भुजंग लगे रहैं, विष नहीं व्यापत अंग ।
यह गुण चन्दन को मिला, कर प्रभु पूजा संग ॥१॥

काटो या बालो भले, चन्दन भरे सुगंध।
चन्दन गुण अद्भुत वरो, प्रभु पूजा सम्बन्ध ॥२॥

(तर्ज—दयानिध दीजें यह वरदान—धनासिरि)

चन्दन पूज विचार करियें चन्दन सम आचार ॥ टेर ॥
जीते मरते उभय समय मे, सदा सुगन्ध प्रचार ॥ क० ॥१॥
सग कुसंगी आन मिलो पर, विप का हो न विकार ॥ क० ॥ २ ॥ धर्म-सुगन्धी जीवन पावन, उंच गोत्र अवतार ॥ क० ॥ ३ ॥ पत्थर सग रगड पाकर भी, चन्दन शीतल सार ॥ क० ॥ ४ ॥ पीसो घीसो चन्दन को पर, होगा रस विस्तार ॥ क० ॥ ५ ॥ गुण धारी चन्दन पाता हैं, प्रभुपद का अधिकार ॥ क० ॥ ६ ॥ सुख मे दुख में सम रस अपना, नित जीवन निर्धार ॥ क० ॥७॥ हरि कवीन्द्र सुचन्दन पूजा, भाव धरम दातार ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपताप शमनाय महद्गुणाय० ।

मंत्र—ॐ ह्रीं श्री अर्हं परमात्मने···गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दनं यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

कांटों में जीवन पला, पाया पूर्ण विकास ।
इन फूलों का देखलो, सौरभ सुन्दर हास ॥१॥
गुण में बँध कर फूल सब, हो जाते हैं हार ।
प्रभु पूजा से आप भी, पाओ यह अधिकार ॥२॥

(तर्ज—जमुनाजी में खेलें हरि राम लला०)

फूलों से पूजो भाव भरो, जीवन में पूर्ण विकास करो ॥ फू० ॥ टेर ॥ कांटों में जीवन पलता है, कांटों का दुख मनमें न धरो ॥ फू० ॥ १ ॥ कलियाँ खिल करके फूल बनें, खिलना सीखो मन मोद भरो ॥ फू० ॥ २ ॥ रेशे रेशेमें सौरभ है, गुण सौरभ का विस्तार करो ॥ फू० ॥ ३ ॥ गुण में बँध फूल ये हार बनें, जन हार बनो वर विजय वरो ॥ फू० ॥ ४ ॥ भौंरों को ये रस देते हैं, जीवन रस दान विधान भरो ॥ फू० ॥ ५ ॥ सब ठौर फूल शोभा पाते, पाओ शोभा वह काम करो ॥ फू० ॥ ६ ॥ उत्तम कुल फूल को जग चाहे, उत्तम कुल सीगा में विचरो ॥ फू० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र जीवन कुसुम कली, आतम अर्पण करते न डरो ॥ फू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्चवर वर्ण विराजिभिर्वै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने··· गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय पुष्प यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

पड़ कर भी जो आग में, जग को देत सुगन्ध ।
धूप जन्य जीवन करो, ऊरध गति प्रबन्ध ॥१॥
धूप धूम रंगी बनो, साधक साधु महान ।
प्रभु पूजा कर पूज्य पद, पाओ पुण्य प्रधान ॥२॥

(तर्ज—अवधू सो योगी गुरु मेरा० आशावरी)

धूप पूज बड़ भागी करते धूप पूज धन भागी ॥टेर॥
धूप धूम रंगी जीवन जन, भाव सुपावन भरते । प्रभु पद रागी होकर के जो, लोकोत्तम पद वरते ॥ क० ॥ १ ॥ धूप दशांगी धर्म दशांगी, जो जीवन आचरते । धूप धूम गति ऊर्ध्वदिशा में, गुण ठाणा अनुसरते ॥ क० ॥ २ ॥ धूपालम्बी ध्यान दशामें, कर्म कीटाणु मरते । स्वस्थ भाव अजरामर पदवी, सहजानन्दी धरते ॥ क० ॥ ३ ॥ धूप धूम सौरभ गुण धारी, प्रभु पद पूजा करते । दुर्गति दूर

निवार समुन्नत, उत्तम कुल प्रति चरते ॥ क० ॥ ४ ॥
जीव विपाकी गोत्र करम वश, नीच कुले अवतरते । पर
ऊँचे कर काम हमेशा, ऊँच गोत्र अधिकरते ॥ क० ॥ ५ ॥
हरिकेशी और चित्त संभूति, धन साधु पद वरते । छट्ठे
गुणठाणे अनुदय से, ऊंच गोत्र संस्करते ॥ क० ॥ ६ ॥
वीस कोडाकोडी सागर की, उत्कृष्टी स्थिति बन्धे । लघु
अन्तरमुहरत को जानो, लागो धरम के धंधे ॥ क० ॥७॥
गोत्र करम सत्ता क्षय होती, चौदशमें गुण ठाने । हरि
कवीन्द्र आतम परमातम, होता तन्मय ताने ॥ क० ॥८॥

॥ काव्यम् ॥ स्फूर्जत्सुगन्ध विधिनोर्ध्वगति प्रयाणे० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने······· गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा ।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जीवन भर जलता रहे, सींच सींच कर स्नेह ।
पर प्रकाश करता रहे, देखो दीपक एह ॥ १ ॥
दीपक पूजा में सभी, लाओ ऐसे भाव ।
स्वपर प्रकाशक आप भी, होंगे पुण्य प्रभाव ॥२॥

(तर्ज—मन मोहनजी जगतात, बात सुणो जिनराजजी रे)

प्रभु पूजा में भर भाव, दीप जगाओ रे। प्रभु ज्योति से आतम ज्योत, सहज उपाओ रे ॥ प्र० ॥ टेर ॥ सद्-गुणियों से गुणराग, मन में धरना रे। निज गुण का भी अभिमान, आप न करना रे ॥ प्र० ॥ १ ॥ गुण द्वेष का लेश विशेष, क्लेश बढावे रे। गुणद्वेष तजो गुणठाण, ऊँचे चढ़ावे रे ॥ प्र० ॥ २ ॥ नित ज्ञानी के सत संग, रग जगाओ रे। तत्त्व ज्ञान की बात उदात्त, अग लगाओ रे ॥ प्र० ॥ ३ ॥ श्रुत धारी अनुभव योग, मार्ग बतावें रे। कृत कर्म महा भव रोग, दूर गमावें रे ॥ प्र० ॥ ४ ॥ बहु श्रुत हैं दीन दयाल, टाल असातना रे। ऊँच गोत्र करम सम्बन्ध, होता धन धन रे ॥ प्र० ॥ ५ ॥ न्याय धर्म करम अधिकार, हो सदाचारी रे। ऊँच गोत्र आचार विचार, हो सागारी रे ॥ प्र० ॥ ६ ॥ नीच गोत्र के आश्रव दूर, दूर निवारो रे। प्रभु पूजा में विधियोग, भाव विचारो रे ॥ प्र० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र दीपक पूज, हो उपयोगी रे। ऊँच गोत्र उदय विस्तार, हो सुख भोगी रे ॥ प्र० ॥ प्र० ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिव मार्ग सुदर्शनाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने'''गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा ।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भारी मूसल मार से, छिल जावे सब अंग ।
तब अक्षत संसार में, पाता है प्रभु संग ॥१॥
प्रभु संगी अक्षत बनें, अक्षय सुख भण्डार ।
अक्षत पूजा में भरो, यही भाव सुविचार ॥२॥

(तर्ज—तेरी सुमतिनाथ जय हो)

अक्षत पूजा प्रभु की करते, अक्षय सुख भण्डार होता । पूजा परमाधार प्रभु की, कर्ताजन भव पार होता ॥ अक्षय० ॥ टेर ॥ अक्षत गुण अधिकारी जन का, जीवन जय जयकार होता ॥ अक्षय० ॥ १ ॥ पढ़े पढ़ावे जिन आगम को, निज आतम स्वीकार होता ॥ अक्षय० ॥ २ ॥ निज पर आतम को स्वीकारा, तो हिंसा प्रतिकार होता ॥ अक्षय० ॥ ३ ॥ आतम पथके अनुशासन में, गुण थानक विस्तार होता ॥ अक्षय० ॥ ४ ॥ षड् दर्शन खण्डन मण्डन से, अक्षत गुण अविकार होता ॥ अक्षय० ॥ ५ ॥

जिन दर्शन विरहित हो उसका, जीना मरना भार होता ॥ अक्षय० ॥ ६ ॥ नीच गोत्र के संस्कारों से, दुख मय यह संसार होता ॥ अक्षय० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र विरना हो उन को, जिन दर्शन आधार होता ॥ अक्षय० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाऽक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने "गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय अक्षत यजामहे स्वाहा ।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

आहारक तेरह कहे, गुणठाण भगवान ।
औदारिक पुद्गल ग्रहण, है आहार विधान ॥१॥
नैवेद्य पुद्गल रूप है, प्रभु चरणे दो चाढ़ ।
त्याग भाव परिणाम गुण, अनाहार हो गाढ़ ॥२॥

(तर्ज—अब तो प्रभु जी का लेलो शरन—राग भैरवी)

नैवेद्य पूजा अति आनन्द ॥ नै०॥ टेर ॥ आतम अर्पण प्रभु चरणों में, पूजा काटे कर्मों का फन्द ॥ नै० ॥ १ ॥ पुद्गल ग्रहणे नीच गोत्र का, दो गुण ठाणे तक हो बंध ॥ नै० ॥ २ ॥ उदय पांच तक ही होता है, होता है भारी दुख द्वन्द ॥ नै० ॥ ३ ॥ प्रभु पद संगति होते होता, अंध

गोत्र का सुखद सम्बन्ध ॥ नै० ॥ ४ ॥ चौदहवें गुणठाणे तक ही, ऊंच गोत्र का उदय प्रबन्ध ॥ नै० ॥ ५ ॥ सत्ता भी क्षय होती है वह, अगुरुलघु आतम निर्द्वन्द्व ॥ नै० ॥ ६ ॥ पुद्गल भाव वियोग प्रकटते, अनाहार पद परम आनन्द ॥ नै० ॥ ७ ॥ नैवेद्य पूजा कर नित मांगें, अनाहार पद हरि कवीन्द्र ॥ नै० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ प्राज्याज्य निर्मित सुधा मधुर प्रचारैः ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने......गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

ऊंच गोत्र फल पुण्य का, ऊंचे हों आचार ।
नीच गोत्र फल पाप का, नीचे हों व्यवहार ॥१॥
ऊंच गोत्र फल योग से, फल पूजा विस्तार ।
लोक शिखर ऊंचे बसो, जहँ सुख अपरंपार ॥२॥

(तर्ज—तुम तो भले विराजो जी सांवरिया०)

पुण्य फल ऊंचा होता जी, प्रभु पूजा प्रभाव ॥ पुण्य० ॥ टेर ॥ अध्रुव बन्धी गोत्र करम फल, सादि सान्त कहावे । बीज झबूके मोती पोना, जाने सो फल

पावे ॥ पुण्य० ॥ १ ॥ जीव विपाकी गोत्र करम यह, परावर्त मानी । नीच गोत्र को ऊंच करे धन, उसकी जिन्दगानी ॥ पुण्य० ॥ २ ॥ ऊंच गोत्र में जनम लिया अब, करो ऊंच कामा । दर्शन ज्ञान चरण अधिकारी, परणो शिवरामा ॥ पुण्य० ॥ ३ ॥ होवे अगर गुण हीन कोइ जन, करो न अपमाना । निज गुण का अभिमान करो मत, यह भी दुखदाना ॥ पुण्य० ॥ ४ ॥ कोई भी हों तीर्थंकर या, चक्रवर्ती राजा । कर्म अबाधा उदय काल, फल पायेंगे ताज़ा ॥ पुण्य० ॥ ५ ॥ नीच कहो मत कभी किसी को, खींच नीच रेखा । सदा सदाचारों का निज में, कर लेना लेखा ॥ पुण्य० ॥ ६ ॥ सुख सागर भगवान महोदय, जिन हरि पूज्य प्रधाना । निर्भय भाव जिनागम बोलें, निजका करो निदाना ॥ पुण्य० ॥ ७ ॥ निजमें ऊंच बनो मायी को, ऊंच बना देना । दिव्य कवीन्द्र विजय फल पाओ, कटे करम सेना ॥ पुण्य० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भाव पूर्णैः० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने ··· गोत्र कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

[प्रारम्भ दिन की पूजा (ज्ञानावरण कर्म निवारण पूजा) के अन्त में प्रकाशित कलश बोलें ।]

आठवें दिन अन्तराय कर्म निवारण पूजा पढ़ावें

॥ अन्तराय कर्म निवारण पूजा ॥

[आरम्भ में मंगल पीठिका के दोहे पहले दिन की पूजा (ज्ञानावरणीय कर्म निवारण पूजा) से देखकर बोलें। प्रति पूजा में काव्य भी पहले दिन की पूजा के समान बोलने होंगे। मंत्र में कर्म नाम बदल कर बोलें।]

मंगल पीठिका दोहा

पूर्ववत्

—०—

॥ प्रथम जल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

भव जल तिरना हो यदि, जल पूजा लो धार।
जल:तीर्थ जनता तिरे, तीर्थ तारणहार ॥१॥
द्रव्य भाव दो तीर्थ हैं, द्रव्यालम्बी भाव।
तीर्थ भेटो भाव से, परमातम पद दाव ॥२॥

(तर्ज—तावडा धीमो पड़जा रे)

तीर्थ जल पूजा नित करियें, तिरना हो संसार सार, जिन पूजा चित धरिये ॥ तीर्थ० ॥ टेर ॥ विघन घना धन कर्म बना है, आश्रव अभियोगे, इसीलिये जड रूप जीव, दुर्गति में दुख भोगे ॥ तीर्थ० ॥ १ ॥ आपा भूल फँसा जड पुद्‌गल, परिणामे चेतन। अनजाने मिथ्यात्व भाव मय, होता हत जीवन ॥ तीर्थ० ॥ २ ॥ न्हान भजो जिन देव तीर्थ में, ज्ञान विशद होता। जग-जाता यह आतम हरदम, विषयों में सोता ॥ तीर्थ ॥ ३ ॥ परमारथ से क्यों डरो, डरो हिंसा को आचरते। खाते पीते भोग कर्म मे महारंभ करते ॥ तीर्थ० ॥ ४ ॥ परमारथ का मूल कहा, सम्यक्त्व इसे धारो। परमातम पद पूज आतमा, अपना निर्द्धारो ॥ तीर्थ० ॥ ५ ॥ आतम ध्यान पवन हटते हैं, विघन घनाघन ये। बढ़ जावें अभिराम आतम गुण, ठाने नये नये ॥ तीर्थ० ॥ ६ ॥ मारे मारे फिरो अरे! सोचो हे भवि प्रानी !। दुर्लभ नरभव मिला गुणग्राम, सुन लो जिनवाणी ॥ तीर्थ० ॥ ७ ॥ अन्तराय हो दूर आप हो, निज आतम धन की। हरि कवीन्द्र जय घरो भरो, ज्योति नव जीवन की ॥ तीर्थ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ लोकेषणाति तृष्णोदय वारणाय० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने……अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय जलं यजामहे स्वाहा ।

॥ द्वितीय चन्दन पूजा ॥

॥ दोहा ॥

जीवन चन्दन रूप हो, गुण सुगन्ध भर पूर ।
अपकारी उपकार कर, प्रभु पद पूज सनूर ॥१॥
चन्दन पूजा भावना, हरदम राखो आप ।
प्रभु पद तिलक विधानतें, मिले मोक्षपद छाप ॥२॥

(तर्ज—कैसे कैसे अवसर में गुरु राखी लाज हमारी)

चन्दन पूजा करियें प्रभुकी, चन्दन पूजा करियें रे ॥ टेर ॥ जग वन्दन जिन चन्द चरण में, चन्दन पूजा करियें रे । कर्म निकन्दन द्वंद न रहते, आनन्द कन्द आदरियें रे ॥ चन्दन० ॥ १ ॥ कर्म आठवां अन्तराय वह, होता पंच प्रकारा रे । निज में परमें और उभय में, होता है दुख भारा रे ॥ चन्दन० ॥ २ ॥ अन्तराय देने पर पर को, उसके फल में भजना रे । अन्तराय फल निज को निश्चय, होता यातें तजना रे ॥ चन्दन० ॥ ३ ॥ दान अगर देता हो कोई, उससें रोक लगावे रे । तन से मन

से और वचन से, अन्तराय वह पावे रे ॥ चन्दन० ॥ ४ ॥ कृपण कपीला दासी प्रातः, मुखदर्शन दुखयायी रे। नाम लियाँ रोटी रोजी में, हो जाता अन्तरायी रे ॥ चन्दन० ॥ ५ ॥ अक्षय आतम गुण नहीं पावे, दान विघन करतारा रे। घाती करम अन्तराय निवारो, हो सुख अपरपारा रे ॥ चन्दन० ॥ ६ ॥ प्रभुपद पूजा दान प्रसगे, अन्तराय कट जाता रे। सौभागी शुभनामी दानी, जग जिसका जश गाता रे ॥ चन्दन० ॥ ७ ॥ आधि व्याधि उपाधि त्रिविध भव, पाप ताप नहीं होता रे। हरि कवीन्द्र प्रभु चन्दन पूजा, मिटे चार गति गोता रे ॥ चन्दन० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पापोपताप शमनाय महद्गुणाय० ।

मन्त्र —ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने 'अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय चन्दन यजामहे स्वाहा ।

॥ तृतीय पुष्प पूजा ॥

॥ दोहा ॥

फूलों में रस है भरा, फूलों भरी सुवास ।
फूलों से पूजो प्रभु, रस वासित हो खास ॥१॥
फूलों से कोमल अधिक, वज्र कठोर विशेष ।
अद्भुत जीवन फूल से, पूजो प्रभु हमेश ॥२॥

(तर्ज—धन धन ऋषभदेव भगवान युगला धर्म निवारण वाले)

फूल से कोमल हैं भगवान्, हृदय करूणा रस भरने वाले। फूल से पूजो श्री भगवान, सुवासित चित को करनेवाले ॥ टेर ॥ प्रभु की पूजा लाभ अनन्त, लाभ अन्तराय का होता अन्त। अचिन्तन लाभ विषय भगवन्त, पूजो लाभ को लेनेवाले ॥ फू० ॥ १ ॥ नफा नित दीखे अपरंपार, टोटा लगता वारंवार। लाभ में अन्तराय अधिकार, समझो लाभ को लेनेवाले ॥ फू० ॥ २ ॥ दान से लाभ लाभ से दान, दोनों में है भाव प्रधान। विवेकी करलो अनुसन्धान, दान से लाभ को पानेवाले ॥ फू० ॥३॥ अगर हो लाभ विघन का जोर, मिलती कहीं न उसको ठोर। बनते साहुकार भी चोर, करम चक्कर में आनेवाले ॥ फू० ॥ ४ ॥ जल थल नभ में काम अनेक, करलो होवे लाभ न नेक। सोचो कारण कौन विवेक, लाभ में लिप्सा रखनेवाले ॥ फू० ॥ ५ ॥ देकर अन्तराय आनन्द, मानो तभी लाभ में फंद। होते होता है आक्रन्द, करम निश्चित फल देने वाले ॥ फू० ॥ ६ ॥ पाओ प्रभु पूजा का लाभ, जगती ज्योति है अमिताभ। कहीं भी होता नहीं अलाभ, पुण्य फल हैं सुख देनेवाले ॥ फू० ॥ ७ ॥ पुद्गल लाभे

रहो उदास, आतम लाभे हो सुखराश। हरि कवीन्द्र पद अविनाश, सहज सुखसिद्धि पानेवाले ॥ फू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ चञ्चत्सुपञ्चवर वर्ण विराजिभिर्वै० ।

मंत्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने...अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय पुष्पं यजामहे स्वाहा ।

॥ चतुर्थ धूप पूजा ॥

॥ दोहा ॥

उडे धुआं ज्यों धूप से, करम धुआं उडजाय।
भोग किटाणु रूप में, रोग किटाणु नशाय ॥१॥
वायु मण्डल शुद्ध हो, मन पावन हो जाय।
प्रभु की पूजा धूप से, करो सदा सुखदाय ॥२॥

(तर्ज—लक्ष्मी लीला पावे रे सुन्दर०)

भोग रोग का मूल, भविक जन भोग रोग का मूल। यही अनादि भूल, भविक जन भोग रोग का मूल ॥ टेर ॥ प्रभु पूजा में भोग त्याग कर, योगी जन बन जावे। त्रिभुवन प्रभुता पूरण भावे, अध्यातम लय लावे ॥ भविक० ॥ १ ॥ एक बार उपयोग में आवे, सोही भोग कहावे। बार बार उपयोग में आवे, वह उपभोग

लखावे ॥ भ० ॥ २ ॥ वर्ण गन्ध रस स्पर्श सभी ये, हैं पुद्गल गुण खासा। जब तक है संसारी जीवन, तब तक भोग की आशा ॥ भ० ॥ ३ ॥ खान पान रस भोग विघन से, अन्तराय बंध जाता। अन्तराय उदये मन वांछित, वस्तु जन नहीं पाता ॥ भ० ॥ ४ ॥ भोग के साधन सन्मुख होते, चाह हृदय में रहते। काम न होता होती अरुचि, परवशता दुख सहते ॥ भ० ॥ ५ ॥ प्रभु पूजा अन्तराय निवारे, सुर नर सुख विस्तारे। सद्गुरु संग रंग अविनाशी, आत्म रमणता धारे ॥ भ० ॥ ६ ॥ भोग विघन प्रकृति कट जाती, योग निवृत्ति होते। आतम गुण रमणी गति उत्तम, मोती में मोती पोते ॥ भ० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र करो प्रभु पूजा, भोग विघन मिट जावे। आतम भोगी योगी जगमें, यश कीरति रति पावे ॥ भ० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ स्फूर्जत्सुगन्ध विधिनोर्ध्वगति प्रयाणे० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने……अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय धूपं यजामहे स्वाहा ।

॥ पंचम दीपक पूजा ॥

॥ दोहा ॥

दीपक भावे दीपता, पूजो श्री जिनराज।
आतम गुण आस्वाद कर, पाओ सुखद स्वराज ॥१॥
रहन सहन उपभोग को, करदो प्रभु पद भेट।
देता है पाता वही, यही नियम है जेट ॥२॥

(तर्ज—जाओ जाओ हे मेरे साधु रहो गुरु के संग)

कर दो कर दो प्रभु के चरणों मे उपभोगों का त्याग। भर दो भर दो अपने जीवन में परमातम अनुराग ॥ टेर ॥ जो देता है सो पाता है, हो जाता जग जेठ। बादल देखो ऊपर रहते, सागर देखो हेठ ॥ क० ॥ १ ॥ उपभोक्ता उपभोग करें क्या ?, साधन सीमित देख। इसीलिये झगड़े रगडे हैं, अन्तराय की रेख ॥ क० ॥ २ ॥ सतोषी सुखिये रहते हैं, धरो हृदय सन्तोष। प्रभुपद पूजा में प्रकटेगा, वही भाव निर्दोष ॥ क० ॥ ३ ॥ उपभोगों मे फँसे देवता, दुख पाते भरपूर। अन्त समय छह महीने पहिले, मिट जाता है नूर ॥ क० ॥ ४ ॥ पुद्गल साधन उपभोगी की, सदा दुर्दशा जान। यहां वहां चारों गतियों मे, होता दुःख महान ॥ क० ॥ ५ ॥ आतम गुण उप-

भोगी निश्चय, हो जाता भगवान। प्रभु पूजा में पुद्गल त्यागो, पाओ आतम ज्ञान ॥ क० ॥ ६ ॥ भोग और उपभोगों से जो, रहते सदा उदास। जनम मरण कल्याण उन्हीं का, जगदीपक प्रकाश ॥ क० ॥ ७ ॥ जग दीपक जिनदेव चरण में, दीपक पूजा एह। हरि कवीन्द्र परमातम ज्योति, दीपित होवे देह ॥ क० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ सम्पूर्ण सिद्धि शिव मार्ग सुदर्शनाय०।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने……अन्तराय कर्म समूलोच्छदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय दीपकं यजामहे स्वाहा।

॥ षष्ठम अक्षत पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अक्षत स्वस्तिक साधना, चार गति दे चूर।
रत्न त्रय विस्तार से, हो शिव सुख भरपूर ॥१॥
अक्षत पद प्रभु पूजते, वीर्य विघन हो दूर।
सरल समुज्जवल भावसे, चमके आतम नूर ॥२॥

(तर्ज—सुणो चन्दाजी सीमन्धर परमातम पासे जावजो)

हो आतमजी परमातम पूजा नित कीजे भाव से ॥ टेर ॥ जो हैं अक्षत पद अविनाशी, शाश्वत सुख शिवपुर

के वासी। हो कर अक्षतपद अभिलाषी ॥ हो आतमजी० ॥ १ ॥ कर पूज्यों की पूजा भक्ति, विकसित होती आतम शक्ति। फिर दूर नहीं रहती मुक्ति ॥ हो आतमजी० ॥२॥ शक्तित गुण अपना है जानो, अन्तराय लगा उस पर मानो। भंडारी जैसा पहिचानो ॥ हो आतमजी० ॥ ३ ॥ प्रभु भक्ति शक्ति आचरना, क्षायिक भावे क्रम अनुसरना। शक्ति अनन्त अपनी वरना ॥ हो आतमजी० ॥ ४ ॥ विषयों में शक्ति श्रोत बहा, जड में जड सा हो जीव रहा। इससे दुख पाया अरे महा ॥ हो आतमजी० ॥ ५ ॥ परमातम भक्ति शक्ति लगे, कर्मों की सेना दूर भगे। अक्षत गुण परिणति सहज जगे ॥ हो आतमजी० ॥ ६ ॥ हो सरल समुज्ज्वल भाव भरे, अक्षत गुण आतम में उभरे। आतम परमातम हो विचरे ॥ हो आतमजी० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र पुरुषारथ योगी, वीर्यान्तराय क्षय अनुयोगी। आतम होता आतम भोगी ॥ हो आतमजी० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ कृत्वाऽक्षतैः सुपरिणाम गुणैः प्रशस्तं० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने…अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय अक्षतं यजामहे स्वाहा।

॥ सप्तम नैवेद्य पूजा ॥

॥ दोहा ॥

अमृत गुण नैवेद्य से, पूजो परम दयाल।
आतम अमृत रस मिले, मिटे भूख जंजाल ॥१॥
भूखा सब संसार है, भूख भरा है दुःख।
भूख मिटे भगवान से, भजो मिटे भव भूख ॥२॥

(तर्ज—अपनी करणी के फल सब पाया०)

मिट जाय भरम, कट जाय करम अन्तराया। पूजो नैवेद्य से जिनराया। मिट जाय० ॥ टेर ॥ दान लाभ भोग उपभोगी, वीर्य लब्धि पंच उपयोगी। जीव गुण हैं ये खास, घाती कर्मों के पास दुखपाया ॥ पूजो० ॥ १ ॥ जीव गुण ये जड़गत होते, अतएव जीव खाता गोते। भटका चौरासी लाख, रही नहीं कोई साख भरमाया ॥ पू० ॥ २ ॥ ध्रुव बन्धी ध्रुवोदयी जानो, ध्रुवसत्ता को पहिचानो। देशघाती ये पंच, इनका भारी प्रपंच समझाया ॥ पू० ॥ ३ ॥ पांचों अन्तराय ये हैं पाप, अपरावर्तमान की छाप। जीव में हो विपाक, जैसे आमोंमें आक उपजाया ॥ पू० ॥ ४ ॥ प्रकृति स्थिति रस औ प्रदेशे, बन्ध चउविध बहुविध वेशे। सोचो कर्म विपाक, तोड़ो

ताक ताक कर उपाया ॥ पू० ॥५॥ सागर कोडा कोडी तीस, बन्ध उत्कृष्ट कहे जगदीश । गुरुगम आगम सार, कर विवेक विचार हो अमाया ॥ पू० ॥६॥ दश गुणठाणा तक बन्धे, सत्तोदय बारह सन्धे । अन्त क्षायिक भाव, पुरुषार्थ प्रभाव जो जमाया ॥ पू० ॥ ७ ॥ हरि कवीन्द्र अन्तराय तोडो, आतम से आतम जोडो । लब्धि पच प्रयोग, भव भाव वियोग सुख पाया ॥ पू० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ प्राज्याज्य निर्मित सुधा मधुर प्रचारै० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्री अर्हं परमात्मने अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्री वीर जिनेन्द्राय नैवेद्यं यजामहे स्वाहा ।

॥ अष्टम फल पूजा ॥

॥ दोहा ॥

निज पूरन कृत करम फल, दुख भी हो सुख रूप ।
फल पूजा प्रभु की करो, फल मत चाहो चूप ॥१॥
प्रभु पूजा फल की कथा, कौन कहे विचार ।
यहां वहां चारों तरफ, हो सुख अपरंपार ॥ २॥

(तर्ज—मत मान करो अपमान करो जीवन जल बह जायगा)

प्रभु पूजा करो, प्रभु पूजा करो, आया विघन मिट

जायगा ॥ टेर ॥ साधु सताये जीव दुखाये, दुनिया में झूठे जाल रचाये। घोर विघन बन जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ १ ॥ हँस हँस के बांधेकरमों की बाधा। होगी उदय जब काल अबाधा। रोने से छूट नहीं जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ २ ॥ हिंसा तजो तजो झूठ औ चोरी, विषय तजो तजो ममता की मोरी। जीवन सफल हो जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ३ ॥ कुमति कुटिल कुसंग न करना, ज्ञानी गुरु सुतसंग विचरना। जीवन जंग जीत जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ४ ॥ अन्तराय यह कर्म अनादि, परंपरा हरे आतम आजादी। दर्शन करो हट जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ५ ॥ प्रभु दर्शन दूर आप भगाता, प्रभु वन्दन वर वांछित विधाता। पूजन शिवफल पायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ६ ॥ सुखों के सागर भगवान स्वामी, हरि पूज्य प्रभु अन्तरयामी। कर पूजा तुं पूज्य बन जायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ७ ॥ दिव्य कवीन्द्र प्रभु चरण शरण से, मुक्ति मिलेगी जन्म मरण से। परमात्म पद प्रकटायगा ॥ हां प्रभु० ॥ ८ ॥

॥ काव्यम् ॥ पीयूष पेशल रसोत्तम भावपूर्णैः० ।

मन्त्र—ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं परमात्मने···अन्तराय कर्म समूलोच्छेदाय श्रीवीर जिनेन्द्राय फलं यजामहे स्वाहा ।

॥ कलश ॥

॥ दोहा ॥

समय समय में होत है, सात करम का बन्ध ।
आयु सहित हो आठ का, बन्ध दुःख अनुबन्ध ॥१॥
आठ करम कटते प्रकट, आतम गुण हो आठ ।
कर्म चूर तप कर वरो, आठ सिद्धि के ठाठ ॥२॥

(तर्ज—गायो गायो रे, महावीर जिनेश्वर गायो)

पायो पायो रे, घन शाशन जैन सवायो ॥ टेर ॥
शासनपति श्रीवीर जिनेश्वर, श्रीमुख से फरमायो । कर्म निवारण आत्म आठ गुण, यथाशक्ति तप ठायो रे ॥ घन० ॥ १ ॥ प्रवचन सारोद्धार आचारे, सुविहित विधि समझायो । तप उद्यापन उत्सव पूजा, प्रभावना मन लायो रे ॥ घन० ॥ २ ॥ खरतर गण नायक सुख सागर, श्रीभगवान सुहायो । जिनहरिसागर सद्गुरु शरणे, गुरुगम बोध बढायो रे ॥ घन० ॥ ३ ॥ वर्तमान जिनआनन्दसागर, सूरीश्वर सुखदायो । आज्ञा रंगे भाव उमगे, परमातम गुण गायो रे ॥ घन० । ४ ॥ पास फलोदी गुरु तीरथ में चौमासो थिर ठायो । दो हजार

तेरह संवत में, काती पुनम लय लायो रे ॥ धन० ॥ ५ ॥ सद्गुरु प्रस्थापित विद्यालय, विद्यारथि समुदायो । कर्म निवारक प्रभु गुण पूजा, पारस रस वरसायो रे ॥ धन० ॥ ६ ॥ आतम भाव प्रधान निरूपण, सहज समाधि उपायो । कर्म आठ घन काठ जला कर, आठ परम गुण पायोरे ॥ धन० ॥ ७ ॥ पाठक दिव्य कवीन्द्र निजातम, बोध बुद्धि हित गायो । परमातम पद पूजा गाते, अजर अमर पद पायो रे ॥ धन० ॥ ८ ॥

—०—